ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार

एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म

१४ सितम्बर सन् १९४२, में उत्तर-प्रदेश के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर-सलेमाबाद में एक विशेष बालक का जन्म हुआ। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था। और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, श्वासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो उसकी गर्दन दायें-बायें हिलने लगती, कुछ मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त विभिन्न ऋषि-मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित ४५ मिनट तक, एक दिव्य प्रवचन का प्रसारण होता। पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन-मानस आश्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नहीं था। इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में, शृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का कारण बनी। इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में आता तो कुछ अन्तराल बाद इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीरधारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृश्य स्थिति बन जाती जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के शिष्य महर्षि लोमश मुनि पूज्य महानन्द के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण वहां सत्संग में दिये जाने वाला दिव्य प्रवचन इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन-मानस को भी सुनाई देते हैं। इन प्रवचनों में ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, जो किसी भी मनुष्य को, समाज और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते हैं। -शृङ्गी ऋषि वेद विज्ञान प्रतिष्ठान

१ ब्रह्म याग ०१ ०८ १९८५

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, ये जो पठन पाठन की जो प्रतिक्रियाएं होती रहती हैं ये परम्परागतों से ही, महान और पवित्रता में सदैव रत्त रही है, प्रत्येक मानव, इस प्रातः काल की पवित्र बेला में, मानो वेदों का उदगान प्रत्येक प्राणी गाता रहता हैं वह किसी भी रूप में गान गाता रहे, परन्तु वेदों की प्रतिभा का वर्णन, प्रायः उसके मस्तिष्कों में रहता है, जहाँ हम यह विचारते हैं कि हमारा जो नित्य प्रति जो क्रियाकलाप होता रहता है, मानो वह इतना विशुद्ध और महानता से गुथा हुआ हैं, हमारे यहाँ, जब वैदिक आचार्यों ने एक क्रियाकलाप बनाया, कि मानव जब इस संसार में आया है, तो ये कर्मबद्ध हो करके आया है इसके जो कर्मों की प्रतिभा है वह बड़ी विचित्रतम मानी गई है, तो इसका कोई न कोई, इसका कर्मबद्ध, मानो क्रियाकलाप में, होना चाहिए हमारे यहाँ नाना ऋषि-मुनियों की विचारधाराएं मानो वह तपो में रही हैं।

कर्म से मानव का आगमन

ऐसा मुझे स्मरण है, ऐसा मानो साहित्य से प्राप्त हुआ हैं, सृष्टि के प्रारम्भ में क्योंकि मानव जब कर्मबद्ध हो करके इस संसार में उसका आगमन हुआ तो आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता थे, उन आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ताओं ने एक जीवन की रूप रेखा का निर्माण किया। परन्तु वह निर्माण तपस्वियों के द्वारा होता है क्योंकि तपस्वी जन इस वाक् को जानते हैं, कि ऐसी मानव की भूमिका होनी चाहिए, उसके क्रियाकलापों की, जिससे वह रूढ़ि न बन पाए। क्योंकि अज्ञान होगा तो रूढ़ि अवश्य होगी, क्योंकि हमारे यहाँ दो प्रकार की रूढ़ियों का वर्णन प्रायः वैदिक साहित्य में भी आता रहा है। एक रूढ़ि वह कहलाती है जिससे माता प्रीति में रत्त हो करके पुत्र का पालन करती हैं, एक रूढ़ि वह होती है, वह आचार्य कुल में ब्रह्मचारी जब प्रवेश करता है तो मानो वह उसको एक क्रियाकलाप बनाता है, और उसको सीमाबद्ध कर देता हैं। मानो वह रूढ़ि ब्रह्मचारी के विचारों में रूढ़ि बन सकती हैं। परन्तु जो वैदिक साहित्यों का जो क्रियाकलाप है उनमें रूढ़ि नही बन पाती, तो इनको किसी रूप में रूढ़ि नही उच्चारण कर सकते, क्योंकि यह तो सीमा में हैं, रूढ़ि उसे कहते हैं जो सीमा से पृथक हो जाती हैं। जिसमें अति हो जाती है, और अति के आ जाने से मानो देखो, उसमें अज्ञानता भासने लगती हैं, और वह जब अज्ञानता आ जाती है, तो वही मानव का मानव पिपासी बन जाता हैं। तो परिणाम यह मैं उच्चारण कर रहा था पुत्रों! मानो सृष्टि के प्रारम्भ में भी इस मानव के क्रियाकलाप की एक, धारा का निर्माण किया, और निर्माणवेत्ताओं में ऋषि-मुनियों ने जो तपस्वर और ब्रह्मचारी थे, ब्रह्मवर्चोसि थे, उन्होंने विशाल तप किया और तप करने के पश्चात, उन्होंने इस मानवतव को बाह्य और आन्तरिकता में दोनों में दृष्टिपात किया। यह बाह्य क्या है? और आन्तरिक क्या है? परन्तु जो आन्तरिकता उसको बाह्य रूपों में धारणामि ब्रह्मे वाचाः उसको बाह्य जगत में लाने का प्रयास किया, और वह लाया गया। परन्तु उसका परिणाम यह हुआ, कि उन्होंने, मानव की एक भूमिका बनाई, और विद्वता और वेद की प्रतिभा के रूप में निहित रहे। ऋषि-मुनियों ने यह विचारा, तपस्या के द्वारा कि उन्होंने बेटा! कहीं प्राण और अपान को दोनों को याग में लाने का प्रयास किया। दोनों को यागमयी में, मानो स्वीकार करके, उन दोनों का समन्वय किया। जब समन्वय प्राण अपान का किया, तो उसमें व्यान और समान का भी समन्वय किया, जब मानो इनका समन्वय हुआ, तो उदान का चित्त के मण्डल से उसका समन्वय हो गया।

जब इस समन्वय की चर्चा आई, जब समन्वय में ऋषि-मुनियों ने समाधिष्ट हो करके, एक-एक मानो आभा

को एक दूसरें में पिरोएं हुए उन्होंने दृष्टिपात किया। जब एक दूसरें मैं पिरोने की विवेचना हुई, तो मानो देखो, वेदमन्त्रों में ऐसे शब्द की मानो उनके समीप एक ऐसे शब्द की रचना, उनके समीप आने लगी, जो मानो देखो, एक ध्वनि के रूप में परिणत हुआ, और वह ध्वनित होता हुआ, मानो देखो, उसको ओ३म् रूपी सूत्र भवा सम्भवा वह ध्वनित होने लगा। क्योंकि बाल्य का जब जन्म होता हैं, तो ऋषि-मुनियों ने सोचा कि वह तो एक अहंकार है, मानो अहंकार कहलाता हैं। उस अहंकार को, उन्होंने ओ३म् रूपी सूत्र से, उसका समन्वय कर दिया जब मानव देखो, समाधिष्ट प्राणी हुआ, उन्होंने प्राण और अपान को दोनों का समन्वय करने का प्रयास किया, तो दोनों के मिलान होते ही, ध्वनि का जन्म हुआ, और वह ध्वनि को मानो, वह जब ध्वनि ध्वनित होने लगी, तो उस ध्वनि को ही मेरे पुत्रों! उन्होंने मानो उनके लिए हम उसको भी अंग कृतियों में रत्त करने लगे, उसको अहंकार के रूप में, मानो जब उसके ऊपर मन्थन किया गया, तो वह भी एक ओ३म् की ध्वनि बन गई। परन्तु जब ध्वनि बन गई, तो विचारा गया क्या यह जो जितना भी संसार का साहित्य है, अथवा वैदिक स्रोत है, उसको इसके प्रारम्भ के गर्भ में, प्रारम्भ के ही रूपों में मानो देखो, ओ३म् ध्वनि का प्रतिपादन होता, और ओ३म् जो ध्वनि है वही अहंकार कहा जाता है। वही बाल्य के जन्म होते ही मानो देखो, उसकी स्मरण शक्ति उसके हृदयों में मानो रूग्णस्या में मानो निहित रहती है।

साथ प्रकार की धाराएं

तो विचार-विनिमय क्या है पुत्रों! तो मानो यह मानव की भूमिका बन गई, क्रियाकलाप की भूमिका बनी, तो मानो देखो, यह विचारा गया, कि यह जो प्रकृति हैं, हमारा जो मानो प्रत्येक जो द्वार है, उस द्वार का समन्वय मानो प्रकृति से रहता है, और प्रकृति में ही सात प्रकार की धारा कहलाती है। वह सात प्रकार की धारा जिसमें मानो एक धारा का नाम जमदग्नि कहा गया है, द्वितीय धारा का नाम विश्वामित्र कहा गया, और तृतीय धारा का नाम वशिष्ठ कहा गया, और चतुष का नाम कश्यप् कहा गया, और पंचम धारा का नाम मानो गौतम, के रूप में परिणत हुआ, और देखो, वह जो सातवी जो धारा हैं उसका नाम अत्रि कहलाया। तो यह मानो देखो, सात प्रकार की धाराओं का जन्म हुआ, वह सात प्रकार की धाराओं के रूप में मानो उनको सबको ऋषि कहने लगे, उन्हीं को सप्त होता कहने लगे, मेरे प्यारे! देखो, यह वेद के मन्त्रों के भी ऋषि-मुनियों ने मानो समाधिष्ट हो करके इन शब्दों की उनकी रूप रेखा बनाने के वह तत्पर हुए, क्या यही वास्तव में हमारा जीवन है, हम जब इस प्रकार की धाराओं को लाने का प्रयास करेंगें। तो हमारे मानवीय जीवन की धारा विचित्र बन जाएगी, तो मानो देखो, आगे जब उन्होंने और गम्भीरता से अध्ययन किया, अध्ययन करने के पश्चात मानो देखो, सम्ब्रह्मे वाचत्येकी की सम्भवा वेद की इस आख्यिका को ले करके बेटा! उसको अन्तर ध्वनि में ले गएं। अन्तर ध्वनि जो मानो मस्तिष्क के अग्र भाग में जिसे त्रिवेणी कहते हैं, जहाँ ईंगला और पिंगला दोनों का समन्वय होता है। तो वहाँ एक ध्वनि का जन्म हुआ, और वह जो ध्वनि है वह ध्वनित हो करके मानो देखो, वह बाह्य जगत मे ध्वनित हो करके मानव के समीप आई, तो मानव देखो, ऋषि-मुनियों ने बेटा! देखो, प्रारम्भ में ही सृष्टि के प्रारम्भ में ऋषि-मुनियों ने विद्यमान हो करके बेटा! यह विचारा कि मानव का एक क्रियाकलाप होना चाहिए। क्योंकि मानव की यह जीवन यह सुगन्धि ही चाहता है, यह मानो दुर्गन्ध नही चाहता, दुर्गन्ध चाहता है, यह ऊर्ध्वा में जाना चाहता हैं। क्योंकि ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ने वाला परमाणु हैं, वह ऊर्ध्वा में भी जाना चाहता है। वह ध्रुवा में भी गति करना चाहता हैं, मानो देखो, यह मध्य में भू में भी यह गति करन चाहता है जब इस प्रकार मेरे प्यारे! देखो, ऋषि-मुनियों ने अपना समाधिष्ट हो करके ये सब उनके समीप आ गया तो मानव उनके प्रातःकाल से ले करके सांयकाल तब के लिए बेटा! उन्होंने इसकी एक भूमिका बनाई और इसके मानो देखो, भूमिका बना करके, कहा हे मानव! तू प्रातःकाल की पवित्र बेला

में, अपने आसन को त्याग, मानो देखो, प्रातःकाल की पवित्र बेला में, आसन को मानव ने त्यागा, त्यागने के पश्चात अपनी भूमिका बनाता हैं, अपनी शारीरिक क्रियाओं से निवृत्त होता है, निवृत्त हो करके मानो देखो, वैदिक आचार्यों ने, बेटा! पांच प्रकार के यागों का चयन किया। उसने यह पांच प्रकार के यागों की जो उपलब्धि है, ये सृष्टि के प्रारम्भ से हुई, ये पांच प्रकार के यागों की उपलब्धि हुई और पांचो प्रकार का याग क्या है हे मानव! तू प्रातःकालीन अपनी शारीरिक क्रियाओं से निवृत्त हो करके, और तू प्रभु के समीप जाने का प्रयास कर। मानो तू ब्रह्मयाग कर, बेटा! गृह में, गृह आश्रम में पति पत्नी हैं, तो उसमें ब्रह्मयाग में रत्त हो जाना चाहिए। प्रातःकाल में ब्रह्मचारी, आचार्य दोनों ने ब्रह्मयाग करना चाहिए, वह ब्रह्मयागी बन जाएं, देखो, जब ब्रहे मुनिवरों! देखो, कहीं भी, किसी भी स्थली पर कोई मानव विद्यमान है, वह ब्रह्मयागी बन जाएं, क्योंकि प्रातःकाल में ये जो जितना प्राणी मात्र है, मानो आत्मवत है, यह सर्वत्रता से प्रातःकालीन अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके, गान गाता है, यह ध्वनित हो रहा है, मानो देखो, प्राण, जो प्राणी हैं प्राणों से ध्वनित हो रहा हैं जो जीवात्मा प्राणों को समूह ले करके रत्त रहता है, वह गान गा रहा हैं तो प्रातःकालीन क्या जो मानो जितने भी परमात्मा के राष्ट्र में, प्रभु के राष्ट्र में, जितना भी प्राणी मात्र हैं, वह सब एक गान गा रहा है, और वह गान गाता हुआ अपने में प्रसन्न हो रहा है, इसी प्रकार प्रातःकालीन मानो देखो, तुम ब्रह्मयागी बनो और तू नाना प्रकार के अज्ञान में प्रवेश न करते हुए, जो मानो देखो, तुम्हारे मस्तिष्क में एक ध्वनि हो रही हैं और वह मानो देखो, स्वरों का ज्ञान हो रहा हैं, प्रत्येक वेदमन्त्रों में मानो देखो, ध्वनि होती हुई प्रतीत होती हैं वह ध्वनित होता हुआ दृष्टिपात आता है, जब वेद का याचक, वेद के गर्भ में, वेद की देखो, वह भूमिका बनाने लगता है, जब उसका गान गाता हैं, तो प्रत्येक वेदमन्त्र उसके समीप मानो देखो, एक ध्वनि बन करके रहता हैं। प्रत्येक वेदमन्त्र अपनी आभा में रत्त और विज्ञान की धाराओं की उपलब्धि करने वाला है, ब्रह्मयाग की उपलब्धि करने वाला है, क्योंकि जैसे एक वेदमन्त्र हैं, परमात्मा का रचाया हुआ ज्ञान और विज्ञान उसमें निहित रहता है, परन्तु परमात्मा का जो विशाल विज्ञान है, अथवा ज्ञान है, उसकी रचना का स्वयं नृत है उसके लिए मुनिवरों! देखो, मानव सदैव विचारता है। प्रातःकालीन मानो देखो, ब्रह्मयाग का अभिप्रायः क्या है? क्या हम परमपिता परमात्मा के विचारों को देखो, उसके उपासना के रूप में, उसमें हम रत्त हो जाएं, और उपासना करते रहे हैं, हे देव! तू महान और विचित्र बन करके, तू हमारे अंग संग रहने वाला है, तू अन्तरात्मा में विद्यमान हैं मानो देखो, अन्तरात्मा हमारी हृदय रूपी गुफा में विद्यमान है और हृदय, आत्मा रूपी गुफा में मानो देखो, उसे ब्रह्म याग कहते हैं वह चैतन्य देव है मानो देखो, प्रतिभा रूप में रत्त रहने वाला हैं, तो वह जब रहता है तो वह मानो देखो, जो ब्रह्मयाग की चर्चाएं मुनिवरों! हम मानो इससे पूर्व काल से भी कर रहे थे, आज भी मुझे स्मरण आ रहा है, क्या हमें ब्रह्मयाग करना चाहिए। ब्रह्मयाग का अभिप्रायः यह है कि ब्रह्म के समीप जाने का हमें प्रयास करना चाहिए, मानो देखो, कैसे जाता है प्राणी प्रातःकाल की पवित्र बेला में, मानवीय जीवन को, वह व्यष्टि से समष्टि में प्रवेश करता है, वह समष्टि में ले जाता है, देखो, यह संसार का जितना भी वैभव है, संसार की जितनी भी वृत्तियाँ हैं, ये सब मानो देखो, व्यष्टि में ले जाने वाली हैं और जब मानव इनसे उपराम होता है क्या इनके मूल में क्या है प्रत्येक वस्तु के मूल में कोई न कोई वस्तु तुम्हें दृष्टिपात आयेगी। मानो देखो, जब तुम मन्थन करते-करते, किसी वस्तु का मानो जब उसके अन्तिम चरण में पंहुचोगे, अन्तिम रूप में प्रवेश हो जाओगे वहाँ स्थिर रहने का नाम ही मेरे पुत्रों! देखो, प्रभु की पगडण्डी को ग्रहण करना है। जैसे एक मानव किसी के मूल में जाना चाहता है, विचारता है क्या यह सतोगुण क्या है? विचारने लगता है, कि मुझे सत्य उच्चारण करना है विचारता है सत्य क्यों उच्चारण करना है? मानो सत्य के गर्भ में वह इस वाक्यों को विचार करके मानो उसके गर्भ में प्रवेश कर जाता हैं। और वह विचारता है कि सत्य ही है संसार में प्रत्येक अंग और धाराएं मानो

सत्यता के गर्भ में निहित हो रही हैं। मानो सत्य ही सत्य है जगत में, देखो, पालन करना भी सत्य है देखो, मानव से प्रीति करना भी सत्य है, जब सत्य के गर्भ में प्रवेश जाओगे सब मानो सत्य ही सत्य मानो देखो, वह तुम्हें दृष्टिपात आने लगेगा तो वह व्यष्टि से तुम्हें समष्टि में प्रवेश होना है विचार यही है कि व्यष्टि और समष्टि दोनो के रूप में ही तुम्हें रत्त हो जाना हैं।

विचार-विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, उसके मूल में, जब विचारोगे तो सत्य के मूल में विचारते-विचारते अन्त में, मानो प्रभु तुम्हें दृष्टिपात आने लगेगा। जब तुम मानो देखो, रजोगुण में शासनकर्त्ता के गर्भ में पंहोचेगो कि यह रजोगुण तो है परन्तु इसके गर्भ में शासनकर्त्ता है। मानो देखो, माता, पुत्र पर शासन कर रही है और शासन किस लिए कर रही है? माता यह चाहती है कि मेरा शासन बाल्य पर इतना होना चाहिए, जिससे मैं मानो देखो, अपने पुत्र को महान बना दूं, जैसा मैंने पुरातन काल में निर्णय देते हुए कहा था, कि अपने ब्रह्मचारी को अनुशासन में लाना चाहता है, परन्तु वह रजोगुण है रजोगुण के गर्भ में सत्य की प्रतिभा है, और वह मानो देखो, रजोगुण में अपने ब्रह्मचारी को महान, पवित्र बनाना चाहता है, सुचरित्र हो, सुविचारक हो, सु गार्हपथ्य हो, सु अग्निवेत्ता हो मानो देखो, इस प्रकार की भावना उसके गर्भ में रहती है। विचारता विचारता मानव यह अनुशासन को विचारते रहो, वह विद्या की प्रतिनिधि क्रिया बन जाती हैं, वह एक क्रिया बन करके अन्त में देखो, उस अनुसन्धान मानो देखो, उस अनुशासन में वह प्रभु की कृति दृष्टिपात आती हैं क्योंकि यह जो जितना जगत है, यह सब अनुशासन में हैं, यह जितना भी जगत है, यह सब अनुशासन में हैं, सूर्य प्रातःकालीन उदय होता हैं, उदय हो करके शनै-शनै किरणों को लाता हैं, पृथ्वी पर आच्छादित हो जाता है, परन्तु वह सूर्य केवल एक अनुशासन में ही दृष्टिपात आने लगता है, प्रातःकाल में, मानो देखो, वह धीमा-धीमा प्रकाश होता है, शीतल होता है, रात्रि के परमाणुओं को मानो देखो, वह उसको उष्ण बनाने लगता हैं। और जब मध्य में देखो, सूर्य आता हैं, तो उसका जीवन तेजोमयी बन जाता है, जब तेजोमयी बन करके, प्रकाश भी देता हैं, उष्ण भी बनाता है, तेजस्वी बना हुआ है, परन्तु देखो, वही धीमा ब्रहे वाचक बन करके ही मेरे प्यारे! देखो, सायंकाल को पुनः धीमा बन करके, रात्रि के परमाणु जागरूक हो जाते हैं, और उस तेजोमयी परमाणुओं में रत्त हो जाते हैं, परिणाम यह कि सांयकाल को वह सान्त्वना में प्रवेश हो जाता है। तो विचारता है याचक, विचारता है देखो, अनुशासनवेत्ता हो देखो, यह जो प्रभु का कैसा प्रिय अनुशासन है। मानो देखो, सूर्य अनुशासन में हैं, पृथ्वी अपने मध्य में मानो देखो, भू मध्य में प्रतिक्रियाओं में रत्त हो रही है, नाना प्रकार के परमाणुओं को ले रही है, जिन्हें कहाँ-कहाँ से परमाणु ले करके, कहीं अग्नि से लेती हैं, तो कहीं चन्द्रमा से लेती है, तो कहीं सूर्य से लेती हैं, मानो देखो, प्राण वायु से ले लेती हैं, और अवकाश अन्तरिक्ष से ले करके मानो देखो, पृथ्वी अनुशासनमयी कहलाती हैं। तो विचारता हुआ मुनिवरों! देखो, अनुशासनवेत्ता यह विचारता है कि अरे, यह तो सर्वत्र जगत ही अनुशासन में हैं, मानो देखो, माता अपने पति के समीप मानो देखो, जब गृह स्वामिनी बन करके, अपनी वार्त्ता प्रगट करती है, तो उसके अनुशासन में मानो एक विचित्रता आ जाती है, पुत्र के समीप जब अनुशासन में प्रवेश होती है, तो वहाँ एक विचित्रता आ जाती है मानो देखो, पिता के समीप जाती है, तो वहाँ अनुशासन एक भिन्न बन जाता हैं। परन्तु भिन्न बन जाने से अन्त में देखो, वह अनुशासन की जब प्रतिक्रियाओं में जब अन्तिम छोर पर पंहुचोगे, तो बेटा! प्रभु ही दृष्टिपात आने लगेगा। तो मेरे प्यारे! देखो, जब इस प्रकार का जो यह ब्रह्मयाग है, यही तो मानो देखो, व्यष्टि से मानव को समष्टि में ले जाता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, नेत्रों की ज्योति हैं, वह ज्योतिवान बन करके, मुनिवरों! देखो, वह ज्योति के समन्वय को विचारने लगता हैं विचारता हुआ नाना देवताओं के जड़ देवताओं के समीप चला जाता है, चैतन्य देवताओं के समीप चला जाता हैं, जाता-जाता बेटा! जब दूरी चला जाता है, तो अन्तिम छोर मुनिवरों! देखो, मौन हो जाता हैं।

तो विचार-विनिमय क्या मैं बेटा! आज तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ कि मानव को ब्रह्म याग करना चाहिए, जब यह ब्रह्मयागी बनेगा तो अज्ञान नही भासेगा अज्ञान उस काल में भासता है, जब यह प्रभु की सृष्टि को निहारता नही है जब यह प्रभु की महानता को अपने में धारण नही करता है, जब यह मानो देखो, उसके चिन्तन में, अपने को विशाल नही बनाता, तो यह नाना प्रकार का मानो देखो, तीक्ष्ण क्रियाकलाप करता हुआ, अपने मानव के जीवन को देखो, निकृष्टता में ले जाता हैं। तो विचार-विनिमय क्या, मैं आज पुत्रों! विशेष विवेचना नही, यह बेटा! देखो, जब मानो देखो, महाराजा अश्वपति के यहाँ, जब मानो देखो, जब हम अपने में मानो देखो, ब्रह्मचारियों के प्रातःकालीन शिक्षा देते, तो ब्रह्मचारी व्यष्टि और समष्टि की विवेचना, विद्यालय में ही प्राप्त कर लेता है क्योंकि विद्यालय में, आचार्य और ब्रह्मचारी दोनों को मानो देखो, याग करना चाहिए, जिसे ब्रह्मयाग कहते हैं। जैसे माता पुत्र को भी मानो बालिकाओं को भी देखो, वह अपने में ब्रह्मयाग कराए, जिससे अज्ञान न आए, क्योंकि अज्ञान का आ जाना ही रूढ़ि है अज्ञान का आ जाना ही मानव को मानव के भक्षण करने की प्रवृत्तियां आ जाती हैं।

तो परिणाम क्या है आज मैं तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ, क्या मानव को प्रातःकालीन, ब्रह्मयाग करते-करते मुनिवरों! देखो, मौन हो जाना चाहिए, और जब यह मौन हो जाता है, क्योंकि ब्रह्मयाग में परिणत होता हुआ, उसमें अंग संग में भूमिका बनाता हुआ, यह बेटा! देखो, इस मानव प्रकृति के क्षेत्र में ले जाता हैं, और प्रकृति के क्षेत्र को ले करके, यह ब्रह्म में प्रवेश करा देता है, ब्रह्म में इसकी समाहितता हो जाती है और जब यह समाहितता हो जाती है। तो यह ब्रह्मयाग कहलाता हैं। ब्रह्मयाग का अभिप्रायः तुमने जान लिया होगा, पुत्रों! कि हम ब्रह्मयाग किसे कहते हैं? प्रातःकालीन मानो देखो, विद्यमान हो करके, वह वेदों की ध्वनियों में ध्वनित हो रहा है वह गान गा रहा हैं जटा पाठ में गान गाता हुआ मानो देखो, अपने को माला पाठ में ले जाता हैं, माला पाठ में ले जा करके, वह मानो देखो, बाह्य जगत में जब ध्वनित हो करके ही मानो उन प्रवृत्तियों को, आन्तरिक जगत में ले जाता हैं, आन्तरिक जगत में बेटा! वह ध्वनियां होती हैं, वह नृत्त हो रहा है, मुनिवरों! देखो, जैसे सम्भवा लोकाम् यह प्रकृति अपने में नृत्त कर रही हैं, केवल मानो देखो, उस ब्रह्म के सन्निधान मात्र से ही इसका नृत्त प्रारम्भ हो जाता है, यह कैसा नृत्त है पुत्रों! मानो देखो, उस नृत्त के लिए आज मानव को यह विचारने लगे, कि यह विचार मंगलं ब्रह्मे वह कैसा नृत्त है, बेटा! वह सबके समीप हो रहा है तो मानो देखो, एक आभा में हो रहा हैं तो मुनिवरों! देखो, वह जो नृत्त हो रहा है, वही नृत्त, आन्तरिक जगत में जब योगेश्वर मानो देखो, जब साधक अपने में प्रवेश करके बेटा! देखो, आन्तरिक मस्तिष्क में ले जाता है, आन्तरिक ब्रह्मरन्ध्र में ले जाता है, तो बेटा! वहा पिपाद झरना झरता रहता है, अमृत की धाराओं का गमन हो रहा है। मेरे पुत्रों! देखो, वहाँ ब्रह्माण्ड की धाराओं का दिग्दर्शन किया जा रहा है, परन्तु ब्रह्म का चिन्तन किया जा रहा है, वह ब्रह्म में समाधिष्ट हो करके ही लघु मस्तिष्क में प्रवेश करके, बेटा! अपने को महान बनाता हुआ, वह प्रभु को ही अपने में दृष्टिपात करने लगता है।

तो मुझे पुत्रों! आज इस प्रभु के ब्रह्मयाग की चर्चा, तो करता ही रहूँगा यह तो बड़ा विचित्र मानो एक जगत हैं, एक वेद का मन्त्र है एक वेद की धारा हैं मानो देखो, उसी में से नाना प्रकार का यह जगत की प्रतिभा का जन्म होता हैं। तो मेरे प्यारे! वेद के मन्त्रों के द्वारा मुनिवरों! देखो, उपासना करता हुआ उपासक और ब्रह्मयाग में परिणत हो जाता हैं। एक वेदमन्त्र को लेता हैं, उसी वेदमन्त्र की विचित्र भूमिका बनाता हुआ, अन्त में बेटा! देखो, अन्तिम छोर से वह मौन हो जाता है। तो विचार-विनिमय क्या, मेरे प्यारे! देखो, सबसे प्रथम, शारीरिक क्रियाओं से निवृत्त हो करके, मानव को ब्रह्मयाग करना चाहिए, मानो देखो, प्रातःकाल की पवित्र बेला में ब्रह्मयाग होना चाहिए, जब पति पत्नी गृह में, ब्रह्मयाग को करते हैं, तो उनका गृह स्वर्ग और मानो देखो, एक महान और पवित्र बन जाता

है। जिनके विचार उनके ब्रह्म के गुथे हुए, विचार उस मानो देखो, उस वायुमण्डल में प्रवेश हो जाते हैं। बेटा! यह वाक् कहाँ से जन्म हुआ, इस वाक् का कोई जन्म है, इस वाक् ने कहीं जन्म लिया हैं। बेटा! यह कहाँ ले आया हूं?

आज मैं तुम्हें आओ, तुम्हें शोभनी ऋषि के द्वार पर ले जाना चाहता हूँ, शोभनी ऋषि महाराज एक वेदमन्त्र का अध्ययन कर रहे थे और वह अध्ययन करते-करते वेदमन्त्र यह मंगलं ब्रहे वेदमन्त्र का वाकां भविते ब्रह्मा वाचौ सम्भव लोकां व्याप्तानि पथनं ब्रह्मे व्याप्तानं ब्रहा हृदा जब उन्होंने यह वाक्, यह वेदमन्त्र का अध्ययन किया, तो शोभनी ऋषि ये विचारने लगा कि वेदमन्त्र ऐसा क्यों कहता है क्या यह जो शब्द है, पवित्रता के जो शब्द है यह हमारे गृहों में, हमारे आश्रमों में भ्रमण करते रहते हैं। मानो देखो, जब यह उन्होंने श्रवण किया, वेदमन्त्र में जब इसके ऊपर मन्थन करने लगे विचारते विचारते रहे तो मानो देखो, यह वाक् उनके आँगन में आ गया, तो उन्होने मानो देखो, प्रातःकालीन मानो देखो, वेदज्ञ ध्वनि को गाते रहते। तो गाते रहते तो बेटा! एक समय उनके यहाँ एक उदवान केतु मानो देखो, उनके समीप आ गएं उदवान केतु मानो देखो, वह उसकी प्रवृत्ति तामसिक प्रवृत्ति बन गई थी, परन्तु जब वह ऋषि के जहाँ उसको बारह वर्षों तक वेद का अध्ययन करते-करते मानो देखो, वह वेद जब उनके समीप आया, तो दैत्य के आने से उसकी प्रवृत्ति में अन्तर्द्वन्द्व बन गया। जब अन्तर्द्वन्द्व बन करके मानो देखो, अन्तर्प्रकाश में आ गया, जब अन्तर्प्रकाश में आ गया तो मानो देखो, वह ऋषि के चरणों की वन्दना करने लगा, तो शोभनी ऋषि बोले कि हे दैत्यराज! तुम चरणों की वन्दना क्यों कर रहे हो? तुम तो मानव को नष्ट करने वाले हो। उन्होंने कहा-प्रभु! मैं आज तुम्हारे इस आसन पर आया हूँ, इतनी दूरी के आसन पर, एक मैंने एक कवच को दृष्टिपात किया हैं, और जब मैं उस कवच के अन्तर्गत आ गया हूँ तो मेरे मनों की मेरे हृदय की प्रवृत्तियों में मानो देखो, अन्तर प्रकाश में मेरा अन्धकार प्रकाश में आ गया है, भगवन!, यह क्या कारण है? तो मानो देखो, जब शोभनी ऋषि के आँगन में यह वाक् आया अहो! इस वेदमन्त्र के जो उच्चारण करता है तो वाणी का समन्वय करके, मन और प्राण के सूत्र में ला करके तो मानो देखो, यह वही पवित्र धाराएं देखो, इस वायुमण्डल में छा गई हैं और इतनी दूरी पर जो प्राणी आ जाएगा वही पवित्र बन जाएगा मानो देखो, वह दैत्य पवित्र हो करके ही मानो देखो, वह तपस्वी बन गया। वह ऋषि के चरणों में विद्यमान हो गया, उन्होने बारह-बारह वर्ष के पुनः देखो, ऋषि ने अनुष्ठान किए उस दैत्य राज ने भी अनुष्ठान किए, अनुष्ठान करके मानो देखो, वह ऋषि बन गया। उसी ऋषि का नाम मुनिवरों! देखो, शाकल्य मुनि बन गया। वह दैत्य न रह करके शाकल्य मुनि बन गया मेरे पुत्रों! देखो, मैं कहाँ तक सूक्ष्म और गम्भीर वाक्यों में तुम्हें ले जाऊं, यह तो बड़ा एक विचित्र मानो देखो, जगत है देखो, इसके ऊपर मानो ऋषि-मुनियों ने बहुत अनुसन्धान किया।

तो विचारा गया तो इसी वाक् की रचना मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि-मुनियों से हुई है क्या गृहों में क्या वनों में रहने वाला हो मानो वायुमण्डल में जितना वाक् शक्ति मानव की पवित्र होगी, उतना ही गृह हो मानो बालक ब्रहे मानो देखो, पर्व हो वह वही उसी पवित्रता की धारा में रत्त रहता हैं वह सत्य ही सत्य दृष्टिपात आता रहेगा। माता अपने पुत्रों को जब सत्यता का उपदेश देती हैं, तो पति और पत्नी दोनों गृह में जब वेदज्ञ ध्वनि का पठन पाठन करते हैं तो बाल्यों की निन्द्रां के मानो उनके श्वासों के द्वार पर भी मानो उन्हीं परमाणुओं की प्रतिभा उनके हृदयों में प्रवेश कर जाती है मेरे पुत्रों! देखो, यह वाक् मानो देखो, सदैव से सिद्ध हो गया है कि मानव को सदैव अपनी वाणी में पवित्र रहना चाहिए मानव को अपने में तपस्या का मानो अपना क्रियाकलाप बनाना चाहिए जिससे मानव अपने में जीवनता में पवित्र धाराओं में रत्त होता हुआ मुनिवरों! देखो, अपने को पवित्र बनाता रहे। अपनी वाणी को वेदज्ञ ध्वनि में परिणत करता रहे, इस वेदा ध्वनि में ही, अपनी ध्वनि को जानता हुआ, मुनिवरों! देखो, वह जो

ओ३म् रूपी ध्वनि हैं वह उस ध्वनि में वह ध्वनित रहना चाहिए, वह ध्वनि एक शाश्वत हैं। वह मानो देखो, सृष्टि के प्रारम्भ से, वेदमन्त्रों के प्रारम्भ की एक धारा हैं, मानो भूः भुव स्वः में यह सर्वत्र वेदमन्त्र गुथा हुआ है। तो इसीलिए हमें देखो, उस धारा में रत्त हो जाना चाहिए। मानो देखो, आज मैं विशेष चर्चाएं देने नही आया हूँ, विचार यह देने के लिए आया हूँ क्या हे मानव! तू मानव, प्रातःकालीन मानो देखो, उस ब्रह्म का याग कर, तू यागी बन, ब्रह्मयागी तू उस काल में बनेगा, जब तू मानो तेरी शान्त प्रवृत्ति बन जाएगी अपनी शुद्ध अशुद्ध मानो अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके, प्रभु के गान में लग जा, क्योंकि वही मानो तेरा जीवन है वही तेरी धारा हैं, परन्तु देखो, इसके पश्चात वह संसार के भिन्न-भिन्न कार्यों में देखो, शारीरिक रचना का व्यवधान मानो प्रथम किया गया है।

देवपूजा

तो विचार-विनिमय क्या हैं मेरे पुत्रों! देखो, मैं तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ क्या प्रत्येक मानव को अपने में महान बन करके, प्रभु की प्रतिभा का मानो दिग्दर्शन करते हुए और मुनिवरों! देखो, ब्रह्मयागी बन जाएगा, इसके पश्चात मैं बेटा! देखो, द्वितीय जो कर्म है, वह मानो देखो, देव पूजा आता है। हमारे यहाँ पूजा के भिन्न-भिन्न प्रकार के स्वरूप, हमारे वैदिक साहित्य में माने हैं। जैसे यह ब्रह्मयाग है, यह उपासना का काण्ड बन गया है, यह उपासना से अपने को देखो, समष्टि से व्यष्टि में ले जाना है। समष्टि और व्यष्टि मानो देखो, दोनों ही, जब मानव समष्टि में चला जाता हैं, तो वह नाना प्रकार की संकीर्णता से दूरी हो जाता है। मानो पाप कर्म में मानो प्रवृत्ति नही रहती, वह सदैव अपने में महान बन करके पवित्र बन जाता है। इसके पश्चात मानो देव पूजा का प्रसंग आता है। इस देव पूजा की चर्चा मैं तुम्हें कल प्रगट करूंगा। मानो देखो, देव पूजा के रूप में कितना मानो देखो, इसमें विचित्र धाराएं हमारे ऋषि-मुनियों ने जानी हैं। तो विचार-विनिमय क्या, जो हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों का कर्म हैं, वह मानवीय धाराओं के आधार पर यह है, कि मानव को कैसा बनना है, और कैसा बन करके हम जगत में चले, परन्तु नाना प्रकार की जो रूढ़ियाँ हैं, उन रूढ़ियों में प्रवेश नही होना चाहिए, अतिता मानो देखो, रूढ़ियों में अज्ञान आता हैं, उन रूढ़ियों की चर्चाएं, मैंने कई काल में तुम्हें दी हैं। मेरे पुत्र महानन्द जी ने भी रूढ़ियों की चर्चाएं की हैं, परन्तु देखो, मैं भी उन रूढ़ियों को बहुत समय से जान गया हूँ, कि वह रूढ़ि क्या हैं? मानो देखो, सदैव अज्ञानता के आधीन है अज्ञान नही रहना चाहिए, ज्ञान के माध्यम से व्यष्टि और समष्टि में अपने को ले जाना चाहिए। मानो देखो, वही इसके विचारों की एक भूमिका बनती हैं, वह तपस्या का चलन हैं, हमारे यहाँ अनुष्ठानों का बड़ा वर्णन आता रहता है। अनुष्ठान भी, मेरे पुत्रों महानन्द जी ने एक समय कहा कि वह भी एक रूढ़ि बन गया हैं। अनुष्ठान का अभिप्रायः यह है क्या हम वेदमन्त्र को ले करके, अपने में किसी वाक् को ले करके अनुसन्धान कर रहे हैं। अनुसन्धान करके उसको अनुष्ठान में ला देते हैं। अनुष्ठान का अभिप्रायः यह है कि उसको जानना, जिस वस्तु को हम जानना चाहते हैं, उसको हम जाने और जान करके ही मानो देखो, उसमें पिपासी रह करके, जिज्ञासा हो जाएं, उसका नाम अनुष्ठान कहलाता है उससे मानव की आयु दीर्घ बना करती हैं। जैसे हमने एक वेदमन्त्र को लिया है, हमने ओ३म् को लिया हैं ओ३म् की तीन मात्राओं को ले करके हम अग्रणीय बने हैं और उसका अनुष्ठान करते-करते अनुसन्धान करते-करते अपनी प्रवृत्ति को व्यष्टि से समष्टि में ले गएं हैं, तो मानो देखो, हमारा एक अनुष्ठान कहलाता हैं।

आज देखो, मेरे पुत्र महानन्द जी ने मुझे एक समय वर्णन कराया था अनुष्ठान के सम्बन्ध में क्या आधुनिक जो जगत हैं जहाँ यह वाणी का प्रवेश हो रहा हैं, मानो देखो, इसमें अनुष्ठानों के भिन्न-भिन्न रूप स्वीकार कर लिए हैं, मानो देखो, वह किसी वृत्तियों को मानो देखो, द्रव्य प्रदान करने का नाम ही अनुष्ठान स्वीकार कर लिया। क्या यह मेरे नामों का देखो, यह वेद मन्त्रों का जपन करेगा, यह अनुष्ठान स्वीकार कर लिया। परन्तु ऋषि-मुनियों के

अनुष्ठानों की जो प्रवृत्तियां थी, वह कितनी विचित्र मैंने अभी अभी वर्णन की है मैं एक समय मानो बाल्यकाल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा पंहुचा तो उन्होंनें मानो चौबीस वर्षों का एक अनुष्ठान किया था, और वह अनुष्ठान क्या था? वह मानो देखो, वेदमन्त्रों की ध्वनि को माला पाठ में परिवर्तित करना चाहते थे, मानो देखो, माला पाठ के उद्गीत को जानना चाहते थे, उसका प्रादुर्भाव कहाँ से हुआ है? मानो देखो, उस पर अनुसन्धान होता रहा, अनुसन्धान करते रहे, तो पूज्यपाद गुरुदेव का जीवन मुझे स्मरण है मानो देखो, वह बाह्य जगत को आन्तरिक जगत में ले गएं। मस्तिष्क में ले गएं जहाँ ध्वनियां मानो देखो, नाना प्रकार की ध्वनियां हो रही हैं, प्राण अपनी गर्जना कर रहे हैं, अपान से मिलान हो करके कौन-सी गर्जना है? देखो, प्राण का समन्वय जब व्यान से होता है तो कौन-सी गर्जना हैं? और उस गर्जना में जो वह ध्वनित ध्वनित हो रहती है, उस ध्वनि में उनमें क्या रहस्य है तो मानो देखो, उन ध्वनियों के रहस्यों को जान करके चौबीस वर्ष का इस प्रकार का अनुष्ठान किया हैं। तो वेद के मन्त्रों का और उनमें स्मरण आने लगा। तो मानो देखो, वेदों की ध्वनि मानव को वैसे ही कण्ठस्थ नही होती। परन्तु देखो, यह अनुष्ठान के रूप में यह भी अनुष्ठान है एक मानव यह चाहता है कि मैं अपने द्रव्य को पवित्र बनाना चाहता हूँ, मैं अपने द्रव्य को अपने ग्रह को पवित्र बनाना चाहता हूँ, तो वह प्रातःकालीन मानो ब्रह्मयाग में परिणत हो जाएं। और ब्रह्मयाग करता हुआ, मानो देखो, बाल्य, उसका अनुसरण करेंगें। मानो गृह में रहने वाले मानो सब उसका अनुसरण करेंगें। तो वह उसका जो विचार है, वह परमात्मा का वहाँ द्रव्य बन करके देखो, सात्विक बन गया हैं। गृह पवित्र बन गया है। द्रव्य की पवित्रता हो गई है, देव पूजा करने से, ब्रह्मयाग करने से तो मानो देखो, इस प्रकार का जो क्रियाकलाप, ऋषि-मुनियों ने मानव को बेटा! सृष्टि के प्रारम्भ में निर्धारित किया था। यह बेटा! आज का हमारा विचार हैं। आज का विचार हमारा समाप्त होने जा रहा है, कल मैं इसकी देखो, देव पूजा के सम्बन्ध में, जो याग होता उसकी चर्चाएं मैं कल कर सकूंगा, आज का विचार हमारा क्या कह रहा हैं, कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हमें संसार सागर से पार होना है। बेटा! देखो, अपने को व्यष्टि से, समष्टि में प्रवेश कर जाएं, यही हमारा जीवन है यही हमारी पवित्रता है, यही हमारा ब्रह्मयाग है, मुनिवरों! देखो, यह चर्चाएं हम अब समाप्त करने जा रहें हैं कल समय मिलेगा शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें। अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

२ देव याग ०२ ०८ १९८५

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि जितना भी यह जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत है उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है। जब मानव अपने में चिन्तन और मनन करने लगता है, तो अनुभूतियां होती रहती हैं। प्रभु के भिन्न-भिन्न स्वरूपों का वर्णन करने लगता हैं प्रत्येक वेदध्वनि की आभा में उन शब्दों की प्रतिभा का जन्म होता रहता है। जिसकी प्रतिभा अन्तरिक्ष में ओत प्रोत रहती है। विज्ञान परमपिता परमात्मा की महानता का एक प्रतीक माना गया है जिसके ऊपर सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक नाना प्रकार का वैज्ञानिक और मनन करने वाले पुरूष रहे हैं। वह विज्ञान की उड़ान में उड़ते रहे हैं और मानवता की उड़ान उड़ते रहे हैं परन्तु वही प्रसंग हमारे समीप आता रहता है। प्रातःकाल की पवित्र बेला में ऋषि-मुनियों ने यह अनुसन्धान किया और यह विचारने लगे कि आगे आने वाला यह जो जगत है इस जग में भिन्न-भिन्न प्रकार की धाराओं का जन्म होगा। क्योंकि मानव के अन्तर्हृदय में जो आत्मा विद्यमान है। इसकी कोई पिपासा होती है, और उस पिपासा को पूर्ण करने के लिए वह अपने प्रिय महान सखा के आँगन में जाने के लिए तत्पर होता है। यदि उसका दर्शन ऊँचा है वैदिकता से गुथा हुआ है प्रकाशमय है। तो आत्मा की पिपासा महान बन करके अपने में पवित्रतम बन जाती है। इसीलिए मानव को जिज्ञासा जागरूक हुई, आत्मचेतना से तरंगों का जन्म हुआ और उन तरंगों में रमण करता हुआ मानव वह विचारता हैं कि मैं तरंगवादी बन गया हूँ। तो उन तरंगों में नाना प्रकार की आभाओं का जन्म होना प्रारम्भ हो जाता है। मानव यह विचारता है कि मैं अद्यम् बृहे वृणास्वः यदि उसका मार्ग यथार्थ और प्रकाशमय है। तो वह फिर रूढ़ियों में प्रवेश नही करता है वह अपने मनस्तव अपनी सूक्तियों को और पिपासा को अन्तर्हृदय में ले जाता है, और वहाँ अपना निर्णय कर लेता है कि मैं प्रभु के राष्ट्र में हूँ और यह प्रभु का अनन्तमयी राष्ट्र है, और मैं भी विचार-विनिमय करता हुआ अन्त में मौन हो जाऊंगा। तो वह रूढ़ियों से उपरामता के विचार कहे जाते हैं। तरंगें बन जाती हैं। परन्तु जब तक उसका पथ ऊर्ध्वा में नही है। मैं वहाँ जाना चाहता हूँ यदि पथ विचित्र नही हैं, ईश्वर के पारांगत नही है। तो मुनिवरों! वह पथ भ्रष्ट हो जाता है। और उस मार्ग को चल करके उसकी रूढ़ियाँ बन जाती हैं, और वह रूढियां मानव समाज के लिए हानिप्रद होती हैं। उसके मूल में केवल चिन्ता आ जाती है। चिन्ता जागरूक हो जाती है। प्रारम्भ में नही होती, परन्तु रूढ़ियाँ उपलब्ध हो जाती हैं। तो अन्त में उसका परिणाम यही होता है। सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक प्रायः ऐसा होता रहा है।

मुनिवरों! विचार क्या कि ऋषि-मुनियों ने यह विचारा कि मानव की आत्म पिपासा की शान्ति के लिए कोई न कोई याग की रचना की जाए और उन्होंने याग की रचना की और विचारा कि चिन्तन किया और विचारा। ब्रह्मयाग की चर्चाएं तों हम इससे पूर्व काल मैं कर रहे थे, उसका सूक्ष्म परिचय हमने दिया है। ब्रह्मयाग के पश्चात आचार्यों ने इस सृष्टि के प्रारम्भ में आत्म पिपासा को शान्त करने के लिए अन्तर्हृदय में जो याग हो रहा है। उस याग को बाह्य जगत में लाने का उन्होंने प्रयास किया और जब उस याग को अन्तर्जगत से बाह्य जगत मं लाए तो उन्होंने विचारा कि यह याग तो देवपूजा है। इसके ऊपर विचार किया जाएं कि इसे देवपूजा क्यों कहते हैं? देवताओं का पूजन करना हमारा कर्तव्य है। हमारे यहाँ दो प्रकार के देवताओं का वर्णन वैदिक साहित्य में आता

रहता हैं। एक वह जो देवतम ब्रह्मवाहा, जिसे हम जड़ देवता कहते हैं और द्वितीय देवता चैतन्यवत माने गएं हैं। दोनों प्रकार के देवताओं की पूजा करने के लिए हमें अनुसन्धान करना होगा। अनुसन्धान भी योग पूर्वक, हमारा गम्भीर मनन और चिन्तन इस सम्बन्ध में होना चाहिए।

प्राचीन काल में अतीत के काल में हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों ने देव पूजा के लिए बहुत से विचित्र वाक् हमारे समीप दिए हैं। न्यौदा में एक मन्त्र कहता है कि देवां ब्रह्म अग्नि रूद्रो भासव अग्नि रूद्रो भासव प्रही वाचम् ब्रहे वाचन्नमः वेद का वाक्य कहता है कि अग्नि देवताओं के रूप में परिणित रहती है। क्योंकि वह प्रत्येक परमाणु का विभाजन करना इस अग्नि का कर्तव्य है। मानव के शरीर में भिन्न-भिन्न प्रकार के परमाणुओं की उपलब्धियां होती रहती हैं। तरंगों की उपलब्धियां होती रहती हैं। परन्तु अग्नि उनका विभाजन करती रहती हैं वास्तव में जब हम दार्शनिक विचारों में पंहुचते हैं तो विभक्त क्रिया जहाँ अग्नि करती हैं। वहाँ मनस्तव भी किया करता है। तो विचारने से यह प्रतीत हुआ है कि यह जितना प्रकृतिवाद है, इस प्रकृतिवाद में विभक्त क्रियायें हो रही हैं। चाहे वह अन्तरिक्ष में विभक्त हो जाओ, पृथ्वी के गर्भ में चले जाओ, द्यौ में प्रवेश कर जाओ, परन्तु मध्य में भी द्यौ ही प्रतीत होता है, और पृथ्वी के अन्तिम छोर में भी द्यौ ही प्रतीत होता है। द्यौ से ही प्रकाश ले करके एक अनुपम प्रकाश होने लगता है। ऊर्ध्वा उस द्यौ से हमें प्रतीत होता है और द्यौ को ले करके हम संसार में गमन करते हैं, वही हमारी एक आभा कहलाती है।

यह याग है जिसे हम देवपूजा कहते हैं। देव पूजा के दो प्रकार के स्वरूप एक चैतन्यता और एक जड़ता हमारे समीप है जड़ में सामान्यता है और चैतन्यता विशेषत्व माना गया है। विचारने से प्रतीत हुआ कि देव पूजा करने वालों ने जब अग्नि में साकल्य प्रदान किया तो इसके ऊपर बहुत अनुसन्धान किया। नाना प्रकार की चित्रावलियों का भी निर्माण किया। द्यौ लोक केवल याग और देवपूजा कर्म करने से सजातीय बनता है। द्यौ की जितनी भी उपलब्धियां हैं, वह सब देव पूजा में हैं। क्योंकि यदि हम शुभ कर्म नही करेंगें तो द्यौ का निर्माण भी नही हो सकेगा। द्यौ का निर्माण तो सत्यता से पूरिपूर्ण रहता है।

मेरे पुत्रों! आचार्यों ने कुछ ऐसा स्वीकार किया है कि विज्ञानवेत्ता ने भी यौगिक आचार्यों ने भी ऐसा कुछ माना है कि जब हम देव पूजा करते हैं। तो साकल्य अग्नि में परिणत करते हैं दोनों प्रकार के देवताओं की पूजा हो रही है। वेदमन्त्रों का उद्गीत गाया जा रहा है। हमारे यहाँ आचार्यों ने परम्परागतों से ही, देवपूजा को मानव जीवन के नित्यप्रति क्रियाकलाप का एक अंग बनाया। इस अंग के बन जाने से उन्होने कहा कि वेद का पठन-पाठन होना चाहिए, अग्नि तुम्हारे समीप रहनी चाहिए, उसमें तुम देवताओं का अग्रहो ब्रणाम् ब्रहे। मुनिवरों! हम वेद का पठन-पाठन करें, ऐसा उन्होंने क्यों कहा? इसीलिए क्योंकि वेद के पठन-पाठन से वेद की जो पवित्र ज्ञान-विज्ञान से पूर्ण विद्या है, उसकी रक्षा होती है। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, कोई विधान नही माना है, कि किसी वस्तु का पारायण किया जाए। अनुष्ठान स्वीकार किए हैं। अनुष्ठानों में मानव लगा रहता है परन्तु पारायणों में नही पंहुचा। पारायणों का कही ऐसा कोई नियम भी नही आता। परन्तु देखो, विचारने से यह प्रतीत हुआ कि हमारे यहाँ ऋषि-मुनि पारायण उस रूप में करते थे जिससे उसकी रक्षा हो जाएं। उस विद्या की रक्षा होना बहुत अनिवार्य है। वह उपासना में परिणत होने वाली पवित्र देवी है, जिसके ऊपर हम अपने जीवन को ले जाएं और वेद का नित्यप्रति पठन-पाठन करें। क्योंकि वेद ध्वनि से ज्ञान और विज्ञान की उपलब्धियां होती रहती हैं, और अग्नि के आश्रित हो करके जब ध्वनि अन्तरिक्ष में गति करती है। तो परमाणुओं को ले करके वह धाराएं अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत हो जाती हैं। जिनसे ऋषि-मुनि यन्त्र का निर्माण करते थे। उन्होंने इसकी जानकारी दी है, इसको जानने के लिए तत्पर रहे हैं।

मुनिवरों! विचार क्या कि मैं देव पूजा के सम्बन्ध में अपना यह विचार दे रहा था कि दोनों चैतन्य और जड़वत् देवताओं की पूजा होनी चाहिए। मुनिवरों! जड़ कौन है? जड़ जैसे पार्थिव तत्त्व, जलवर्तमः, अग्नि तेजोमयी, वायु, अन्तरिक्ष ये पंच महाभूत कहलाते हैं। इन पंच महाभूतों के आँगन में ही तो नाना प्रकार के साकल्य को लाया जाता है। यह जड़वत देवता कहलाते हैं। जब हम विशुद्ध रूप से अपनी वाणी के द्वारा उद्गीत गाते हुए अग्नि में साकल्य अर्पित करते देते हैं। तो वह अग्नि सब देवताओं को उसे प्रदान कर देती है। अग्नि की नाना प्रकार की धाराएं हैं। जो शब्द को ले करके द्यौ लोक में प्रवेश करा देती हैं उसी शब्द को ले करके, अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत हो करके द्यौ का निर्माण हो जाता है। मुनिवरों! आगे जब उन्होंने वेद ध्वनि को प्रसारित किया तो यह निश्चय हुआ कि शब्द नित्य द्यौ में प्रवेश करता है। द्यौ में ही ओत-प्रोत रहता है। तो इस प्रकार उन्होंने याग के सम्बन्ध में, देवपूजा के सम्बन्ध में अपना व्यक्तव्य दिया कि पंच महाभूत का पवित्र होना बहुत अनिवार्य है, और यह पवित्र जब होगा जब प्रत्येक गृह में जब वेद ध्वनि का प्रसार होगा। वेद की ध्वनि होनी चाहिए। क्योंकि हमारे आचार्यों ने वेद को ईश्वरीय ज्ञान माना है। वेद केवल एकोकी प्रकाश है, इस प्रकाश के लिए मानव अपने अन्तःकरण को उस वेद ध्वनि से समन्वय करता हुआ अपने अन्तःकरण की प्रतिभा को जन्म देता है।

मुनिवरों! अग्नि के प्रदीप्त करके जब हम वेद की ध्वनि का प्रसार करते हैं। वेद ध्वनि का एक दूत स्वीकार करके अग्नि के रूप में प्रवेश हो जाती हैं, अग्नि के परमाणु, शब्द को ले करके द्यौ लोक में जाते हैं। द्यौ से ऊर्ज्वा ले करके सूर्य अन्तरिक्ष में गति करता है। ऊर्ज्वा को ले करके मेघ मण्डलों की उत्पतियां हो जाती हैं। तो इन्द्र और वकासुर, दोनों का संग्राम होता है। संग्राम होते ही वृष्टि प्रारम्भ होती है। तो यह पृथ्वी के गर्भ में जो नाना प्रकार के धातु पिपाद का निर्माण हो रहा है, वह उसमें सहायक बनता है उस शीतलता का पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार के व्यंजनों का जन्म होता है। नाना प्रकार के अन्न इत्यादियों का, रत्नों, जितनी भी संसार की धातुएं हैं, जो मानव के जीवन में सार्थक होती हैं, उस सबकी उपलब्धियां हो जाती हैं। विचार-विनिमय क्या कि आचार्यों ने देव याग से ही द्यौ के निर्माण की उपलब्धि स्वीकार की है।

मुनिवरों! आगे आचार्य कहते हैं कि ब्रह्मवाचा यागाम् ब्रहे, चन्द्रमा सोम देता है, अमृत को बहाता रहता है, वह सोममयी कहलाता है। सोम बना करके उसका हम अपने में उपयोग करते हैं आयुर्वेदाचार्य इसके ऊपर अनुसन्धान करते हैं चन्द्रमा सोम है। शीतल है यह नाना प्रकार की वनस्पतियां को अमृत प्रदान करने वाला है, प्राणसता को उत्पन्न करने वाला है। वही प्राण स्वरूप बन करके नाना प्रकार की वनस्पतियों में ओत-प्रोत हो करके वह रसों की उपलब्धियां कर देता है। मानव की वाणी से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। वही चन्द्रमा सोम है जो शीतलता में प्रवेश करता हुआ, जलों की धाराओं में रत्त रहता है, उसका अमृत बना देता है आचार्य जनों ने नाना प्रकार के व्यंजनों की धाराओं को ले करके ही चन्द्रमा की धारा को अपने में समन्वय का प्रयास किया है। तो यह हमारे यहाँ जड़वत देवताओं का पूजन हुआ। उसमें सत्ता प्रदान की गई, साकल्य और वह श्रद्धा जब घृत के रूप में देवताओं के समीप पंहुची तो वही तो आनन्दवत् कराके हमारे जीवन को ऊँचा बना दें।

जब चैतन्य देवता पुरोहितजन विद्यमान हैं। पुरोहित वह होता है जो यह चाहता है कि यज्ञमान की ऊर्ध्वा गति हो, यह ऊर्ध्वा में गमन करने वाला हो। पुरोहित उसे कहते हैं जो गृहस्वामी, गृह स्वामिनी के हृदयों में अपने श्रद्धामयी, करूणामयी और उपासनामयी वेद के मन्त्रों को ले करके, उसके भावों को उनके हृदय में प्रवेश हो जाते हैं। तो उनके जीवन की भूमिका विचित्र बन जाती है, और वह अपने में यह स्वीकार करते हैं कि वास्तव में हमारा यह कर्तव्य है जब वह उपदेश देता है। तो यज्ञमान का अन्तर्हृदय पवित्र हो जाता है। मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन करते हुए कहा है कि देखो, राजा अश्वपति के यहाँ पति-पत्नी दोनों विद्यमान हो करके प्रातःकालीन याग में

परिणत होते थे। रैनकेतु ऋषि महाराज उने पुरोहित थे और वह उनके हृदयों को पवित्र बनाने की चेष्ठा करते रहते हैं। महाराजा अश्वपति को वे कहा करते थे कि हे राजन! तुम उस अन्न को ग्रहण करो जिस अन्न के ग्रहण करने से तुम्हारा अन्तरात्मा पवित्र बन जाएं। तुम्हारा अन्तरात्मा विचित्र बन करके तुम राष्ट्र कुशल बन करके, कौशलता को प्राप्त करो। हमारे यहाँ भगवान मनु ने राष्ट्र की एक भूमिका बनाई है कि प्रजा जब अपने कर्तव्य से विहिन हो जाए। तो राजा निर्वाचन होना चाहिए। राजा जब निर्वाचन होता है, तो राजा को पुरोहित यह कहता है कि हे राजन्! तू उस अनन का ग्रहा कर जिससे तेरे हृदय में विडम्बना न आ जाएं, क्योंकि राष्ट्र का एक मद है, यह बड़ा विचित्र है, यह महापुरूषों को भी नष्ट कर देता है राष्ट्र के द्रव्य की इस प्रकार की प्रतिभा है। उससे मानव के हृदय में करूणा न आ करके उसमें कठोरता का भाव स्थापित हो जाता है। राजा के हृदय में करूणा होनी चाहिए। उसको करूणा जब आएगी जब उसका अन्न पवित्र होगा अन्न के पवित्र होने पर ही राजा ऊँचा बन सकता है। महाराज अश्वपति और उनकी गृह स्वामिनी, दोनों इस पृथ्वी के गर्भ से नाना प्रकार के पुरूषार्थ करते हुए अन्न को एकत्रित करके उस अन्न को पान करते थे और उसको पान करने से राजा का हृदय पवित्र रहता था। राष्ट्र को यह उपदेश देते थे कि हे प्रजाओं! तुम अपने कर्तव्य का पालन करो और वह कर्तव्य यही था कि प्रत्येक गृह में ऋषि-मुनियों ने तुम्हारे कुछ रचनात्मक, क्रियात्मक क्रियाकलाप करने के लिए उपदेश दिए हैं, उनको पुनः से स्वीकार करो। पुनः तुम्हारे प्रत्येक गृह में याग होने चाहिए, सुगन्ध होनी चाहिए। प्रत्येक गृह में देवताओं का पूजन होना चाहिए।

प्रत्येक गृह में गृह स्वामी और गृह स्वामिनी, बाल्य ब्रह्मचारी आचार्य के समीप विद्यालय में जब अपने याज्ञिक और देवपूजा करने वाले बनेंगें तो यह समाज पवित्र बन करके जैसा प्रभु ने यह जगत रचाया है। उसी प्रकार स्वाभाविक अपने-अपने क्रियाकलापों में यह समाज परिणत होता रहेगा। वायुमण्डल पवित्र बना रहेगा, समय पर वृष्टि होगी प्रत्येक क्रियाकलाप में प्रकृति का होना अनिवार्य है यह उसी काल में होता है जब प्रत्येक मानव के, प्रत्येक प्राणी के हृदय में देवपूजा करने की भावनाओं का जन्म होगा। जब देवताओं की पूजा नही होगी तो देवतव कैसे प्राप्त होगा? देवताओं की पूजा का एक ही माध्यम है कि देवपूजा करें। देव पूजा का अभिप्रायः यह कि हम प्रातःकालीन याज्ञिक बनें। जैसे हम ब्रह्मयाग करते हैं वैसे देवपूजा भी अनिवार्य है। देवताओं के पूजन में पुरोहित अपने यज्ञमान को चाहता है कि यह पवित्र बन जाए।

महाराजा अश्वपति अपने में पुरूषार्थ करते रहते थे। पुरूषार्थ से अन्न को उत्पन्न करके उस अन्न का पान करने से तरगों का जन्म होता है वही तो मानव के मस्तिष्क का निर्माण करता है। मस्तिष्क का निर्माण अन्न के द्वारा होता है, इसके लिए हमारा अन्न पवित्र होना चाहिए। मैंने बहुत पुरातन काल में यह वाक् देते हुए कहा कि संसार में मानव के द्वारा जब अन्न की महान उपलब्धि होगी तो उसके हृदय में महानता वाली तरंगों का जन्म होगा और वायुमण्डल का, गृह का निर्माण होगा। इसके ऊपर वैज्ञानिकों ने भी बहुत अनुसन्धान किया है। आज मैं विज्ञान के युग में तो तुम्हें ले जाना नही ले जाऊंगा। विचार केवल यह कि हमारे यहाँ प्रातःकालीन देव याग होने चाहिएं। वेद ध्वनि होनी चाहिए। जिससे वह ध्वनि हमें देवतव को प्राप्त कराए।

चैतन्य देवता हमारे पुरोहित है, आचार्य जन, गुरुजन हैं जो ऊर्ध्वा मार्ग में ले जाते हैं विद्यालय को सजातीय बनाना है विद्यालय को ऊँचा बनाना है तो प्रातःकालीन ब्रह्मचारी और आचार्यजन देवपूजा में लग जाएं। आचार्य जब याग के पश्चात ब्रह्मचारियों को अपने क्रियाकलाप के सम्बन्ध में उपदेश देता है तो वह अपनी विचारधारा को प्रवाहित कर रहा है वेदमन्त्र यह कहता है कि जो बाल्यों के हृदय में आचार्यों की एक भावातीत धारणा की जाती है, उसी से तो ब्रह्मचारी ऊँचा बनता हैं। विचार विनिमय क्या कि प्रत्येक गृह में, प्रत्येक विद्यालयों

में जब याग की उपलब्धि हो जाती है। तो एक दूसरे से रक्त की पिपासा का प्रसंग ही नही बन पाता। रक्त की पिपासा जब होती है। जबकि मानव अपने ज्ञान से शून्य हो जाता है। वेद ज्ञान से विमुख जो पथिक बन जाता है। वह रूढ़िवाद बन करके देखो, राष्ट्र की प्रतिभा में वह ओत-प्रोत हो जाता हो करके, वहाँ से रक्त की क्रान्तियां प्रारम्भ होती हैं क्यों होती हैं क्योंकि ब्रह्मचारी जन आचार्य कुल में आचार्यों का देवताओं का पूजन नही कर रहे हैं। पूजन का प्रारम्भ करने के लिए आचार्यजन अपने देवताओं का पूजन करें और ब्रह्मचारी अपने देवता का पूजन करें। तो मुनिवरों! अपने-अपने में देवतव बन करे पवित्र बन सकते हैं।

राष्ट्र और समाज दोनों एक संग तुलना में आ करके एक दूसरे को महान प्रीति की दृष्टि से पान करने वाला जब समाज हो जाता है तो देखो, राष्ट्रीयता का अस्तित्व नही रहता है। राष्ट्रीयता का अस्तित्व जब ही तक है। जब तक अपना महत्व स्वीकार कर रहा है। जब तक मानव का निर्माण नही हो रहा है। जब तक ऋषि-मुनियों की वार्त्ता को अपनी क्रिया में नही ला रहा है। तभी तक राष्ट्र का अपना महत्व माना गया है, और जब अपने कार्यों में मानव रत्त रहता है। देवपूजा में रत्त रहता है। क्रियाकलापों में रत्त रहता है। अपने कर्तव्यवाद की वेदी को ऊँचा बना लेता है तो वहाँ देखो, ऋषि-मुनियों के समीप राजा जाता है, और यह कहता है कि भगवन! मैं अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता हूँ ऋषि-मुनियों का जीवन है, वह राष्ट्र से ऊर्ध्वा में गति कर गया है। इसीलिए राजा उनके चरणों में विद्यमान हो करके ऊँची शिक्षा को प्राप्त करता है।

मेरे पुत्रों! मैं विशेषता में तुम्हें नही ले जा रहा हूँ, विचार केवल यह उच्चारण करने के लिए आया हूँ कि देवतव प्रमाणम् वृहे लोकाम् ब्रह्मवाचाम् देवाः हम प्रातःकालीन ब्रह्मयाग के पश्चात देवपूजा करने वाले बनें। देव पूजा का अभिप्रायः यह कि हम दोनों प्रकार के देवताओं का पूजन कर रहे हैं। जड़ देवताओं का भी और चैतन्य देवताओं का भी। चैतन्य देवता हमारे गुरुजन हैं, पितर जन हैं जब ब्रह्मचारी प्रातःकालीन देव याग करता है तो देव याग में अपने पितरों की पूजा करता है। पिता भविताम् देवाम्, देवताजनों की पूजा करता है- जो भी देवता है, आचार्यजन वेद के पठन-पाठन करने वाले, वेद के भिन्न-भिन्न प्रकार के रूपों में, स्वरों में गान गाने वाले हैं। यहाँ मुझे स्मरण आता रहता है कि एक समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव बोले कि चलो! आज तो मगध राष्ट्र में भ्रमण करके आते हैं भ्रमण करते मगध राष्ट्र में जब कवन्धि श्वेतकेतु ऋषि के द्वार पर पंहुचे तो उन्होंने स्वागत किया और आसन दे करके वन्दना की। विराजामन हो कर पूज्यपाद गुरुदेव ने यह प्रश्न किया कि हे ब्रह्मे! कवन्धि क्या कर रहे हो? उन्होंने कहा कि-प्रभु! मैं देव याग के लिए चिन्तन कर रहा हूँ। देव याग करना चाहता हूँ। पूज्यपाद ने कहा कि क्या देव याग तुम्हें नही आता। उन्होंने कहा कि मैं देवयाग जानता तो हूँ, उसके ऊपर कुछ अनुष्ठान करना चाहता हूँ। प्रभु यह जो मैं देवयाग करने जा रहा हूँ, इसका देवता कौन है? पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि जिस देवयाग को आप करना चाहते हैं। उसका देवता अग्नि है। उन्होंने कहा कि भगवन्! एक समय कात्यायन के गृह में मेरा वास हुआ था। कात्यायन से मैंने यह प्रश्न किया तो उन्होंने देवता सूर्य वर्णन किया था आप अग्नि का वर्णन कर रहे हैं, तो प्रभु! मैं कौन से देवता को स्वीकार करूं? गुरुदेव बोले कि हे कवन्धि सूर्य और अग्नि दोनों एक ही तुलना में स्वीकार किए जाते हैं। क्योंकि अग्नि की सूक्ष्म धारा से द्यौ का जन्म होता है, और सूर्य से प्रकाश ले करके प्रकाशित है वह भास रहा है।

कवन्धि ने कहा कि धन्य है प्रभु मेरी शंका का निवारण हो गया है, परन्तु भगवन! मैं एक वाक् और जानना चाहता हूँ कि हे प्रभु! यह जो मैं याग करने जा रहा हूँ, उसका उद्गाता कौन है? तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि यह जो तुम याग करने जा रहे हो इसका उद्गाता वायु है, वायु ही उद्गीत गाती है। मानव के हृदय में जब प्राण और मन दोनों का समन्वय होता है, तो उसके पश्चात उद्गीत गाया जाता है। तो वह उद्गाता बनता है। उन्होंने

कहा कि-प्रभु! आपका वाक्य यथार्थ है परन्तु एक समय मैं रेणकेतु राष्ट्र में पंहुचा था तो उनके यहाँ श्वेत्ता नामक एक ऋषि का वास करते थे। मैंने यह वाक् जब श्वेत्ता ऋषि से कहा तो उन्होंने वर्णन करते हुए यह कहा था कि इसका उद्गाता तो वाणी है, आपने वायु, प्राण और मन को कहा है मैं यह कैसे स्वीकार करूं?

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने हा कि हे कवन्धि! क्या तुम नही जानते हो? अब मैं तुम्हें वर्णन करना चाहता हूँ, कि वायु गति है। वायु प्राण का प्रतिनिधत्व करने वाला है। प्राण का मन से, जड़वत से जब सन्निधान हुआ तो चित्त का मण्डल बना और चित्त के मण्डल बनते ही उसका समन्वय आत्मा से होता है। आत्मा में जा करके संस्कारों की उपलब्धियां होती हैं। संस्कार जब जागरूक होते हैं तो उसकी उपलब्धि हो करके उससे वही चित्त मण्डल बना, मन और प्राण दोनों का समन्वय होते ही वाणी में प्रारम्भ हो जाती है। इसीलिए जो उन्होंने कहा है, वह भी यथार्थ है जो हमने उच्चारण किया है। वह विस्तार से है तो इसीलिए वाणी, मन और प्राण दोनों को ऊर्ध्वा में ले करके उद्गीत गाती रहती है, यज्ञशाला में देखो, देव याग, में उद्गाता उद्गीत गाता है और जब उससे प्रश्न करते हैं कि तुम उद्गीत क्यों गा रहे हो, उद्गाता क्यों बन गएं हो, तो वह कहता है कि मैं यज्ञमान की वाणी को पवित्र बनाना चाहता हूँ। तो वह वायु प्राणम् व्रहे वह मनस्तव, प्राणतव और चित्त के मण्डल को ले करके, वह आभा में नियुक्त हो करके अभ्युदय हो करके, वाणी से उसका मिलान होता है। जैसे उद्गाता की वाणी पवित्र है, ऐसे ही स्वाहा देने वाले यज्ञमान की वाणी पवित्र हो जाती है।

जब यह वाक् उन्होंने पान किया तो वह प्रसनन हो गये। कवन्धि ने कहा कि-प्रभु! मैं यह जानना चाहता हूँ कि इस यज्ञशाला में यह जो अध्वर्यु बना हुआ है, यह कौन है? उन्होंने कहा कि यह अध्वर्यु आपो है यह आपो कहलाता है आपोमयी सर्वत्रता का अध्वर्यु अप्रतोभागाम् वृहे नौदवृणीमस्तहा, यह जो सोम है, यह जो आपो है, यह आपो ही अध्वर्यु बना हुआ है, यही आपो है जो यज्ञमान के वाणी ब्रहाः उसके भी अपने में सींचता रहता है। किसी काल में साकल्य को ले करके अग्नि जो दूषित रूपों में रत्त रहने लगती है, उसको भी यह शोधन करता है, तो यह अध्वर्यु कहलाता है यह कौन है तो उन्होंने भगवन! अध्वर्यु जल को नही, उन्होंने पृथ्वी को अध्वर्यु कहा है प्रभु मैं आपके वाक्य स्वीकार करूं या शाकल्य मुनि के वाक्यों को स्वीकार करूं। भगवन्! मुझे यथार्थ उच्चारण कीजिए।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि याज्ञिक थे, यज्ञ के मर्म को जानते थे। मैं सर्वांग तो नही जानता परन्तु जितना जानता हूँ उतना उच्चारण करूंगा। अध्वर्यु का अभिप्रायः यह है कि अध्वर्यु द्रव्य का स्वामी कहलाता है। जितना द्रव्य है, जितना साकल्य है इसका पिण्ड बनाने वाला जल है। जितना भी पिण्ड आकार बनता है, वह पिण्ड बनाने वाला जल है। इसीलिए जल हमारे यहाँ अध्वर्यु कहलाता है। वैदिक साहित्य में अध्वर्यु जल को कहते हैं और जब पृथ्वी जल के समीप आती है। तो पृथ्वी के परमाणुओं का ही पिण्ड बनता है। जब तक वह आपो की प्राण सत्ता पृथ्वी के परमाणुओं में परिणत नही होती तब तक देखो, किसी वस्तु का पिण्ड नही बनता। माता के गर्भस्थल में भी जो मानव का पिण्ड बनता है, वह भी इसी रूप में बनता है बाह्य जगत में पिण्ड बनता है, तो वह भी इसी रूप में बनता है। पिण्ड द्रव्य बन करके साकल्य बन जाता है। साकल्य बन करके वह जो अध्वर्यु है। वह होताओं को साकल्य प्रदान करता है, और वही साकल्य अग्नि में प्रवेश करता है अग्नि उसकी पुनरूक्तियां देखो, उसे सूक्ष्म बना देती है। परन्तु पिण्ड का जो मौलिक रूप है, आपो का जो मौलिक रूप है, उसको अग्नि शान्त नही कर सकती। वह परमाणुओं के रूप में तरंगों के रूप में प्रत्येक काल में बना रहेगा।

ऋषि ने कहा कि-प्रभु! यह मैंने स्वीकार कर लिया परन्तु जो पृवि के लिए कहा है गुरुदेव बोले कि मैं उसका उत्तर दे रहा हूँ पृथ्वी के परमाणु गुरूतव का आपो के बिना पिण्ड नही बनेगा। बिना आपो के यह पृथ्वी व्यंजनों वाली नही बन सकती, यह आपो ही तो वरुण कहलाता है, यही तो अन्न का भण्डार है। जितना भी संसार

का अन्नाद है, प्राणी मात्र है देखो, उस सबका अध्वर्यु वरुण माना गया है, वह आपो माना गया है। वह आपो ही प्राण के रूप में परिणत रहता है। कृषक जब पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना कर देता है। तो वह आपोमयी ही बीज को पवित्र करके अन्न उत्पन्न करता है। एक को मानव पान करता है। एक को पशु पान करता है। उसी को पान करके पशु दुग्ध देता है, और मानव ओज की और तेज की उत्पति करता है। वह जो वरुण है वही आपो हैं वही आपो मुनिवरों! मानव के आसन के रूप में और ओढ़न के रूप में भी रहता है। इसीलिए यह अध्वर्यु कहलाता है। यह मानो संसार का अध्वर्यु है जो याग का अध्वर्यु है वही संसार का अध्वर्यु है।

कवन्धि ने पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों की वन्दना की और कहा कि धन्य है। प्रभु आपने मुझे जो निर्णय कराय है मेरा हृदय स्वच्छ बन गया है, क्योंकि वेद का ऋषि कहीं वेदमन्त्रों में यह कहता है कि जब तक मानव को याग नही करना चाहिए। जब तक शंकाओं से दूरी न हो जाएं। किसी प्रकार का अन्तर्द्वन्द्व नही रहना चाहिए। शंका नही रहनी चाहिए। मानव शंका रहित हो करके ब्रह्मवेत्ता बने, शंका रहित ही याज्ञिक बनता है। तो इसीलिए आज मेरा हृदय प्रसन्न हो गया है। बहुत समय से मैं याग नही कर रहा था बाल्यकाल में करता था, मुझे शंकाएं बनीं, मैंने याग समाप्त कर दिया कि जब तक शंका रहित नही होऊंगा तब तक याग नही करूंगा। मेरी शंका भगवन! आपने निवारण की है तो प्रभु! यह मैंने स्वीकार कर लिया है कि आपो ही अध्वर्यु माना गया है।

ऋषि यह वाक् कह करके शान्त हो गये। कवन्धि ने कहा कि सम्भवि लोकाम् हिरण्यम्वृथे ब्रह्मा वाचम् सम्भवा, वह सम्भूति लोकाम्हिरणायवृथा, वेद के आचार्य कवन्धि ने यह कहा कि-प्रभु! अब मैं यह जानना चाहता हूँ कि इस देवयाग में यज्ञमान का क्या स्थान है? यज्ञमान क्यों विशेषता में परिणत रहता है कि उसकी वाणी को पवित्र बनाया जाता है। यह वाक् श्रवण करके पूज्यपाद गुरुदेव मग्न होने लगे और कहा कि कवन्धि तुम इतना भी नही जानते? उन्होंने कहा कि-प्रभु! मैं कुछ जानता हूँ। कुछ मेरे हृदय में शंका बनी रहती है। गुरुदेव ने कहा कि यह जो यज्ञमान है, वह त्रिपति कहलाता है। यह आत्मस्वरूप है। क्योंकि आत्म ब्रह्म वाचाः यज्ञमान के साथ आत्मा का सम्बन्ध आता है। जब सृष्टि का प्रारम्भ होता है, तो सृष्टि के प्रारम्भ में तीन ही तो पदार्थ होते है। जड़वत् चेतनवत् और महाचेतनवत्। जब सृष्टि का प्रादुर्भाव होता है। तो वह जो परमपिता परमात्मा है। वह ब्रह्मा बन करके ज्ञान की धाराओं का रूपान्तर करते रहते हैं। आत्मा उस काल में यज्ञमान बनता है, और परमात्मा के सन्निधान मात्र से जड़वत् प्रकृति के परमाणु अपने-अपने स्वभावों में जागरूक हो जाते है। रचना करने वाला रचना में रत्त हो जाता हैं। जब इस प्रकार की प्रतिभा अग्रणीय बन जाती है। तो यह आत्मा यज्ञमान के स्वरूप में रत्त रहता है। आत्मा के द्वार कोई भी संस्कार नही जाना चाहिए, इसीलिए साकल्यों को द्रव्यों को ले करके यज्ञमान की वाणी को पवित्र बनाया जाता है।

मेरे पुत्रों! देखो, आज का विचार यह है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देवपूजा मैं रत्त हो जाएं। देवपूजा के सम्बन्ध में बेटा! बहुत से वाक् कल हम उच्चारण करेंगें। आज का वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं। यह आज का हमारा वाक्य अब समाप्त होने जा रहा है, समय मिलेगा तो हम शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें आगे के विचार रह गएं हैं। उनको कल उच्चारण करेंगें। अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

३ देव पूजा ०३ ०८ १९८५

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि जितना भी यह जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है, जो सर्वज्ञ है। परमपिता परमात्मा की जो महती है अथवा उसका जो वर्णन है। हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों के क्षेत्रों मे प्रायः उनका बड़ा महत्व रहा है। परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कह रहा है, वेदमन्त्र कुछ कहता है, हमें प्रेरित करता रहता है, प्रेरणा देता रहता है कि हे मानव! तू आ और मेरे में समहित हो। चेतना में जब हम यह चिन्तन करते हैं कि मन्त्र ऐसा क्यों कह रहा है, तो विचार आता है कि सम्भव लोकाम् ब्रह्म वाचो, कि यह जो ब्रह्म वाचो देवा है, वह ममतव को धारण करने वाला है।

प्रत्येक मानव प्रेरणा का एक स्रोत बन करके रहता है। एक-एक वस्तु से प्रेरणा लेता रहता है। क्योंकि मानव का यह जो शरीर है। यह एक सूक्ष्म अनुसन्धानशाला के रूप में दृष्टिपात आता है। जब अनुसन्धान किया जाता है, तो यह प्रतीत होता है कि हमारे ऋषि-मुनियों ने कितना तपस्या में अपने जीवन को लगाया है। क्योंकि उनका तपश्चर बड़ा विचित्र रहा है। वे परमपिता परमात्मा की चेतना में बद्ध हो रहे हैं। पूर्व काल में ऋषि-मुनियों बड़े गम्भीरता से अध्ययन किया है, गम्भीरता से इस संसार को जानने का प्रयास किया। मेरे पुत्रों! वेद का मन्त्र यही कहता है कि हम परमपिता परमात्मा की महती को जानते हुए इस सागर से पार हो जाएं। जो मान-अपमान वाला सागर हमें दृष्टिपात आ रहा है यह संसार रूपी एक सागर है।

हम नाना प्रकार की पूजा के सम्बन्ध में अपना विचार देते चले जा रहे थे। जहाँ यह विचार होता है कि देवम् भुवि लोकाम् ब्रह्म वाचो देवाः यह जो देवपूजा है, यह मानव को कहाँ-कहाँ ले जाती है। देवताओं का पूजन हमारा कर्तव्य है। एक मानव एक महापुरूष की जीवन शक्ति का स्मरण शक्ति का प्रादुर्भाव करता है। परन्तु जब गम्भीरता में प्रवेश करता है, तो एक महानता में उसका विचार बन करके रहता है। विचारने से प्रतीत होता है कि जो देव पूजा है, मानो यह जो याग है इसमें दोनों प्रकार के देवताओं का पूजन हो रहा है। एक पूजन जड़वत् के रूप में है। एक चैतन्यवत् के रूप में हैं। आचार्य के समीप ब्रह्मचारी जैसे ही चरणों में विद्यमान हुआ तो वह मुनिवरों! ममतव धारण कराने वाला उपदेश देना प्रारम्भ करने लगे। उपदेशाम् अमृताम् ब्रह्म लोकाम् ब्रहे व्रतमदेवाः। अपने उपदेश में माता कहती है ब्रह्म वाचो, हे ब्रह्मचारी! वस्तु समालोको ब्रह्म वाचा आचार्य के समीप विद्यमान हो करके तू अपनी अन्तर्हृदय की नाना प्रेरणा को अपने में धारण करना। माता का यह सार्थक उपदेश है, और माता अपने बाल्य को ऊँचा बनाना चाहती है।

ब्रह्मचारी आचार्य कुल में, आचार्य के समीप विद्यमान हो करके कहता है कि हे भगवन्! आप मेरा हृदय पवित्र बना दीजिए। तो आचार्य कहता है कि हे इन्द्रां भवो सम्भवाः हे ब्रह्मचारी! तू इन्द्रियों को मुझे प्रदान कर। ब्रह्मचारी इन्द्रियों को प्रदान करता है, और आचार्य की जो वमन की हुई विद्या है, वह अपने में ग्रहण करता है तो विचार विनिमय क्या? यह चैतन्य देवताओं का पूजन है। जिसमें हम महापुरूषों के, आचार्यों के चरणामृतों का पान करके अपने मानव जीवन को सार्थक बनाते चले जाएं और महान देवपूजा करते चले जाएं। तो प्रारम्भ में आदि ऋषियों ने विद्यमान हो करके मानव के जीवन की एक मानवीय धारा का निर्माण किया कि समाज इस प्रकार से

कटिबद्ध हो जाएं। जिससे संसार में त्रुटि न रहे, संसार में विवेकी पुरूष बन जाएं और विवेकी बन करके राग द्वेष न रहे। जो मानव अपने में अनुशासन वृत्ति बन जाता है तो उसे और अनुशासन की विशेष आवश्यकता नही रहती है। आचार्य के चरणों में ही तो प्राणी अनुशासित होता है। उनके आचरणों को अपने में ग्रहण करना, यह देवपूजा कहलाती है।

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है, एक समय श्वेत्ता श्वेतर भारद्वाज मुनि महाराज के यहाँ एक याग होने वाला था देव पूजा होने वाली थी जैसे ही उन्होंने देवताओं का आह्वान किया याग जैसे ही प्रारम्भ हुआ तो नाना ऋषिवर उनके समीप आ पंहुचे। याग के श्वेतकेतु ब्रह्मा थे जब याग होने वाला था तो गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहा कि महाराज! ये क्या कर रहे हो? उन्होंने कहा कि-प्रभु! हम देवपूजा कर रहे हैं, देवताओं को हवि प्रदान कर रहे हैं। वही हवि जब देवताओं को जाती है तो हवि का परमाणुवाद बन करके परमाणु इस द्यौ लोक में परिवर्तित होते रहते हैं। रेवक ऋषि ने कहा कि बहुत प्रियतम, प्रभु! आप याग कर रहे हैं। परन्तु इसका ब्रह्मा कौन है? ब्रह्मा वह है जो ब्रह्म का उद्गीत गाता रहता है, जो ब्रह्म विद्या को अपने में ग्रहण करता रहता है। ब्रह्मा उसे कहते हैं जो अपने में अनुशासित है। अनुशासन में निहित रहने वाला है। उसका यज्ञमान से जो सम्बन्ध है। वह केवल यह है कि मैं वेद का विशुद्ध रूप में उद्गीत गाता रहूँ। जैसे उद्गाता उद्गीत गाते रहते हैं, तो मैं वेदमन्त्रों को समेटता रहता हूँ। वेदमन्त्रों को स्मरण से क्रिया में लाने का प्रयास करता रहता हूँ। तो वह देवपूजा के रूप में महान विज्ञान की प्रतिभा कहलाती है। अह्मब्रह्म वाचा श्वेत श्वेत्तार ने कहा कि-प्रभु! मैं देवपूजा इसीलिए कर रहा हूँ कि वायुमण्डल पवित्र बन जाएं। मैं विज्ञान के मार्ग में जाना चाहता हूँ। विज्ञान की नाना प्रकार कर धाराओं को मैं जानने लगा हूँ। परन्तु मैं याग भी करता हूँ। याग सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके सदैव एक जन्मम् ब्रह्मा, यह मानवीयता की ऊँची धारा है। ऊँचा एक क्रियाकलाप है जिस क्रियाकलाप को अपनाने के पश्चात मानव के जीवन की धारा पवित्र बन जाती है। यागाम् भविते ब्रह्म लोकाम् देखो, यज्ञशाला में यह चार स्थलियां होती हैं- ब्रह्मा, उदगात, अध्वर्यु, यज्ञमान मैंने इससे पूर्व काल में कहा कि यज्ञमान विशेष होता है। यज्ञमान प्रतिष्ठित होता है, वह प्रतिष्ठावादी होता है। यज्ञमान सबसे प्रार्थना करता है निर्वाचन करता है निर्वाचन करके उनके चरणों की वन्दना करता हुआ वह अपनी वाणी को ही नही शाश्वत् जीवन की धारा को ऊँचा बनाना चाहता है वह द्रव्य का स्वामी नही बनना चाहता। वह स्वामी तो है। स्वामीतव तो उसकी आभा में निहित रहता है। यज्ञों के सम्बन्ध में बहुत-सा क्रियाकलाप मुझे स्मरण है, आज केवल यह उच्चारण करना है कि यज्ञशाला में जो ब्रह्मा है, वह ब्रह्मा उद्गीत गाता है।

एक समय जब याग हो रहा था तो मुनिवरों! श्वेत्ता श्वेतर भारद्वाज ने मुनि से यह प्रश्न किया कि महाराज! यह जो याग है यह क्या है? उन्होंने कहा कि-प्रभु! यह याग क्या नही है। वह मौन हो करके बोले कि-प्रभु! उत्तर तो आपका यथार्थ है परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ कि याग की प्रतिभा का जन्म कहाँ पर हुआ है? उन्होंने कहा कि याग की प्रतिभा का जन्म इस ब्रह्माण्ड से हुआ है। परमपिता परमात्मा सृजन करने वाला है, परमात्मा रचयिता है, वह रचयिता होने से याग की प्रतिभा का जन्म हो जाता है। क्योंकि जितना भी शुभ क्रियाकलाप हो रहा है, जितना भी सुकर्म हो रहा है, उस कर्म के गर्भ में याग निहित रहता है। याग का अभिप्रायः केवल यही है कि हमारी वाणी पवित्र हो, हम वेदमन्त्रों का उद्घोष कर सकें, उनको क्रियात्मक रूप दे सकें। देव पूजा के सम्बन्ध में भारद्वाज मुनि का तो यह कथन है, कि सृष्टि के प्रारम्भ में प्रभु ने इस संसार को रचने से पूर्व अपने में उद्गाता, अध्वर्यु बन करके, ब्रह्मा बन करके यज्ञशाला में यज्ञ प्रारम्भ हुआ।

ऋषि कहते हैं कि यह सृष्टि रूपी जो जगत है, यह सर्वत्र याग के रूप में परिणत हो रही है। यह एक

देवपूजा के रूप में परिणत हो रही है। देवताजन तरंगों को ग्रहण करते रहते हैं, उन तरंगों को ग्रहण करके यह प्रकृति अथवा सृष्टि का एक चक्र चलता रहता है। गतिशील होता रहता है, परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में प्रादुर्भाव करते ही इए याग की रचना की और यज्ञशाला की रचना करके स्वयं ब्रह्मा बन गये। इस अन्तरिक्ष के आँगन में वायु उद्गीत गाने लगा। अग्नि प्रचण्ड करके, अपने में ज्ञान रूपी अग्नि का एक उग्र रूप धारण करता हुआ, मुनिवरों! देखो, बुद्धिमान पवित्र बनने की अपने में आकांक्षा कर रहा है। तो आत्मा यज्ञमान बन करके, परमात्मा ब्रह्मा बन करके, जो पंचमहाभूत हैं, यह उद्गाता, अध्वर्यु और पुरोहित बन करके, इस संसार सागर रूपी याग की एक रचना हो गई। ये देव पूजा के रूप में रचना हुई।

बेटा! यहाँ देवताओं की पूजा का अभिप्रायः यह है कि यह जो पंचमहाभूत हैं, यह हमारे देवता हैं, परमात्मा हमारा देवता कहलाता है। मुनिवरों! जीव आत्मा जिस मानव शरीर में प्रवेश करता है। तो परमात्मा का चिन्तन करना, उसके गुणों को अपने में धारण करने का नाम एक याग कहलाता है। जैसे परमपिता परमात्मा नम्र है, तो मानव को भी नम्र रहना है। इससे उसके गुणों को हम अपने में धारण कर रहे हैं। परमात्मा तेजोमयी है, हमें भी तेजोमयी बनना है। परमपिता परमात्मा क्रियाशील है। हमें भी क्रियाशील बनना चाहिए। परमात्मा मौन रहते हैं तो मानव को भी उसी के अनुसार अपने को बरतना चाहिए। वो परमपिता परमात्मा के गुणों को धारण करना ही परमपिता परमात्मा की पूजा करनी है, परमात्मा में रत्त होना है। पूजन का अभिप्रायः मैंने अभी-अभी तुम्हें वर्णन किया है कि उसके सदुपयोग का नामोकरण ही उसकी पूजा कही जाती है। एक मानव कहता है कि हम परमात्मा के अनुकूल अथवा उसकी प्रतिभा को कैसे जान सकते हैं? देखो, इसमें यह उत्तर प्राप्त होते हैं कि परमपिता परमात्मा सर्वत्र रहने वाले हैं। इसीलिए मानव की यह दृष्टि रहनी चाहिए, विचार रहने चाहिएं कि विचारों में संकीर्णता न आ जाए।

मुनिवरों! जैसे माता अपने पुत्र का पालन कर रही है, तो यह पालन में भी ममता को विशेष महत्व न दे करके, वह अपने संकल्प को जब महत्वता देती है। और यह कहती है कि पालना करना ही मेरा कर्तव्य है, पालना करना ही मेरी प्रतिभा कहलाती है। क्योंकि यह बाल्य परमपिता परमात्मा की सम्पदा है। माता जब यह विचारती है कि यह जो मेरा बाल्य है यह तो प्रभु! की सम्पदा है क्योंकि उसने इसकी रचना की है, ऐसी विज्ञानमयी धारा को मेरे प्रभु ने जन्म दिया है, इसके ऊपर मानव विचारने लगता है तो विचारता ही रहता है। अन्त में इस ब्रह्म पिण्ड को ब्रह्माण्ड से समन्वय करा देता है। तो बेटा! यह पिण्ड ऐसा ही विचित्र है, विचार आता है कि परमपिता परमात्मा की उस महानता में रत्त रहती हुई माता अपने प्यारे पुत्र का पालन कर रही है। तो वह एक याग कर रही है, वह देवपूजा कर रही है। वह देवताओं को उस बाल्य को प्रदान कर देती है। क्योंकि देवतव ब्रह्म वाचा, यह जो संसार है यह देवताओं की पुरी है। देवता बना करके माता देवतव को प्राप्त करा देती है। क्योंकि यह ब्रह्म का जगत है तो ब्रह्म को प्राप्त करा देती है। देवताओं का हूत करा-करा करके मुनिवरों! बाल्य को ऊँचा बना करके ब्रह्मवेत्ता बना देती है। तो यह याग कर रही है। तो यह याग एक देवपूजा के रूप में माना गया है।

बेटा! भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का चयन हमारे वैदिक साहित्य में आता रहता है। मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में कहा है कि वेदमन्त्रों में ऐसे उद्गीत गाए जाते हैं। जिनके गाने से मेघ मण्डलों की उत्पति हो जाती है। सुन्दर-सुन्दर साकल्य को एकत्रित करके, हम जब याग करते हैं हवि देवताओं को प्रदान करते हैं, और भेदन करती हुई अग्नि अन्तरिक्ष में उसे छा देती है। तो धीमी-धीमी वृष्टि प्रारम्भ हो जाती है। वह वृष्टि हमारे मूल का एक कारण बनती है। वही प्रभु का आधावन बन करके पृथ्वी को व्यंजनों वाली बना देती है। तो विचार विनिमय क्या मेरे पुत्रों! कि देव याग हो रहा है इसी प्रकार देवतव के द्वारा अब हमें उन गुणों को धारण करना है। जो देवता में निहित हैं

क्योंकि तभी तो याग बनेगा, अन्यथा याग नही बन सकेगा। अग्निहोत्र या अग्नि में साकल्य प्रदान करने से ही हम याज्ञिक नही बन जाते हैं। याज्ञिक उस काल में बनते हैं कि जैसे अग्नि ऊर्ध्वा में गति करती है तो मानव को अपने विचारों में पुरूषार्थ शक्ति आ जानी चाहिए। अग्नि सुगन्धि देती है। तो मानव के जीवन में सुगन्धि आनी चाहिए। सुगन्ध को पान करके हिंसक प्राणी भी मुनिवरों! सुगन्धि में परिणत हो जाता है।

बेटा! बहुत पुरातन काल में एक समय मेरे पूज्यपाद गुरुव बोले कि हे ब्रह्मचारी! आओ, आज भ्रमण कर आएं मैं और मेरे पूज्यपाद गुरुदेव भ्रमण करते-करते कुक्कुट मुनि महाराज के द्वार पर पंहुचे तो उन्होंने नाना प्रकार के कन्द मूल ले करके स्वागत किया। महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज अपने में याज्ञिक बने हुए थे। गुरुदेव ने कहा कि-प्रभु! आप क्रियाकलाप करते हैं? उन्होंने कहा सम्भूति ब्रह्म लोकाम् वेदाः अमृताम् देवाम् ब्रह्मयागाम् देव पूजम् ब्रह्म वृतो देवाः वेद के आचार्य कुक्कुट मुनि ने कहा कि-प्रभु! मैं इस समय देव याग कर रहा हूँ। मैं देवताओं का आह्वान करता रहता हूँ। गुरुदेव ने कहा कि-प्रभु! आप देवताओं का गान गाईए। वेदमन्त्रों से देवताओं का जब जटा पाठ में गान गाने लगे तो अपनी-अपनी गुफाओं को त्याग करके कुछ महात्मा, महान ऋषि उनके समीप आ गये। परन्तु जब उन्होंने और उज्ज्वलता में देवतव का गान गाया और वह याग करने लगे सुगन्धि करने लगे, अग्नि के साकल्य प्रदान करने लगे तो देखो, इतने में मृगराज, सिंहराज भी उनके समीप विद्यमान हो गये। सर्पराज, सिंहराज भी उस सुगन्धि को ग्रहण करते हैं। क्योंकि परमात्मा हिंसक नही हैं, इसीलिए देवता हिंसक नही हैं। इसीलिए मानव को अपनी हीनता को त्याग करके देवताओं के गुणों को अपने में धारण करना है।

हम याज्ञिक उस काल में बनेंगें जब हमारा हृदय निर्भयता में परिणत हो जाए, हमारे हृदय में संकोच न रहे, प्राणी-प्राणी से मिलन करके हम अपनी आभा को उसमें परिणत कर दें। हमने जीवन मे जिस सुगन्धि को उत्पन्न किया है। उस सुगन्धि को हम दूसरों को प्रदान करते रहे। निर्भयता की सुगन्धि मानवीयता में पवित्र होती है। साकल्य जैसे अग्नि में परिणत करने के पश्चात सुगन्धि देता है, इसी प्रकार मानव अपने अन्तर्हृदय में जो याग करने वाला है। उस याग में इतनी सुगन्धि होनी चाहिए। कि सर्पराज उसके समीप आ जाए। तो उसे किसी प्रकार का संकोच न रहे।

मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! महाराजा शिव माता पार्वती के सहित जब प्रातःकालीन याग करते थे तो हिमालय की कन्दराओं से सर्पराज आ करके उनके समीप विराजते थे। उसका परिणाम क्या कि जब मुनिवरों! परमपिता परमात्मा के व्यापकवाद में मानव रत्त हो जाता है। तो वह देवताओं की पूजा करने लगता है हमें यह विचारना है यह चिन्तन करना है कि जैसे हमारे में तेजोमयी है, ऐसे ही देखो, दूसरे हिंसक प्राणियों में भी तेजोमयी है। उसमें जड़वत् अपना क्रियाकलाप कर रहा है, तो हममें भी कर रहा है।

यज्ञशाला में विद्यमान हो करे अमृत कह करके यज्ञमान जल का पान करता है, वह अमृत जब बनेगा जबकि हमारे हृदयों में हिंसा की प्रवृत्ति नही रहेगी। अहिंसामय हमारे विचार बन जाएंगें। तो उसी काल में देखो, वह जल अमृत बन सकता है। अग्नि की तेजोमयी कहते हैं। वह तेजोमयी उस काल में बनेगी जब हमारे तेज को श्रवण करके हमारी विचारधारा से ऊँची रूप सुगन्धि को ले करके हिंसक प्राणी भी मौन हो जाता है। इसी प्रकार जैसे पृथ्वी के कणों का एक दूसरे में सन्निधान हो रहा है, सन्निधान मात्र से क्रियाकलाप हो रहा है। परन्तु देखो, जब मानव अपने में रत्त हो करके, अपने में देवतव बन करके जब वह पृथ्वी के आँगन में पृथ्वी का उद्गीत गाता है। पृथ्वी के विचारों की सुगन्धि देता है। तो उस सुगन्धि को प्राणीमात्र पान करता है। इसी प्रकार आपोमयी अमृत है। और पृथ्वी ममतव को धारण करने वाली है। वह अग्नि प्रकाश को तेजोमयी बनाने वाली है। मुनिवरों! कौन-सी वायु प्राणवर्धक कहलाती है। वह प्राण कहाँ अपना क्रियाकलाप नही कर रहा है। वह प्राण ही तो देवता है। वह

वायु के रूप में निहित रहने वाला है। वायु अपने में गति कर रही है, प्राण अपने में संचार कर रहा है। वह प्रत्येक प्राणी के हृदय में विद्यमान है, अवकाश प्रत्येक प्राणी में विद्यमान है।

जब इस प्रकार का हमारे विचारों में व्यापकवाद आ जाता है। तो हम देव पूजा में रत्त हो जाते हैं। जब इस प्रकार देवताओं के गुणों को अपने में धारण करते हैं, तो वह पूजा कहलाती है। बेटा! पूजा का अभिप्रायः तुमने जान लिया होगा। जब हमारी पूजा सिद्ध हो जाती है। तो हम साधक बन जाते हैं। हम ऋषि और मुनि बन जाते हैं। हम सब प्राणियों को साकल्यों की सुगन्धि दे करके सार्थक बन जाते हैं, हमारे जीवन में एक महानता प्रतिभा जागरूक हो जाती है। जब प्रत्येक प्राणी मात्र एक प्राण सूत्र पिरोया हुआ तेजोमयी अग्नि के तेजों को अपने में ग्रहण कर रहा है। आपो उस प्रकार अमृतमयी बनी हुई है, इसी प्रकार गुरूतव सर्वत्र में विद्यमान है। मुनिवरों! उसके पश्चात मानव, मानव को संकोच कैसे बना रहता है? यह मेरे विचार में अब तक नही आया है, तो बेटा! महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज इन विचारों से याग कर रहे थे, इन विचारो को साकल्य अग्नि में प्रदान कर रहे थे।

इन विचारों को जब मानव अपनी अन्तरात्मा में दृढ़ बना लेता है, तो हिंसक, हिंसक नही रहता, वह प्राणों की वन्दना में वह याग में पूजक बन कर पूजा के रूपों में अपने को ही स्वीकार करता है। वह अपने को पूजक स्वीकार करके परमात्मा के समीप चला जाता है मुनिवरों! वह वायु को भिन्न-भिन्न रूपों में दृष्टिपात करता है, अग्नि को भिन्न-भिन्न रूपों में दृष्टिपात करता है वही जब है जो अग्नि के तेजोमयी स्वरूप से सन्निधान करके देखो, उसके रूप को धारण कर लेता है, तो वही अग्नि है। जब यह उग्र रूप को धारण करके वह शान्त हो करके, उसके गर्भ में निहित हो जाती है। यह वायु वेग मैं विशेषता से गति करता है, उग्र रूप धारण करता है। तो उसमें प्राण सत्ता का उद्घोष होता है, और वह उतेजित हो करके जल को कहीं का कहीं पंहुचा देती है, पार्थिव परमाणुओं को कहीं का कहीं पंहुचा देता है। यह प्रभु कैसा अनुपम यज्ञमयी संसार हैं, इसमें मुनिवरों! प्रत्येक मानव याज्ञिक बनना चाहता है।

सृष्टि के प्रारम्भ में आचार्यों ने मानव को कहा है कि हे मानव! तू संसार में प्रभु को स्मरण करना चाहता है जहाँ तू संसार से नित्यप्रति कार्यों में रत्त रह करके अपनी मानवीयता में परिणत रहता है तो तू अपने प्रभु का स्मरण करता हुआ, परमात्मा की सृष्टि को विचारता हुआ, इस यज्ञशाला में परितण हो करके, तू अपने में साकल्य प्रदान कर। जैसे साकल्य का विभाजन हो जाता है ऐसे ही तेरी प्रवृत्तियों का विभाजन हो जाना चाहिए। जैसे अग्नि प्रत्येक देवता को सूक्ष्म सुगन्धि पंहुचा देती है, वैसे ही मेरे मन की प्रवृत्ति आत्मा के सन्निधान मात्र से देवतव सूक्ष्मता को प्राप्त होती चली जाती है। सूक्ष्म धारा बन करके तू उस परमपिता परमात्मा के इस सृष्टिमयी जगत को अपने में विचारने वाला बन। संसार का प्रत्येक कार्य इसी प्रकार होता रहता है। परन्तु मानव अपने संसार को क्रियाकलापों से पूर्व परमपिता परमात्मा के क्रियाकलाप में परिणत हो करके, देवताओं की पूजा में परिणत हो करके, उसके पश्चात वह संसार में प्रत्येक वस्तु को प्रभु की स्वीकार करता है, और उसको उपभोग में लाना जब प्रारम्भ करता है। तो मानव का जीवन चरित्र पवित्र बन जाता है।

मेरे प्यारे! विचार मैं क्या दे रहा था उड़ान उड़ता हुआ बेटा! बहुत दूरी चला गया हूँ, उड़ान उड़ता हुआ देवताओं के सूक्ष्मतम रहस्तम में चला गया हूँ। व्यापकता की आभा में रत्त हो करके महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज इस प्रकार का अन्वेषण करते रहते थें। उन्होंने कहा कि-प्रभु! मैं देव पूजा नित्यप्रति ही सदैव करता रहता हूँ। देवताओं की पूजा का अभिप्रायः यह है कि अपने में उनके गुणों को धारण करें। उन गुणों को धारण करने का नाम ही देवपूजा कहलाती है। विचारवेत्ता ने अपने वाक्यों को प्रगट करते हुए कहा कि सम्भवा लोकाम् नमः का ब्रहे वाचप्रह सृष्टि देवाः वह न्यौदा में मन्त्रों का उद्गीत गाता हुआ अपने में विचारता रहता है कि मैं परमात्मा की

प्रतिभा में रत्त हो गया हूँ। देव पूजा करके मेरा जीवन ऊर्ध्वा में गति कर गया है। परमात्मा के गुणों को धारण करता हुआ मैं परमात्मा की उस महान पगडण्डी को ग्रहण करने वाला हूँ, जिस पगडण्डी को ग्रहण करके मानव के जीवन की प्रतिभा ऊँची बन जाती है।

इस संसार के महान वैभव में आ करके मानव की अपने में वैभव की पूर्ति नही होती तो मानव नाना प्रकार के उस अग्नि को एक वृत रूप बना करके, चिन्ता के क्षेत्रों में अपनी आयु को सूक्ष्म बनाना प्रारम्भ कर देता है। आयु को कौन सूक्ष्म बनाता है? जिसके मन और प्राण दोनों याग में नही रहते। जब उन दोनों में विकृतता आ जाती है। संकीर्णवाद आ जाता है तो वह अशुद्ध चिन्तन करता हुआ, परमात्मा की सृष्टि को न विचार करके विशेष चिन्तन को अपना विषय बना लेता है। उसका अन्तःकरण उसकी प्रतिभा को दमन करता हुआ, मन उसकी आभा में रत्त हो करके जिसका उस संसार में कोई अस्तित्व नही होता है, उसकी आभा में उसके अन्तर्गत वह भ्रमण करता रहता है। जहाँ उसे यज्ञशाला की अग्नि को अपने में अग्नि बनाना था वहाँ जिस वस्तु का निर्माण हुआ है, मानव उसके अन्तर्गत भ्रमण करके अपने को अपनी आयु को सूक्ष्म बनाता रहता है। यह विचार प्रियता में नही होते, इन विचारों मां शाश्वतता नही होती, सत्य नही होता। इसीलिए हमारा विचार यह कहता है कि मानव को अपनी आयु को दीर्घ बनाना है।

परमात्मा के दिए हुए विचार वेदमन्त्रों के द्वारा जो भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों की प्रतिभा अथवा याग का वर्णन है, उनमें देवपूजा ही एक विशेष पूजा कहलाती है इस देवपूजा के सम्बन्ध में मानव उन देवताओं में भ्रमण करता है जो देवता वास्तव में नही होते। हम उन देवताओं के समीप पंहुचे, वास्तव में बाह्य जगत और आन्तरिक जगत, दोनों में अपना क्रियाकलाप कर रहे हैं, उन देवताओं के समीप जा करके हम यज्ञ की परिक्रमा में रत्त हो करके याग को अपने जीवन में धारण करें। जो धारण कर लेता, वही परिक्रमा करता है। विचार आता रहता है हम जब अपने में बहुत पुरातन कालों में वार्त्ताएं स्मरण करने लगती हैं ऋषि-मुनियों का विचार जब अपने में चिन्तन करने लगते हैं, तो मानव को सृष्टि के रचयिता का ध्यान आता है। ऋषि-मुनियों ने मानव के जीवन के लिए ऐसी भूमिका बनाई है कि तुम्हारा जीवन इस क्रियाकलाप में गतिशील होता रहे, जिससे मानव अन्धकार में न चला जाएं। मानव रूढ़ि में न चला जाए। रूढ़ि किसे कहते हैं जो वस्तु का विनाश हो गया या विनाश होने वाला है। उसमें हम सदैव रत्त रहें और जो सदैव रत्त रहने वाला चिन्तन है उसको स्वीकार न करें, उसका नाम रूढ़ि कहलाता है। रूढ़ि हम उसे कहते हैं, जो हमारी अन्तरात्मा तो स्वीकार कर नही रही है, परन्तु बाह्य जगत में, मानव प्रभाव से अपनी इस वसुन्धरा के रूप को एक कुरूप धारणा करा देती है, उसी का नाम रूढ़ि कहलाता है।

रूढ़ि कहते हैं जो न हो, जैसे मृत्यु है, मृत्यु में सदैव चिन्तित रहना, वह रूढ़ि है क्योंकि मृत्यु अपने में मृत्यु नही होती है। मृत्यु केवल एक ऐसा शब्द है कि अज्ञानता से इस शब्द की उत्पति हुई है, उसको हम सदैव स्वीकार करते रहे, उसको अपने में लाते रहे, तो मानव उसमें आयु को सूक्ष्म बना लेता है। विचार यह कहता है कि मृत्यु तो अपने में कोई मृत्यु नही हैं, यह याग करता है कि प्रत्येक साकल्य जब अग्नि में प्रवेश करता है। तो उसके परमाणु जब अग्नि में प्रवेश करते हैं तो वह अग्नि रूप बना लेता है। जब के परमाणु जब अग्नि में ओत-प्रोत रहते हैं, वह जल का रूप बन जाता है, गुरूतव पृथ्वी का रूप बन जाता है इसी प्रकार अन्तरिक्ष अपने रूप में अवकाश रहता है, वायु मानो प्राण अपने में सखा बन करके रत्त रहता है, इसी प्रकार जब अपने में देखो, जलम् व्रहे अपने स्वरूप में यह अपने में ही प्रवेश हो गया, तो जिस मृत्यु का हम चिन्तन करते है, अज्ञान का चिन्तन करते हैं। तो उस अज्ञान में हमें रत्त रहना चाहिए। यदि उसमें रत्त रहता है तो उसका नाम रूढ़ि कहलाता है। चाहे वह धर्म के नामों पर हो चाहे वह राष्ट्र के नामोकरण वाली हो, परन्तु हम उसमें रत्त रहना चाहिए, हमें उससे

ऊर्ध्वा गति में जाना चाहिए। विचारना चाहिए कि हम प्रभु के राष्ट्र में हैं, प्रभु के राष्ट्र में हम याग हम याग देवपूजा करते रहें, हम उसी की पूजा में रत्त रहे।

बेटा! आज मैं विशेष चर्चा तो तुम्हें देने नही आया हूँ, मैं तो केवल परिचय देने के लिए आता रहता हूँ, और परिचय देना हमारा कर्तव्य है। आज मैंने सूक्ष्म यह परिचय दिया है और वह परिचय क्या है कि हम अपने विचारों को इतने ऊर्ध्वा में ले जाएं, इतनी देवपूजा में अपने को रत्त कर दें। जिससे हमारे अन्तःकरण में जो यह भिन्न-भिन्न प्रकार के चित्तों की उत्पतियां और चित्त में नाना प्रकार के जो संस्कार हैं, उनका भी हम साक्षात्कार कर सके। जैसे हम याग में, देव याग में ही तो परिणत होते रहते हैं। ऋषि-मुनि जब साकल्य रूपी याग को समाप्त करके जब वह अपने हृदय रूपी सूक्ष्म साकल्यों को एकत्रित करते हैं, पार्थिव तत्त्वों को ले करके उन परमाणुओं का साकल्य बना करके प्राण मानो श्रद्धामयी घृत को उसमें परिणत कर देते हैं। तो साधक सर्वत्र अज्ञानता से ज्ञान में प्रवेश कर जाता है। यह योगियों का एक अमूल्य विषय बन जाता है। मुनिवरों! वह देव पूजा कहाँ से कहाँ चली गई। विचार ब्रह्म वाचो हमने अग्नि में साकल्य प्रदान किया, आगे गमन किया तो उसको चिन्तन में लाया गया। आगे विषय बनातो उसको चिन्तन मैं ला करके साकल्य एकत्रित करके ज्ञान रूपी जो अग्नि है, उसमें प्रवेश करके समाहित हो जाना चाहिए। उसमें मौन रह करके कि-प्रभु! का जगत अनुभव वृत्ति है क्योंकि परमात्मा सर्वत्रता को धारा कर रहा है ऐसे हमें ज्ञान और विवेक के क्षेत्र में जा करके परमात्मा की उस महान आभा में रत्त हो करके, मोक्ष की पगडण्डी ग्रहण करके हम परमात्मा में प्राप्त हो जाएं।

आज का विचार क्या कह रहा है कि परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव का चिन्तन करते हुए उसकी महानता, उसके गुणों को अपने में धारण करते हुए हमें इस संसार सागर से पार हो जाना चाहिए। समय मिलेगा तो जब यागों का विषय चल ही रहा है तो हम पितर याग की चर्चा करेंगें कि पितर याग क्या होता है। आज हम देवपूजा के सम्बन्ध में मुनिवरों! चिन्तन करते-करते अन्तिम छोर पर चले गये। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

४ पितृ याग-१ ०४ ०८ १९८५

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव जो संसार का नियन्ता हैं अथवा निर्माण करने वाला हैं मानो उस अपने देव की महिमा का हम गुणगान गाते रहते हैं प्रायः हम उस प्रभु की महिमा और उसकी महानता का प्रत्येक वेदमन्त्र, मानो उद्गीत गाता रहता है, और यह वर्णन करता रहता है, कि वे परमपिता परमात्मा कितना अनुपम है। मानो कितना वह श्रोत्रोमयी कहलाता हैं जब भी मानव मधुर रूपों में गान गाने लगता है, तो उसका अन्तरात्मा अथवा उसका अन्तर्हृदय पवित्र होना प्रारम्भ हो जाता हैं क्योंकि वेद हमारा अन्तःकरणीय प्रकाश कहलाता हैं नेत्रों का देवता बन करके, प्रातःकाल का वह सूर्य मानो वह नेत्रों की ज्योति को उद्बुद्ध करता हैं, अथवा उसका सहायक बनता हैं, परन्तु जो वैदिक सूर्य है, वेद रूपी जो सूर्य है वह हमारे अन्तःकरण को पवित्र बनाता है। इसीलिए मानव को प्रातःकालीन अपने प्रभु का गुणगान गाना चाहिए। क्योंकि वह हमारा पितर कहलाता है, हमारे यहाँ पितरों की व्याख्या कई काल में, भिन्न-भिन्न रूपों से हम उसका वर्णन करते रहते हैं। परन्तु जब विचारते हैं कि वे परमपिता परमात्मा पितर कहलाता है, वह अन्तरात्मा के हृदय स्थली में, वह मेरा देव विद्यमान है, मेरे प्यारे! वह, नाना रूपों में हमारे समीप अथवा प्रत्येक मानव के समीप, उसकी प्रतिभा निहित रहती है संसार के किसी भी कण में चले जाओ किसी भी विज्ञानवेत्ता के समीप चले जाओ, परन्तु जब विज्ञान के युग में प्रवेश करेंगें, तो वे परमपिता परमात्मा उस विज्ञान के मूल में दृष्टिपात आयेगा मानो हम अणु और परमाणुओं के क्षेत्र में चले जाते हैं अणु और परमाणुओं के क्षेत्र में भी मानो उस प्रभु की महानता हमें दृष्टिपात आती है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा, वह हमारा पितर कहलाता हैं। पितर वही होता है, जो रक्षा करने वाला हो। मानो वह पितर वह कहलाता है, जो हमे देता है, क्योंकि पितर का अभिप्रायः है, देने वाला है।

हमारे यहाँ बेटा! बहुत पुरातन काल हुआ, ऋषि-मुनियों का एक समूह विद्यमान हुआ जो महर्षि प्रवाहण और शिलभ और दालभ्य इन तीनों ऋषियों की अध्यक्षता में, एक मानो समूह ऋषि-मुनियों का विद्यमान हो करके यह विचारने लगे, सबसे प्रथम तो बेटा! देव पूजन किया और देव पूजा के पश्चात वह विचारने लगे कि यह पितर कौन हैं? तो पितरों के ऊपर बेटा! विवेचना होने लगी जिसमें महर्षि लोमश, महर्षि वशिष्ठ, महर्षि कागभुषुण्ड जी, और महर्षि जमदग्नि, महर्षि विश्वामित्र और महर्षि पिप्पलाद महर्षि रेणकेतु, महर्षि सोमकेतु मुनि महाराज, महर्षि भारद्वाज, महर्षि श्वेतकेतु और गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज और महर्षि स्वाति और महर्षि श्वेताश्वेतर और सोम वृत्तिका ब्रह्मचारियों में बेटा! ब्रह्मचारी कवन्धि ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी यज्ञदता, और ब्रह्मचारी रोहिणी केतु बेटा! आदि ब्रह्मवेत्ताओं का एक समाज एकत्रित हुआ, तो उसमें यह विचार होने लगा क्योंकि जब वेदों में मन्त्र आते हैं, न्यौदा में मन्त्रों का जब अध्ययन होने लगा तो विचार होने लगा कि यह पितर कौन है? मानो हमने तो जान लिए हैं, देवता कौन हैं? उनकी यदि हम विवेचना करने लगते हैं तो बड़ा एक विशाल जगत हमारे समीप आता है। तो हम पितरों के सम्बन्ध में जानना चाहते हैं, पितर कौन हैं? तो बेटा! यह प्रसंग, महर्षि प्रवाहण ने ऋषि मुनियों से यह प्रश्न किया? क्या महाराज! हे देव! हे ब्रह्मवेत्ताओं! यह मेरा बड़ा सौभाग्य है कि आज हम ब्रह्मवेत्ताओं के समूह में विद्यमान हो करके जहाँ गान गाने वाला गाता रहता है और उसके गान में मानो देखो, कितना माधुर्यपन हैं, वह एक मानो एक प्राणक ध्वनि का ध्वनित होना, हमारे जीवन में वह स्वाभाविक रूप बन जाता हैं। परन्तु इसीलिए

हम सब विद्यमान हुए हैं, क्या हम कुछ विचार-विनिमय करें, और आगे आने वाला जो भविष्य वाला समाज है उसे कुछ दे जाएं। क्योंकि हम सब तपस्वी हैं, अनुष्ठानवेत्ता है, अनुष्ठान करने वाले, आयु को दीर्घ बनाने वाले हैं। क्योंकि ब्रह्मवेत्ता हैं, ब्रह्म की आभा में उड़ान में सदैव रत्त रहते हैं। तो जानना चाहतें कि यह पितर कौन हैं? तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि तो यह उत्तर प्रश्न करके मौन हो गएं परन्तु महर्षि कागभुषुण्ड जी उपस्थित हुए, और उन्होंने कहा कि मेरे विचार में तो यह आता है कि यह जो पितर हैं जो भी हमें देते हैं वही पितर कहलाते हैं। परन्तु देखो, यह विचार हुआ कि जो भी हमें देते हैं वह पितर है। तो मुनिवरों! देखो, इतने में ही, पिप्लाद मुनि ने कहा क्या ऋषिवर! इसकी विवेचना क्या है? हमे देने वाला तो सर्वत्र देते हैं, हम जब विज्ञान के युग में क्योंकि विज्ञान में हम, अपने को ले जाते हैं, तो यह संसार सर्वत्र ही हमें पितर दृष्टिपात आता हैं। क्योंकि वह हमें देते हैं, देने का अभिप्रायः यह है, कि हमारे मानव शरीर की जो रचना है, वह रचना ऐसी है, कि उसका ब्रह्माण्ड से समन्वय रहता हैं, और यदि हम अनुसन्धान की दृष्टि से, हम उसके गर्भ में प्रवेश करते हैं, तो मानो जितना भी लोक-लोकान्तरवाद हैं, वह सर्वत्र हमें कुछ ना कुछ देते हैं मानो देखो, यह वाक् आया कि वह देते हैं तो ऋषियों ने कहा कि भगवन! इसी तो पिप्लाद मुनि ने पुनः यह कहा कि एक समय मैं मानो देखो, मेरे हृदय में यह विवेचना आई, कि मैं माता के गर्भस्थल में, जो शिशु होता हैं, उस शिशु के सम्बन्ध में विचारा जाएं क्या उसका कौन-कौन पितर है? मानो माता के गर्भस्थल में एक शिशु है, और उसका कौन पितर है, यह जानने की इच्छा ऋषि-मुनियों के हृदयों में होती हैं, मानो देखो, उन्होंने कहा कि हम इस सम्बन्ध में, बहुत-सा विचार हमारे समीप आता रहता है। मानो देखो, प्रत्येक माह में प्रत्येक लोक-लोकान्तरों की अनुपम आवश्यकता के अनुसार, उसमें धाराएं प्रवेश होती रही हैं। मेरे प्यारे! देखो, धाराओं के रूपों में वर्णन करते हुए कहा, कि माता के गर्भस्थल में, जब शिशु मानो देखो, अष्ट माह में होता है तो वह एक मण्डल मानो दो मण्डल कहलाते हैं जिसको हमारे यहां वशिष्ठ और अरूणधती कहते हैं, उन दोनों मण्डलों की धीमी-धीमी छाया माता के गर्भ पर आती हैं। माता के गर्भ में क्योंकि वहाँ उसे प्रकाश की निवृत्ति और प्रकाश की आभा उसे प्राप्त होती हैं। तो विचारने से प्रतीत हुआ, क्या वह उस काल में मानो उसके पितर कहलाते हैं। तो मानो देखो, पितरों की विवेचना, मेरे से जब पंहुचे तो पिप्लाद जी ने कहा क्या, हम तो केवल यह स्वीकार करते हैं, क्या माता-पिता हैं। माता-पिता सन्निधान मात्र से ही मानो शिशु का प्रवेश हुआ और शिशु के प्रवेश होते ही मानो देखो, माता-पिता वह पितर कहलाए मानो देखो, हमारा प्रसंग यह है क्या पितर याग करना है, वह पितर याग कौन-सा होता हैं? परन्तु यह तो सर्वत्र विचार है, क्या मानो देखो, मानो देखो, प्रत्येक लोक-लोकान्तरों की जो छाया आती है, और मानव के तन्तुओं का निर्माण हो रहा हैं, मानव के तन्तुओं में जागरूकता आती है, मानो देखो, वह अपने में एक विद्यार्थी बन करके ही विचार-विनिमय करता रहता हैं। परन्तु देखो, विचार यह कि माता-पिता के सन्निधान मात्र से ही रचना की प्रतिभा का जन्म हुआ है। परन्तु यह कैसे विचारा जाएं कि यह उनके ऊपर अन्वेषण मानो होना बहुत अनिवार्य है।

तो मेरे पुत्रों! देखो, इसमें महर्षि लोमश मुनि ने कहा कि भई! मेरे विचार में तो यह आता है, कि यह जो लौकिक माता-पिता हमारे दो प्रकार के माता-पिता कहलाए जाते हैं हमारे दो प्रकार के पितर कहलाते हैं। मानो एक पितर जागरूक में, चैतन्यता में रहता है, एक मानो देखो, जड़वत में रहता हैं। क्योंकि परमपिता परमात्मा ने जो सृष्टि का पिता है, उस सृष्टि के पिता ने, इस मानव शरीर का जब निर्माण किया, तो निर्माण जब किया तो निर्माणवेत्ता ने इस प्रकार का निर्णय किया हैं क्या इस मानव शरीर को सर्वत्र ब्रह्माण्ड से कटिबद्ध कर दिया। मानो उसी की आभा में नियुक्त कर दिया है। तो ऐसा जब विचार आया, तो मुनिवरों! देखो, महर्षि लोमश मुनि ने कहा तो मेरे विचार में तो यह आ रहा हैं, क्या यह जो सर्वत्र ब्रह्माण्ड है, ये सब मानव के पितर के रूप में विद्यमान हैं,

किसी न किसी रूप में, वह पितरों का क्रियाकलाप करता रहता है। परन्तु पितर का अभिप्रायः केवल एक ही है जो रक्षा करने वाला हैं, वह रक्षक कहलाता हैं तो हम लौकितता में पंहुचे, लौकितता में जब हम प्रवेश करते हैं, तो हमें माता इसीलिए पितर कहलाती है क्योंकि उसके गर्भस्थल में, विद्यमान रहता है, शिशु, परन्तु वह जो पिता है बाह्य, वह पितर इसीलिए कहलाता है क्योंकि उसके सन्निधान मात्र से, जैसे परमपिता परमात्मा के सन्निधान मात्र से ही यह ब्रह्माण्ड अपनी प्रतिक्रियाओं में रत्त हो जाता है, इसी प्रकार सन्निधान मात्र से ही मानो देखो, शिशु में अप्रतों का उदय हो जाता हैं तो वह जो उदय हुआ है, तो इसीलिए वह बाह्य जगत में वह पितर कहलाता है। परन्तु आगे हम जाते हैं, तो माता-पिता के संरक्षण में, माता-पिता जब वह पितर क्यों कहलाती है, पितर का अभिप्रायः यह है, जो रक्षा करने वाला हो, मानो देखो, माता रक्षा कर रही है, माता रक्षा ब्रहे बाल्यकाल में माता अपने गर्भ से ले करके और मुनिवरों! देखो, पांच वर्ष की आयु तक, बाल्य को ऊँचा बना देती है, जब मैं माताओं के समीप पंहुचता हूँ, तो ऐसा मुझे प्रतीत होता है, कि माता जो गम्भीर होती हैं जो माता यह चाहती है कि मैं पितर हूँ मेरा मानो मुझे रक्षा करना बहुत अनिवार्य है तो मुनिवरों! देखो, माता केवल अंन्नों से ही रक्षा नही करती वह अपने विचारों की जो रक्षा वह सबसे ऊर्ध्वा में रक्षा कहलाती है।

मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि लोमश मुनि ने यह कहा कि मैं जब माता के आँगन में, जब क्रीड़ा करता था, तो माता मुझे ब्रह्म ज्ञान की, मानो देखो, आभा में परिणत कराती रहती मानो देखो, मैंने ऐसा श्रवण किया है, कि जब माता की लोरियां मानो लोरियां तो मुझे स्मरण नही हैं, परन्तु देखो, उसके पश्चात काल में माता अपने आँगन में प्रवेश कराती है, भोज्य कराती रहती है, तन्दुलों का भोज्य करा करके, गौ घृत के द्वारा प्रायः मुझे जब अन्नाद का प्रदान किया तो कहती थी कि यह जो प्रथम मानो जो ग्रास हैं, हे बाल्य! वह तेरे ब्रह्म ज्ञान का है तू ब्रह्म ज्ञानी बनना। परन्तु द्वितीय जो ग्रास प्रदान किया वह प्राण कि लिए किया है। तू प्राण को जानने वाला बन, मानो तृतीय जो उन्होंने ग्रास का प्रदान कराया तो यह कहा कि ब्रहे मानो वृत्ति तेरा जो मन है वह पवित्र हो जाए तो मानो देखो, माता तीन ग्रास दे करके यह कहती है कि बालक तू मानो देखो, तू ब्रह्मवेत्ता बन, प्राण की प्रतिक्रिया को जान और देखो, यह जो मन है इसकी आभा को ऊर्ध्वा में ला। तो मुनिवरों! देखो, यह विचार आया, कि माता ने देखो, बाल्य को अपने आँगन में ही, उसे क्या बनाना चाहती है, वह मेरी प्यारी मां, तो मानो देखो, वह माता भी है, पितर भी है, पितर मानं ब्रहे वह क्या चाहता है, कि मेरे द्वार से उत्पन्न होने वाला ब्रह्मचारी मानो ब्रह्मवेत्ता बन जाएं प्राणों का निदान करने लगे, और यह जो मन प्रकृति का तन्तु हैं, जो मन मानो इन तीनों रूपों में यह जो मन है यह अन्न के रूप में विद्यमान हैं, बेटा! ऋषि-मुनियों ने ऐसा माना हैं। महर्षि लोमश मुनि का यह कथन रहा हैं, क्या यह जो मन है मानो देखो, यह अन्नाद में निहित रहता हैं, इसीलिए विचारा कि मानव समाज को ऊँचा बनाने के लिए, हमें पितर यागी बनने के लिए, हमें मानो देखो, अन्न को पवित्र बनाना है अन्न कैसे पवित्र होगा मानो देखो, माता की भावना से अन्न पवित्र होगा और उस अन्न को मानो पान किया जाता है तो वह जब पान किया जाता है तो उससे मन में जो तरंगें उत्पन्न होती हैं, उन तरंगों का जन्म होता है, और वही क्योंकि मन तरंगें, मन से गुथी हुई होती हैं और वह मन से गुथी होने से मानो वही तरंगों से, मानव के जीवन की धारा का प्रारम्भ होता हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, यह बाह्य जगत में, एक माता पितर कहलाती हैं, मुनिवरों! देखो, माता यह चाहती है कि मेरे गर्भ से, ऊर्ध्वा में मानो देखो, एक राजा, एक राजकुमार का जन्म हो, जो राष्ट्र को ऊँचा बनाने वाला हो, अपने को राष्ट्रीयता में मानो अनुशासन में लाने वाला हो, तो माता उसी प्रकार के विचारों को प्रदान कर देती है। परन्तु देखो, माता ब्रहे मेरे प्यारे! देखो, महर्षि लोमश मुनि के अपने जीवन की गाथाएं प्रगट करते हुए उन्होंने कहा

कि माता ने मुझे ब्रह्मवेत्ता की शिक्षा दी है, और यह कहा कि ब्रह्म वृत्ति ब्रहे क्योंकि ब्रह्म को जानने वाला ही मानो देखो, एक महान बनता है। तो माता ने जब यह कहा तो मुझे व्रत बनाया तो व्रत बना करके मानो मेरे हृदय में वह अब मैं जब आज्ञा से माता के आँगन जब मैं माता के कुल में जब प्रवेश कराया तो जो माता ने मुझे शिक्षा प्रदान कर दी थी, मैंने कोई उसी वेद के अंग को अपनाना प्रारम्भ कर दिया। जब मैं उस वेद के अंग को अपनाने लगा, कि ब्रह्म ज्ञान होना चाहिए, वेद कहता क्या है? मानो वेदों में क्या शिक्षा है तो महर्षि लोमश मुनि ने कहा है, इस सम्बन्ध में क्या मानं ब्रहे व्रतं देवाः वेद में तीन प्रकार के विषय होते हैं सबसे प्रथम लौकिक होता है, हमारा लौकिक जीवन ऊँचा होना चाहिए, परन्तु तृतीय हमारा जो जीवन है, वह यौगिक होना चाहिए, परन्तु देखो, वैज्ञानिक होना चाहिए, और तृतीय हमारा यौगिक होना चाहिए। तीन प्रकार की मुनिवरों! देखो, धाराएं प्रत्येक वेदमन्त्र में हमें निहित होती दृष्टिपात होती हैं। मेरे प्यारे! देखो, वेद की प्रतिभा को कौन जानता है? जो मेरे प्यारे! लौकिकवाद को जानता है, वह लौकिक ज्ञान और विज्ञान और लौकिक विज्ञान ही मानो आभाएं उसमें ज्ञान, निहित रहता है परन्तु देखो, द्वितीय उसमें अप्रतं ब्रह्मा विज्ञान क्या है? हम अणु और परमाणुओं को कैसे जानें? मानो देखो, उसमें कितना विज्ञान हैं, उस विज्ञान के सम्बन्ध में क्या कहता है? मानो विज्ञान मानव को कहाँ तक ले जाता है उड़ान उड़ता हुआ, बेटा! देखो, उड़ान उड़ता हुआ वह प्राण की तरंगों में ले जाता है, प्राण मानो मन से गुथा हुआ दृष्टिपात होता है, वह परमाणुओं में ले जाता है परमाणुओं में प्राण को दृष्टिपात करता हैं, प्राण को जब देखो, अणु को जब प्राण के रूप में दृष्टिपात करता है तो वह ऊर्ज्वा बन करके बेटा! देखो, मानो ऊर्ध्वा गति बना देता है।

विचार-विनिमय क्या मेरे पुत्रों! देखो, इस प्रकार का जो विचार होता है, मानो वह वैज्ञानिक होता है कि हम विज्ञान के मार्ग से हो करके हमें जाना हैं, अब वह विज्ञान को अपने अन्तर्हृदय में दृष्टिपात करता है। मेरे प्यारे! देखो, वह जो तरंगें धाराओं का जन्म हो रहा है, वह जो हमारा शब्द विज्ञान है, वह कहाँ जा रहा है? परन्तु शब्द विज्ञान की आभा में जाता है, और उसके पश्चात यह अग्नि के समीप विद्यमान हो करके विचारता है, कि अग्नि की धाराओं पर मेरा शब्द विद्यमान हो गया है, अब वह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वह शब्द ही मानो द्यौ लोक का निर्माण करता है। वह द्यौ लोक उसी से निर्माणित होता है, मेरे प्यारे! देखो, वही शब्द जब मानव देखो, श्रोत्रीय बन गया श्रोत्रीयता को ले करके मानो देखो, वह इन्द्र लोक को प्राप्त हो जाता हैं। वही शब्द है, मेरे प्यारे! देखो, धारागत हो रहा है, वह भूः भुवः स्वः इन मानो तीन धारा हैं जब मानव के अन्तर्हृदय से मानो देखो, उत्पन्न होती है तो बेटा! उनसे भूः भुवः स्वः का निर्माण हो जाता है। क्योंकि लोक को ऊँचा बनाने वाला भी विचार है मुनिवरों! परलोक को ऊँचा बनाने वाला भी विचार हैं, और प्रभु के समीप और प्रभु के मार्ग के उस पगडण्डी को ग्रहण करने वाला भी विचार है। बेटा! मानो देखो, यह तीन प्रकार की धाराएं हमारे समीप आनी प्रारम्भ होती है, परन्तु हम लौकितता में ऊँचे बने कि लोक में हम मानो किस प्रकार हमारा व्यापार होना चाहिए, हम माता के समीप विद्यमान हो करके, वह हमारी पितर है, हमें उसकी सेवा करनी हैं, हमें पितर यागी बनना है, पिता के समीप विद्यमान है, परन्तु देखो, इसके समीप जा करके हमे पितर याग करना है। याग का अभिप्रायः है कि हम पवित्र अन्न मानो उन्हें ग्रहण कराते रहें, और उनके मानो देखो, सेवा में सदैव रत्त रहें, तो यह लौकिकवाद कहलाता है। बेटा! हम पितरों भवा सम्भवा मेरे प्यारे! देखो, यह जो हमारे लौकिक पितर कहलाते हैं। जो मानो देखो, माता वह पितर है, मुनिवरों! देखो, और भी उनके पूर्वज हैं, जो पितर कहलाते हैं। उनके सुन्दर-सुन्दर हम सेवा ब्रहा मानो देखो, उनके आशीर्वाद क्या उनके सु विचारों को जब ग्रहण करेंगें, तो उनके विचारों की शुभ विचारधारा हमारे अन्तःकरण में प्रवेश होगी हमारा अन्तःकरण प्रकाशित हो करके मानो देखो, सु आभा में परिणत

होता रहेगा।

तो मेरे प्यारे! देखो, इसीलिए हमारे आचार्यां ने जब मानो यह कहा करते थे कि मानो ब्रह्मचरिष्यामि तो हे ब्रहा! तो मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मचारी आचार्य को पितर कहता है, वह पितर क्यों है क्योंकि वह लौकिकवाद में ब्रह्मचारी को ले जाते हैं वह मानव को लौकिकवाद में ले जाते हैं लौकिकवाद में सबसे प्रथम लोकाचरण मेरे प्यारे! शिक्षा का जो प्रारम्भ होता हैं। मुनिवरों! वह केवल इसी माध्यम से होता है कि हमारा लौकिकवाद ऊँचा बने मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचारी को आचार्य कहता है, आओ, तुम अपने पूर्वजों की चरणों की वन्दना करो उनके आशीर्वाद की आभा में रत्त हो जाओ। आशीर्वाद क्या है? बेटा! इसके ऊपर भी बेटा! एक बड़ा गम्भीर विचार ऋषि-मुनि देते रहे हैं, आशीर्वाद का अभिप्रायः यह है कि हमारे हृदय में ही नम्रता आ जाएं, आशीर्वाद मानो यह आचार्य कहता है हे ब्रह्मचारी! इसके लिए आशीर्वाद नही है, आशीर्वाद तेरे लिए हैं, और क्योंकि तेरा आशीर्वाद क्या है? क्योंकि तू नम्र बन जाएगा, जब तक तू नम्र नही बनेगा, जब तक शिक्षा में पारायणता को प्राप्त नही होगा। तो मेरे पुत्रों! देखो, वह इसीलिए वह मानो नम्र बनाने के लिए आचार्य चरणों की वन्दना को कहते हैं कि तेरा हृदय नमः होना चाहिए। क्योंकि वह जो परमपिता परमात्मा है, जिसने हमारे इस मानव शरीर की रचना की हैं, वह प्रायः मानो देखो, नम्र है, वह मानो देखो, ब्रहे वाचप्रहा वह सर्वत्रता में विद्यमान है। वह सबका शोधन करने वाला हैं, मानो देखो, वह हमारा पितर कहलाता हैं। तो इसीलिए हे ब्रह्मचारी! तू नम्र बन। माता के समीप जा क्योंकि माता तेरी पितर है, तुझे जो प्रेरणा प्राप्त हुई है, माता से हुई है, माता उसके प्रति तू नम्र हो जा, और नम्र बन करके ही जैसे बाल्यकाल में बालक तेरे लिए माता नम्र बन गई थी। ऐसे तू भी नम्र बन करके मानो देखो, नमः की आभा में रत्त हो जो मेरे प्यारे! सबसे प्रथम ब्रह्मचरिष्यामि देखो, जब हे बालक! तू पितर के द्वार पर जाएगा, जब बाल्यकाल का तेरा तो पितर भी मानो नम्र बन करके ही देखो, शिशु की वन्दना की, तो जब वन्दना में परिणत हो गया था। तो मानो तू उसके प्रति तू स्वतः नम्र बन करके जा मेरे प्यारे! देखो, आचार्यों के समीप तू विद्या ब्रहा मानो विद्या का अध्ययन करने वाला हैं, तू विद्या का अध्ययन करके नम्र बन, क्योंकि यह जो विद्या है यह नम्रता से प्राप्त होती हैं। यह जब तक नम्रता नही आती है, इसको हम प्राप्त नही कर सकते, क्योंकि विद्या हमें देती है क्या क्या देती है? एक धारा को हमने जाना हैं, द्वितीय धारा का जन्म हो गया हैं, तृतीय धारा का जन्म हो गया है, मानो देखो, धारा पर धारा का जन्म होता रहेगा। तेरे मस्तिष्क का विकास हो जाएगा, मानो तेरे मस्तिष्क का जब विकास होगा, तो तेरे मस्तिष्क में मानो उस ब्रह्माण्ड की प्रत्येक वस्तु मानो देखो, तेरे समीप आती रहेगी। तू यह चाहता है यदि इसी वाक्यों को ले करके तू नम्रता को अपने में धारण करता हुआ विद्या विनोदनी को अपने धारण करता हुआ मानो जब तू मानो देखो, तू विज्ञान के युग में पंहुचेगा। जब विज्ञान के युग में पंहुचेगा वेद का दूसरा अंग है कि विज्ञान कहते हैं।

प्राण सूत्र में विज्ञान

विज्ञान किसे कहते हैं? तरंगेंवाद में प्रवेश हो करके मानो देखो, हम एक तरंग को जान करके द्वितीय तरंग में जब प्रवेश हो जाते हैं। उस तरंग का हम निर्माण करते हैं, निर्माणवेत्ताओं ने मानो हमारे यहाँ ऋषि-मुनियों ने जब विज्ञान के ऊपर उड़ाने उड़नी प्रारम्भ की तो बेटा! एक-एक ऋषि ऐसा हुआ है जिन्होंने बेटा! एक-एक आकाश गंगा की पृथ्वियों को गिनने में असमर्थता प्रतीत हुई, मानो देखो, एक आकाश गंगा में सूर्यों की गणना करने में ही मानो देखो, मौन हो गया है, मानो देखो, जब और ऊर्ध्वा में गति पंहुची, जब वह मानो सौर मण्डलों में पंहुचा सौर मण्डलों की गणना करने लगा तो उस समय मानो सीमाबद्ध हो करके शान्त हो गया। जब मानो देखो, आकाश गंगा के ऊपर आकाश गंगाओं में पंहुच गया तो बेटा! अनन्य आकाश गंगाएं दृष्टिपात होने लगी, जब

अनन्त आकाश गंगाएं दृष्टिपात होने लगी, तो वहाँ भी मौन हो गया और यह विचारने लगा कि आकाश गंगा कहाँ मौन हो जाती हैं। तो मानो वह निहारिकाओं में पंहुच गया अवन्तिकाओं में पंहुच गया तो बेटा! देखो, विज्ञान ऐसा सार्थक है जो मानव बेटा! उसमें संलग्न हो जाता हैं, तो गणना करता-करता तो बेटा! देखो, थकित नही होता, वह मानव को जानता रहता है, अन्तिम परिणाम यह होता है एक तरंगें दूसरी तरंगें जब उनको जान करके परमाणुओं में रत्त हो जाता है।

तो मेरे पुत्रों! वेद का ऋषि कहता है आचार्यों ने कहा कि अन्त में वह प्रभु के ब्रह्माण्ड को जानकारी में असमर्थ हो करके मौन हो जाता है, निर्माण भी करता है, निर्माण उतना ही कर सकता है, जितना मानो देखो, मानो सीमा में बद्ध हो करके अपने में रत्त हो जाता है, मौन हो जाता है, मौन हो करके वह कहता है आगे विचारता है यह तो सब प्राणों की प्रतिभा कहलाती है। जो मेरी माता ने प्रथम मानो मुझे एक अन्न का ग्रास मुझे प्रदान किया था और उसमें कहा था कि प्राण ब्रहे व्रतो देवाः मानो तू प्राणों का निरोध कर। मेरे पुत्रों! देखो, वह इस मार्ग से जब वह भौतिक विज्ञान से मानो द्वितीय मार्ग को अपनाता हैं, और वह मार्ग कौन-सा है वह मार्ग उसका मानो देखो, प्राणों का निरोध है, कहीं प्राण को अपान में लाता हैं, कहीं अपान को प्राण में समावेश कर देता है, कहीं व्यान को प्राण में समावेश करके मानो देखो, व्यान और समान को उसमें प्रवेश करता हुआ, मेरे प्यारे! दसों प्राणों का एक समूह बना लेता है, और समूह बना करके वह अपनी मानो देखो, प्रत्येक अभ्योदय में प्रवेश हो करके बेटा! ब्रह्मरन्ध्र में उस प्राण की प्रतिक्रिया को ले जाता है, और विचारता रहता है, योगेश्वर अब वह योगी बन करके विचारता रहता है कि विवेकी बन करके अरे, मैंने अब तक इस ब्रह्माण्ड को जाना था, यह जो मानो मैंने आकाश गंगा निहारिका अब तक जानी है, वह तो सब प्राण सूत्र में ही पिरोई हुई हैं, वह तो उनका तो सूत्र ही प्राण है। मैंने प्राण सूत्र को क्यों नही जाना, तो मेरे प्यारे! देखो, वह जो प्राण सूत्र है उसमें ब्रह्माण्ड को पिरोया हुआ स्वीकार करके अन्त में बेटा! मौन हो करके वह प्रभु की पगडण्डी को प्राप्त करने लगता है। तो मेरे पुत्रों! विचार-विनिमय यह क्या कर रहा था मैं बहुत ऊर्ध्वा में तुम्हारे विचारों को ले गया हूँ, विचार केवल यह चल रहा था कि हमें पितर याग करना है, हमारे पितर कौन-कौन हैं? तो मुनिवरों! देखो, माता की भावना कितनी विचित्र है, बेटा! वह कैसी मेरी पितर है, जो मानो देखो, अपने ब्रह्मचारी को चाहती है। अपने बाल्य गर्भ से उत्पन्न होने वाले पुत्र के प्रति कितनी विवेचना कितनी महानता रहती है, कि मेरा बालक देखो, इस संसार तक सीमित न रह जाएं। वह मानो देखो, मेरे तक सीमित रहे, मेरे से आँगन से जा करके आचार्यों के गर्भ में रहे, और आचार्यों से जब उपराम हो जाएं तो मानो देखो, प्रभु के आँगन में प्रवेश कर जाएं। वह मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कराने की मानो देखो, सुयोग्य माता की यह पवित्र इच्छा रहती है।

तो मेरे पुत्रों! विचार आता है कि पितर कौन है? विचारता हुआ वैदिक आचार्यों ने बेटा! विचारा कि पितर तो वह है जो देते रहते हैं देते कौन हैं बेटा! मानो देखो, यह तो मैंने सूक्ष्म विचार प्रगट किया कि वेद के मानो तीन प्रकार के अंग हैं तीन प्रकार के अंग है बेटा! लौकिकवाद विज्ञान और मेरे पुत्रों! देखो, यौगिकवाद यह तीन प्रकार के अंग तो देखो, प्रत्येक वेदमन्त्रों में दृष्टिपात आते हैं परन्तु जब हम अग्रणीय बनते हैं तो मुनिवरों! देखो, विचार आता है कि पितर कौन है, बेटा! जो देते हैं मानो देखो, सूर्य भी हमारा पितर कहलाता है, वह सूर्य प्रकाश देता है, वह नेत्रों को प्रकाशित कर रहा है, मुनिवरों! देखो, वह पितर कहलाता हैं। चन्द्रमा भी हमारा पितर है जो मुनिवरों! देखो, वह अमृत को प्रदान करता रहता है। वह मानो देखो, अमृत बहाता रहता है, उसे हम अपने में पितर स्वीकार करके, अपने में अग्रणीय बन गएं मेरे पुत्रों! देखो, यह पृथ्वी भी हमारी पितर है, क्योंकि गुरूतव में मानो हमारा शरीर गुथा हुआ हैं, मेरे पुत्रों! देखो, यह आपोमयी ज्योति आपोमयी ज्योति है, आपो को पान करके

ही हमें बेटा! ज्योति से ज्योति प्राप्त होती हैं। आपो कौन है? जल है, अमृत हैं, मेरे प्यारे! आपो है वह मुनिवरों! देखो, आपा को अप्रतां लोकां भवि वर्णा सुते वेद की आख्यिका कहती है, कि आपोमयी ज्योति है, इस ज्योति को धारण करो, बेटा! वही ज्योति जब मेरे प्यारे! आपो ज्योति बन करके जब खाद्य पदार्थों में मानो देखो, कृषि उपज रही हैं, और यह उसमें आपो को जब प्रवेश करता है, तो बेटा! वह ज्योति बना देती है। वह खनिज पदार्थों को ज्योति में प्रदान कर देती है, वह जल ही है बेटा! जो पिण्ड के सूत्र में मानो देखो, अन्नाद को मानव के समीप ला देता है, मेरे प्रभु का कितना विज्ञानमयी जगत है, बेटा! इसके ऊपर जब हम विचारते रहते हैं तो मुनिवरों! देखो, अन्त में मौन हो जाते हैं। विचारते हैं बेटा! आपो कैसा मेरे प्रभु ने यह संगतिकरण आपोमयी बनाया है, यह आपो कैसे पितर है, बेटा! मेरे प्यारे! देखो, असुताम देखो, वह गुरूतव पृथ्वी से आता हैं, और गुरूतव के परमाणु जब जल में प्रवेश होते हैं, तो मुनिवरों! देखो, जल उन्हीं के परमाणुओं का पिण्ड बना देता हैं। उन्ही परमाणुओं का जब वह पिण्ड बना देता हैं, पिण्ड बना करके बेटा! आपोमयी वह ज्योति कहलाती हैं, वास्तव में ज्योति हैं, मेरे प्यारे! देखो, अन्नाद को मानव पान करता है। तो उसे ज्योति प्राप्त हो जाती हैं, उस ज्योति का स्रोत कौन है? बेटा! मेरे प्यारे! विचार आता है कि उस ज्योति का स्रोत यदि कोई है, तो मुनिवरों! देखो, आपोमयी अनुपम ज्योति हैं, उस ज्योति को पान करके मेरे पुत्रों! देखो, मानव अपने क्रियाकलापों में रत्त हो जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, आपों में अप्रतं मुनिवरों! पिण्ड बना देती है, उसी पिण्ड को छिन्न भिन्न करने वाली मेरे पुत्रों! देखो, अग्निमयी वही उस पिण्ड का बेटा! विभाजन कर देता है। वह विभाजन कैसे हो रहा है, जब सृष्टि के पिता ने बेटा! इस मानव शरीर का निर्माण किया तो गुरूतव आपोतव मेरे पुत्रों! देखो, अग्नि मेरे पुत्रों! देखो, अग्नि उन परमाणुओं का विभाजन करती रहती हैं। मानव के शरीर में बेटा! परमाणुओं का विभाजन हो रहा हैं मानो प्रत्येक मानो पिण्ड का विभाजन हो रहा हैं, मेरे पुत्रों! देखो, जब हम बाह्य जगत में जाते हैं, तो वहाँ भी विभाजन हो रहा हैं, मेरे पुत्रों! अग्नि जो भी कुछ अपने हम अर्पित कर देते हैं उसको अग्नि विभाजन कर देती हैं। विभक्त क्रिया बना देती है, मेरे पुत्रों! वह कहाँ देती है विभाजन करके वह प्राण सूत्र को प्रदान कर देती हैं वह वायु वही प्रथा मेरे पुत्रों! वायु भी हमारा पितर कहलाता हैं। क्योंकि वायु में प्रवेश हो जाता हैं, वह विभाजन जो किया है उसका मानो देखो, वह मेरे प्यारे! देखो, गति देने वाली वायु है, वायु प्रहे व्रतां देवाः वह हमारी पितर कहलाती हैं। मेरे पुत्रों! देखो, वह अप्रतं ब्रह्मा हृदय असुतो सम्भवा लोकां मेरे प्यारे! वह अन्तरिक्ष में प्रवेश हो जाती है, वह वायु जब ही तक गति देती है, जब अन्तरिक्ष उसके द्वारा है तो मुनिवरों! देखो, जब अन्तरिक्ष भी हमारा पितर कहलाता है। जैसे मानव के शरीर में देखो, पंचाग्नि अपना प्रकाश कर रही है, परन्तु उनकी हृदयों में स्थिति हो जाती हैं, हृदयों में ही साकल्य बन करके रहती है, इसी प्रकार मेरे पुत्रों! देखो, अप्रतम् पृथ्वी आपो अग्नि मानो देखो, सब वायु यह सब अन्तरिक्ष में मेरे प्यारे! पदार्थों को ले करके, अपने-अपने रूप में रत्त रहती है, तो बेटा! वह आपोमयी सोम देता हुआ, अन्तरिक्ष आपो हमारा पितर है, मेरे पुत्रों! देखो, वह अन्तरिक्ष में ही आपो निहित हो जाता हैं। ब्रहे अस्वत है, शाश्वत है अपने में ब्रीहि असुतो मेरे पुत्रों! विचार-विनिमय क्या यह हमारे पितर कहलाते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, पितर कौन हुए? सम्भवा लोकां बेटा! पृथ्वी भी हमारी पितर है, आपो जल भी हमारा पितर है, मेरे पुत्रों! देखो, कौन अग्नि भी हमारा पितर है, वायु गति देता है, वह पितर है, अन्तरिक्ष में हम भ्रमण करते हैं, वह भी हमारा पितर कहलाता हैं। बेटा! यह पितर कहलाते हैं, इसीलिए हमें पितर याग करना चाहिए। पितर याग का अभिप्रायः यह है कि मानो देखो, हम इनको यथोचित मानो इनका अपने हृदय में समाहित करके बेटा! इनका पूजन करना चाहिए। पूजन का अभिप्रायः यह है क्या जिस रूप में वह है। उसी रूप में मानो हम नम्रता से उनका उपयोग में लायें उनको मानो देखो, अपने में धारण करें वह उसकी पूजा कहलाती हैं, मेरे पुत्रों! देखो, (पुस्तक से) विचार विनिमय क्या हमें पुत्र

यागी बनना चाहिए हमें पितरों मैं प्रवेश करना चाहिए, वह पितर हमारा कल्याण करने वाल हैं।

माता-पिता हमारे पितर कहलाते हैं उनकी भावनाओं के आधार पर हम अपने जीवन को कहीं के कहीं ले जाते हैं उनके चरणों की वन्दना करते हुए हम उनकी भावनाओं के आधार पर अपने जीवन को निर्धारित करें। हम अपने ऐश्वर्य में आ करके किसी वस्तु की अवहेलना न कर जाएं। प्रातःकालीन प्रभु से यह याचना की जाए कि हम अपने अभिमान में द्रव्य की लोलुपतता में अवहेलना न करें। क्योंकि जब प्रकृति का अज्ञान तुम्हें छा जाता है, तो यह पितरों की आभा को समाप्त कर देता है, पितरों की विवेचना में पितरों के द्वार पर जा करके ही वास्तव में हमारा कल्याण होगा। क्योंकि हम अपने मन के द्वारा पितरों को अपने समीप लाना चाहते हैं। प्राणसूत्र में पिरोया हुआ यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड एक आभा में गति कर रहा हैं।

मेरे पुत्रों! मैं पितरों की व्याख्या करने लगूं तो बहुत समय की आवश्यकता है परन्तु आज का विचार तुम्हें यह प्रतीत हो गया होगा मैंने तुम्हें पितरों का परिचय दिया है, कि पितर कौन है क्या-क्या हमें देते हैं, सूर्य हमारा पितर है, सूर्य की नाना प्रकार की किरणों कान्तियां से युक्त रहने वाली हैं, परन्तु वह सूर्य हमें क्या देता है, सूर्य से नाना प्रकार की कान्ति आ रही है, जिसको अपने में ले करके सूर्य की किरण आभा में नियुक्त होती है। तो पृथ्वी के जितने विषैले प्राणी हैं, वह किरणे उनके द्वार पर जाती हैं, किरणों में से उन तरंगों को वह विषधर विषैले प्राणी विष को ग्रहण करते रहते हैं। यदि यह विष को ग्रहण करने वाले विषैले प्राणी प्रभु के राष्ट्र में न हो तों मानव का जीवन जीवन नही रहेगा।

बेटा! पितरों के सम्बन्ध में तो शेष चर्चा कल ही हो सकेगी। आज तो मैंने केवल इसकी एक भूमिका बनाई है, विज्ञान की चर्चा तो मैं इससे पूर्वकाल में ही प्रकट करूंगा। आज का विचार-विनिमय तो यह है कि हम पूर्व काल में ही प्रकट करूंगा। आज का विचार विनिमय तो यह है कि हम पितरों के द्वार पर चलें। पितर कौन है? इतना विचार तो महर्षि लोमश मनि और पिप्लाद मुनि इत्यादियों की चर्चाओं में हुआ परन्तु शेष ऋषि-मुनियों की चर्चा तो कल ही हम प्रकट करेंगें, क्योंकि हम ऐसे ऋषि-मुनियों की स्थली पर पंहुच गएं हैं, जहाँ उनके विचार बड़े गम्भीर और विचारों में विज्ञान की धाराएं निहित रहती हैं। आज का विचार हमारा यह कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए प्रभु को अपना पितर स्वीकार करें। हमारा लौकिकवाद इतना ऊँचा होना चाहिए, जिससे हम विज्ञान के गर्भ में चले जाएं, विज्ञान इतना त्यागयुक्त होना चाहिए कि उसमें ही लिप्त न हो जाएं, हम यौगिकवाद में भी चले जाएं यह आचार्यों का एक मन्तव्य रहा हैं।

बेटा! शेष चर्चा तो मैं कल ही प्रगट करूंगा परन्तु पितरों की विवेचना यह है कि वह जो देता है वही पितर कहलाता हैं, हमें उनसे लेना चाहिए, परन्तु हम शान्त हो करके लें और हमारा क्रियाकलाप इतना ऊर्ध्वा में रहना चाहिए, कि जिससे हमारा जीवन पवित्र हो जाएं। माता के क्रियाकलापों की चर्चाएं महर्षि लोमश मुनि ने विशुद्ध रूपों से की। प्रारम्भ में ही माता तीन प्रकार के ग्रास देती हैं। वह सबसे प्रथम प्रभुत्व उसके पश्चात प्राणत्व और उसके पश्चात मनस्तव मन संसार के व्यापार को बनाता है, प्राण को विज्ञान की धाराओं का निर्माण करता है। प्राण के रूप को ऊर्ध्वा में जान करके वही प्रभु को प्राप्त करा देता है। तो यह है आज का वाक् आज मुझे इतना समय आज्ञा नही दे रहा है पितर याग की शेष चर्चाएं तो मैं कल ही करूंगा। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

५ पितृ याग-२ ०५ ०८ १९८५

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन किया जाता है क्योकि हमारे आचार्यों ने मन्थन करने वालों ने ये निर्णय दिया है कि हमारा सर्वत्र जो पितर कहलाता है, वे परमपिता परमात्मा है, मानो ये जो ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात आ रहा है, यह उस परमपिता परमात्मा का आयतन माना गया है, मानो ये उसका गृह है। जिस प्रकार मानव का शरीर ये आत्मा का आयतन माना गया है, आत्मा का गृह है, परन्तु वह एको रूप होने से, और जो सर्वज्ञ है, उसका ये ब्रह्माण्ड ही आयतन है। मानो आत्मवत रहने वाला, अपने में बेटा! एक महानता का दिग्दर्शन करने लगता है। मैंने बहुत पुरातन काल में अपना निर्णय देते हुए कहा था, कि हमें प्रभु की महिमा का गुणगान गाते हुए, हम मानो देखो, पितरों की श्रेणी में आ जाएं, तो प्रत्येक मानव को पितरों की कोटि में जाना चाहता है। मानो वह पितर बनना चाहता है।

मेरे पुत्रों! मैं तुम्हें विशेषता में नही ले जाना चाहता हूँ जहाँ ऋषि-मुनियों का एक विचार-विनिमय हो रहा था मेरे पुत्रों! देखो, वह सभा ऋषि-मुनियों की जहाँ ऋषि-मुनि विद्यमान हो करके, पितर याग के सम्बन्ध में अपना विचार-विनिमय करते रहते थे। नाना प्रकार के यागों का चयन करते रहते थे, ऋषि-मुनियों का एक मन्तव्य रहा है, क्या मानवीय क्षेत्र में आत्म पिपासा से मुझे ऐसे क्रियाकलाप होने चाहिएं, जिससे आने वाला जो समाज है, वह अन्धकार में न चला जाएं। वह अकाट अपने सिद्धान्त को नृत्त करने वाले। मेरे पुत्रों! देखो, मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जिस काल में ऋषि-मुनि अपने में अन्वेषण करना, मानो विचार-विनिमय करना, विचार ये देते रहते थे, क्योंकि आत्मा की जो पिपासा है, वह मानो अपने प्रभु के लिए, सदैव पिपासी रहती है, तो इसीलिए हमें नाना प्रकार के यागों का चयन करना चाहिए। क्योंकि आत्म जो तृप्ति है, वह याग से पूर्ण होती है। मानो वह किसी भी प्रकार का याग हो, उससे मानव के अन्तर्हृदय में शान्ति की स्थापना हो जाती है, मानव अपने में यह अनुभव करने लगता है कि मुझे एक आनन्दवत आ रहा है। एक मानव संसार की एक नाना प्रकार के भौतिक व्यापार से वह इतना उदीर्ण हो जाता है। वह इतना मानो देखो, अपने में अनुभव करने लगता है, कि मैं महा दुःख वह सुख की कल्पना करता है। तो मेरे प्यारे! जब वह याग के समीप जाता है, अथवा पितर याग में रत्त होने लगता है, तो उसे आत्म शान्ति की स्थापना होना प्रारम्भ हो जाता है। क्योंकि वह स्वयं पितर है, और पितरों की याग में प्रवेश कर गया है। तो मेरे प्यारे! देखो, विचार आया, कि पितर कौन होते हैं? महर्षि लोमश मुनि का यह विचार सबने श्रवण किया, परन्तु महर्षि कागभुषुण्ड जी से ये प्रश्न किया गया, क्या महाराज! ये पितर याग क्या है? तो महर्षि कागभुषुण्ड जी ने यह कहा कि भई! जो ऋषि ने अभी-अभी तुम्हें वर्णन कराया है, मैं इसमें अपना मन्तव्य क्या दे सकता हूँ। ऋषियों ने कहा कि नहीं, एक मानो शब्द है, मानो उनके अनेका अनेक मानो उसके उत्सुक करने के प्रकार कहे जाते हैं। वेद का एक मन्त्र है, परन्तु उसकी जो भावार्थ पद्धति है वह भिन्न-भिन्न रूपों में रत्त होती रहती है, आप अपना कुछ व्यक्तव्य प्रदान कीजिए। इन्होंने तो अपना व्यक्तव्य दिया, अपना विचार दिया है, व्यक्तव्य भी नही विचार हैं। और वह विचारों में केवल प्रतिबद्धता नही आ रही है। क्या जो इन्होंने उच्चारण किया है, उसमें कोई भी रचना नही हो सकती। तो मेरे प्यारे! कागभुषुण्ड जी ने ऋषि-मुनियों के वाक्यों को पान करके, अपने विचार देना प्रारम्भ किया, उन्होंने कहा कि ये जो पितर याग का प्रसंग, हमारे समीप आता है, मानो देखो, जैसा पूर्व

काल में माता को पितरों के रूप में वर्णन किया है, परन्तु माता केवल यही शान्त नही हो जाती हैं। क्या वह पितर बन करके तीन ग्रास दे करके, बाल्य को मानो देखो, वह वहीं शान्त हो जाएं, माता भी एक अनुपम पितर होने के नाते मानो पिपासा बनी रहती है, क्या मेरा जो बाल्य ब्रह्म व्रता है, यह ब्रह्म की रचना का एक मानो देखो, एक रूप यह परमपिता परमात्मा ने ब्रह्मा ने इस मानो ब्रह्माण्ड की मानो अनुपम रचना की है, इसी प्रकार माता ये चिन्तन करना प्रारम्भ करती है, कि ये रचना मानो उस मेरे अनुपम ब्रह्मा की है, प्रभु की है। तो मुनिवरों! देखो, वह ब्रह्म की उपासना करने लगती है, और ब्रह्म की उपासना करते हुए कहती है, कि हे भगवन! ये तेरी रचना का मानो देखो, एक वृत मानो मेरे समीप आया है, यह मेरा इससे घनिष्ट सम्बन्ध हैं, क्योंकि मेरे गर्भस्थल में पनपा है, आपकी जो रचना है, और आपकी जो रचना है, और पनपना भी मैं अपने में धृष्टता कर रही हूँ और देखो, यह मैं यह स्वीकार करूंगी कि यह मेरे गर्भस्थल में पनपा है, यह भी प्रभु! मेरी धृष्टता है। परन्तु जब मैं और गम्भीरता में चिन्तन करती हूँ, तो प्रभु! ये जो ब्रह्माण्ड है, यह आपका गर्भाशय है, मैं भी आपके ही गर्भ में पनप रही हूँ, मानो बाल्य भी आपके ही गर्भ में पनप रहा है, और ये जो देवताजन है, ये शिशु के रूप में मानो जो पालना कर रहे हैं यह मानो आपका ही स्वरूप माना गया है। तो मानो जब माता इस प्रकार की विवेकमयी, धारा को प्रार्थना के रूप में परिणात कर रही हैं, बालक उसकी लोरियों का पान कर रहा है, मानो देखो, वह उसे भोज्य प्राप्त करा रही है, परन्तु माता की पवित्र वेदना है, और वह यह चाहती है कि हे प्रभु! तेरा जो रचाया हुआ मानो देखो, ये जो ब्रहा है यह पवित्र बन जाएं, जिससे मेरा अन्तरात्मा मानो ये स्वीकार करने लगे, कि वास्तव में ये ममत्वं ब्रह्वा वाचं इसन्नमं क्योंकि इदन्नम का जो शब्द हैं, जो याग में हम परिणात करते हैं, देव याग में मानो इसी को हम पितर याग में भी परिणात करते चले जाएं। क्योंकि यह मेरा नही है, यह सब आपकी प्रतिभा है। मानो जब इस प्रकार माता मानो देखो, अपने में शान्त हो करके लोरियों का पान कराती हैं, वह जो तन्मय होने वाला मन है, शान्त होने वाली प्रतिभा है, मानो देखो, वही विचार वही मनस्तव की शान्त होने वाली तरंगें हैं, वह बालक के अन्तर्हृदय में प्रवेश हो जाती हैं, और वह बालक उसी प्रकार मानो यह उसमें संस्कारों की उपलब्धि हो जाती है। मेरे प्यारे! देखो, यहीं तक नहीं, जब वह अग्नि में तपा करके, तन्दुलों को लाती हैं, अग्नि में तपाती है, तन्दुलों को जब भी तपाती है, जब भी ये कहती है प्रभु! यह अग्नि भी तेरा ही मानो देखो, रूप है, जैसे प्रातःकाल की पवित्र अग्नि मानव को ऊर्ज्वा देती है, प्रकाश देती है, आनन्दवत् करा देती है, तो प्रभु! ये अग्नि में मैने अन्न को तपाया है, यह अन्न क्या है? यह अन्न प्रकृति की आभा में रत्त रहने वाला, मानो देखो, यह भोज्य है, यह अप्रति है, यह अमृत है मानो यह अमृत होने से मन से गुथा हुआ, मानो यह ग्रास है, मन से गुथा हुआ, मानो अग्नि अपने में नृत्त करती रहती है। तो मेरे प्यारे! देखो, माता कहती है हे पुत्रों भवा ब्रह्मा! हे ब्रह्मणा! हे परमात्मन्! अग्नि में तपाया है इस अन्नाद को, इस अन्नाद में आप, एक महानता का, महानता को भरण करने के लिए माना उस अग्नि ले करके वह अग्नि में मानो देखो, प्रथम स्वाहा करती है, और यह कहती है हे अग्ने! जैसे तेरे में यह ग्रास मानो भस्मा भूत हो गया है। सूक्ष्म परमाणु बन गया है इसी प्रकार हे अग्ने! तू भी मानो जठराग्नि बन करके, बाल्य के हृदय में, उदर में मानो तू पनप रही हैं, और जब पनप रही है, क्योंकि राष्ट्र में पुत्र को लेना चाहती हूँ। तो जो ग्रास मैं पुत्र को देना चाहती हूं उस अग्नि मानो जठारग्नि बन करके, तू अपने में ग्रहण कर, परन्तु तू ज्ञाना रूपी अग्नि बन करके, अपने में ग्रहण। तो मानो देखो, ब्रह्माग्नि बन करके, तू ब्रह्म को प्राप्त कर, मानो तू तेजोमयी अग्नि बन करके, तू तेजस्वी बन। तो बेटा! यह माता की पवित्र भावना रहती है इसी भावना के साथ मानो देखो, वह उस ग्रास को प्रदान करती है। महर्षि कागभुशुण्ड जी ने कहा, क्या जब मैं अपने माता के द्वार पर मानो देखो, माता मुझे भोज्य कराती थी, एक समय पितर ने कहा माता से हे देवी! बाल्य क्षुधा से पीड़ित हो रहा है, तो मानो देखो, उन्होंने कहा कि क्षुधा से

पीड़ित नही हैं, वह ज्ञान की पिपासा में रत्त होना चाहता है, मेरे प्यारे! वह ज्ञान कहाँ से प्राप्त होगा? हमारे यहाँ यह आया है, क्या मानो देखो, जो मानव सर्वत्र देखो, जानाति जननं ब्रहे व्रताम् देवाः मेरे प्यारे! वेद के आचार्यों ने कहा कि अन्न सर्वत्र दानं माना गया है। मेरे प्यारे! देखो, अन्न को पान करके ही सर्वत्र धाराओं का जन्म होता हैं।

मेरे प्यारे! देखो, एक समय, उन्होंने कहा, हे देवी! मैं कौतुक राजा के यहाँ एक समय भ्रमण करने गया, तो राजा कौतुक के यहाँ पंहुचा तो राजा कौतुक ने यह अपने राष्ट्र में घोषणा कराई थी, यह घोषणा कराई कि जितना राष्ट्र का द्रव्य है वह मेरे कोष में आ जान चाहिए। मानो देखो, प्रजा ने उस अन्न को राजा के कोष में पंहुचाना प्रारम्भ किया, जब वह राजा के कोष में चला गया, तो जब मैं बाल्य काल में, अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा अध्ययन कर रहा था तो कौतुक कहते है। अपनी पत्नी से मेरी प्यारी माता से कहते हैं, हे ब्रहे! मानो जब कौतुक राजा के यहाँ मैंने एक अन्न को ग्रहण किया था मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने भी किया तो मानो देखो, जब प्रातःकालीन मानो देखो, सांयकाल को हमने अन्न का ग्रहण किया। प्रातःकालीन मानो जब हम साधना में परिणत होने लगे साधना करने लगे तो हमारे मन की प्रवृत्ति मानो चंचल बन गई। जब मन की प्रवृत्ति चंचल बन गई, तो हमने विचारा, क्या करें? दोनों ने साधना का काण्ड समाप्त कर दिया। उन्होंने कहा-प्रभु! अब क्या करें? तो उन्होंने मुनिवरों! देखो, पुनः स्नान किया, जल में प्रोक्षण करके पुनः जब मार्जन करने के लिए तत्पर हुआ। तो हम चिन्तन करने लगे तो चिन्तन में आत्म चिन्तन के आश्रित न रह करके, बेटा! और ही चिन्तन होने लगा जब चिन्तन मानो दूषित बन गया। दूषित होने से बेटा! देखो, वह तरंगें उत्पन्न होती रहीं, तो मानो देखो, उस समय हमारे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा था कि कहा था, हम दोनों भ्रमण करते हुए कौतुक राजा के द्वार पर पंहुचे, कौतुक राजा ने ऋषियों का स्वागत किया, उन्होंने कहा-प्रभु! स्वागत तो पश्चात होगा मानो हमारा स्वागत तो इससे पूर्व ही हो गया, जिससे हमारे मन की प्रवृत्ति मानो अशान्त हो गई है। उन्होंने कहा-प्रभु! ऐसा क्यों? उन्होंने कहा तुम्हारे भण्डार में, हमने भोज्य प्राप्त किया था। मानो देखो, उस समय राजा कौतुक ने निर्णय किया, कि अन्न कैसा तुमने अन्न को कैसा उत्पन ब्रहे भोजनालय में अन्न का निर्माण किया था। तो मानो देखो, पाचक ने कहा हे प्रभु! राजा से कहा हे भगवन! मुझे ये प्रतीत नही है वह कैसा अन्न है? मेरे प्यारे! देखो, कौतुक राजा ने उससे निर्णय किया, जो वह अन्न को ले करके आए उन्होंने कहा कि हे राजब्रहे कहिए उन्होंने कहा तुम ये अन्नाद कहाँ से लाए? उन्होंने कहा कि प्रभु! यह जो राष्ट्र का जो कोष है, उसी में द्रव्य लाया गया, उसी से अन्न को लाया गया वह अन्नाद हैं। तो मेरे प्यारे! कौतुक ने निर्णय किया तो निर्णय करने के लिए प्रतीत हुआ क्या मानो देखो, जितने भी राजा के राष्ट्र में द्रव्यपति थे मानो देखो, उनका द्रव्य संग्रह सुन्दर प्रवृत्ति से उन्होंने प्राप्त नही कराया, उनका जो मानो देखो, अन्न का जो निर्माण किया अन्न को मानो देखो, हम अन्न को ब्रहे द्रव्य को जब मानो मन्थन करके, जब द्रव्य को हम हृदय से चिन्तित होना ही हमारा कर्तव्य नही है। जो मानो देखो, प्रजा चिन्तित हो करके, अपने में भार स्वीकार करके, वह राष्ट्र कोष में अन्न जाता हैं, तो राजा के राष्ट्र को भ्रष्ट कर देता है। तो मानो देखो, वही अन्नाद है, तो मेरे प्यारे! देखो, कौतुक राजा ने, ऋषि-मुनियों के चरणों को स्पर्श किया, और चरणों को स्पर्श करके कहा-प्रभु! ये मेरा ही दोष है। मेरे राष्ट्र में प्रजा का दोष है भगवन! अब हम मानो देखो, क्षमा चाहता हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, कौतुक राजा ने जब ऐसा कहा तो मुनिवरों! ऋषि-मुनियों ने कहा मेरे पूज्यपाद गुरुओं ने कहा कि हे राजन! ये मानो देखो, अन्नाद तुम्हारी इस प्रवृत्ति को भ्रष्ट करेगा, और राजा की प्रवृत्ति भ्रष्ट जब हो जाती हैं, तो प्रजा का विनाश हो जाता है मानो देखो, ऐसा नही होना चाहिए। उन्होने कहा तो प्रभु! मैं तो इस अन्न को ग्रहण करता ही नही हूँ, मैं तो स्वयं कला कौशल करके ही मानो देखो, उस अन्न को पान करता हूँ। उन्होंने कहा राजन यह तो यथार्थ है, जब हम तुम्हारे अतिथि बन करके आए, तुमने अपने अन्न में से क्यों नही कराया?

उन्होंने कहा-प्रभु! यह आपका प्रतीत नही था, आपका मेरे से मिलन नही हुआ, मानो तुम राष्ट्र गृह में चले जाते, और राजलक्ष्मी तुम्हें अन्न को ग्रहण करा देती। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा हे राजन! ऐसा हमने नही विचारा, क्यों नही विचार क्योंकि इससे पूर्व हम कई समय तुम्हारे अन्न को ग्रहण कर गएं थे, और उस अन्न को ग्रहण करके हमारी बुद्धि मानो प्रखर बनी रही, एक तरंगे नही दो तरंगे नही नाना प्रकार की तरंगें उत्पन्न होती रहती हैं। तो प्रभु! हम जाना नही था कि तुम्हारे राष्ट्र में ऐसा भी होता हैं।

मेरे प्यारे! देखो, कौतुक राजा ने कहा भगवन! अब मैं क्षमा चाहता हूँ, प्रभु! चलो मेरे राष्ट्र गृह में तुम्हारा प्रवेश हो, तो दोनों हम, राष्ट्र गृह में पंहुचे, तो राष्ट्र गृह में देवी से कहा-देवी! मेरे पूज्य ऋषि-मुनियों की, मानो अन्तरात्मा में मानो अशुद्ध अन्न ग्रहण हो गया है, मन की धाराओं का जन्म हुआ है, और वह जो मन की धाराएं हैं, वह अशुद्धवाद में परिणत हो गई हैं, देवी! इनको अन्न का ग्रहण कराओ। उन्होंने कहा-प्रभु! मैं इस प्रकार अन्न को ग्रहण नही कराऊंगी। क्योंकि वह अन्न मानो देखो, दमन हो जाएगा, वह तरंगें जो उस अन्न की हैं, वह जब वह दमन हो जाएगी। तो वह किसी न किसी रूप में मानो पुनः पुनरूक्तियों में आ करके, वह पुनः उभर करके मानो इनकी तरंगों में पुनः आ करके दूषित वायुमण्डल को प्रदान करेगा। तो हे भगवन! मैं इन ऋषि-मुनियों को आज भोज नही कराऊंगी। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा तो देवी! क्या करें? उन्होंने कहा कि तुम उपवास करो। और उपवास करके वेदों का अध्ययन करो। मानो वेद का अध्ययन करो, लगभग सूर्य उदय होने से और अस्त होने तक वेद का अध्ययन करो, और ध्वनि से जिससे वह परमाणुवाद तुम्हारा वेद की ध्वनि के साथ में मिश्रित हो जाएं। मेरे प्यारे! जब मानो ब्रह्मे कागभुषुण्ड जी कहते हैं, क्या हम ने मानं ब्रह्मे मेरे पूज्य पिता जी ये कहा करते थे कि मैं और मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मानो देखो, इस प्रकार अनुष्ठान किया, जल को मानो अपने समीप ले करके वेदमन्त्रों की तंरगें देखो, जल को स्पर्श करके जाती थी, कि जल का पान करना और वेद का अध्ययन करना जटा पाठ धन पाठ में गाना मध्य में ही देखो, मन की प्रवृत्ति चंचलवत्त बनी, वह संस्कार पुनः भी मानो देखो, उनके समीप आए, तो मुनिवरों! देखो, ऐसा कुछ उन्होंने कहा मंगलं बहे व्रताम मानो वेद का अध्ययन करते रात्रि काल में देवी ने कहा हे प्रभु! आप ऋषि है आप साधक है हम तो संसार के प्राणियों के प्रति साधना करते हैं, आप आत्म चिन्तन करते हुए, प्रभु को प्राप्त करने के लिए, साधना करते हो। हे प्रभु! रात्रि समय तुम मानो देखो, चन्द्रमा आज पूर्णिमा का वह दिवस था। पूर्णिमा के चन्द्रमा को निहारते रहो, और उसमें प्रभु की सृष्टि को निहारते रहो तो पूज्यपाद गुरुदेव ने वही किया। परन्तु उसके पश्चात उनके हृदय की वह तरंगें मानो समाप्त हो गई और प्रातः काल जब राष्ट्र गृह में प्रवेश हुआ, तो मानो मन्त्रों की ध्वनि के साथ ऋषि-मुनियों को अन्नाद का पान कराया, अन्न का निर्माण किया, निर्माण करके उसको तपा करके ऋषि-मुनियों का पान कराया तो माता यह कहती थी कि मेरा हृदय मानो पवित्र बन जाएं और मेरे हृदय की तरंगें ऋषि-मुनियों के हृदयों में प्रवेश हो जाएं। जिससे वह शुद्ध उनकी साधना में पुनः परिणत हो जाएं, क्योंकि यदि मानो राजा के राष्ट्र में मानो देखो, ऋषि समाज में भी अशुद्धवाद आ जाता है, और तरंगें अशुद्ध बन जाती है, तो यह राजा के ऊपर भी भार बन जाता है ये राजा की धृष्टता बन जाती हैं मानो देखो, उस देश में माता ने जब भोज कराया, तो माता ऋषि-मुनियों के प्रति, मानो ऐसी भावना अपने में नियुक्त करने वाली है, तो वह यह चाहती है कि मेरा पति और मेरे राष्ट्र में जो समाज है, वे पवित्र बन जाएं यह मेरा जो पुत्र है, तो राष्ट्र के लिए राज लक्ष्मियां पितर कहलाती हैं। राजा पितर कहलाता है। तो जो वास्तव में राजा होता है, वही तो पितर कहलाता है।

मेरे प्यारे! मैं इन वाक्यों को सूक्ष्म वाक्य में कहाँ ले जाऊंगा, यह तो बड़ा विचित्र बेटा! सूक्ष्मवाद का वन हैं, मैं इस वन में जाना नही चाहता हूँ, तुम्हें परिचय देना चाहता हूँ, और वह परिचय क्या है मेरे प्यारे! देखो,

कागभुषुण्ड जी ने कहा, क्या माता ने ये पिता ने मुझे यह निर्णय कराया, तो मैंने उसी समय से अपनी साधना के लिए, उत्तम अन्नाद को ग्रहण करना प्रारम्भ किया उस अन्न के ग्रहण से साधना बनी रहती थी। तो वह पितरजन हैं, पितरों के द्वार पर जाने से पितरों की मानो देखो, उनकी भावना पितरों की बलिष्ठ हो जाती हैं, वह परमात्मा पितर बनता है, संसार के आँगन मे बेटा! माता ही पितर बन करके अपना क्रियाकलाप कर रही है, तो बेटा! विचार-विनिमय क्या मेरे पुत्रों! देखो, कागभुषुण्ड जी ने कहा कि मेरे पिता का तो यह निर्णय हुआ है, मानो देखो, यह निर्णय निर्णायक है कि देखो, जो राजा भी पितर कहलाता है, राजलक्ष्मियां भी पितर कहलाती हैं। मानो देखो, एक समय सम्भूति ब्रह्म लोकां मेरे प्यारे! देखो, ये निर्णय दे करके, मुनिवरों! देखो, कागभुषुण्ड जी मौन हो गएं, जब मौन हो गएं, तो मुनिवरों! देखो, वह महर्षि प्रवाहण, ऋषि ने कहा क्या हे भगवन! कागभुषुण्ड जी का लोमश जी का तो निर्णय बहुत ही उत्तम रहा है। परन्तु और कोई निर्णय देने वाला हो, पितर याग के सम्बन्ध में अपनी विवेचना करने वाला हो, तो मानो देखो, उपस्थित हो सकता है।

तो मेरे पुत्रों! देखो, इतनें में ही मुनिवरों! देखो, महर्षि वैशम्पायन मानो देखो, उपस्थित हुए, और वैशम्पायन ने कहा कि भगवन! कि ये जो पितर याग हम करने के लिए तत्पर हैं, विराजमान है, वनों में मानो हम पितर याग के सम्बन्ध में क्या पितर याग तो एक ही वाक् आता है, रक्षा करने वाला है, मानो देखो, पितर हमारा पितरो ब्रह्म वाचा जैसे कागभुषुण्ड जी ने राजा राजलक्ष्मी को और परमात्मा को पितरों से दूरी किया है, परन्तु इससे कुछ परिणाम तो उच्चारण करने के लिए, मानो शेष रहा नही है। परन्तु जैसा हमने भी अध्ययन किया, उसके आधार पर, मैंने अपनी विवेचना प्रगट करूंगा। मानो देखो, ये जो सम्भूति ब्रह्मवाहा मानो देखो, वैशम्पायन ने कहा, कि-प्रभु! एक समय मैं याग कराने के लिए, महाराजा अश्वपति के यहाँ, वह वृष्टि याग था, वृष्टि याग में मानो देखो, वृष्टि नही हो रही थी, जब वृष्टि नही हो रही थी, तो महाराजा अश्वपति ने मुझे निमन्त्रित किया, और यह कहा क्या भगवन! मेरे राष्ट्र में मानो वृष्टि याग होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा पितरं ब्रहे मुनिवरों! देखो, वह पितर मम ब्रीहि मुनिवरों! देखो, महर्षि बोले वैशम्पायन क्या मैं जब उसके राष्ट्र में पंहुचा, अपनी पत्नी से यह उच्चारण कर रहे थे, अश्वपति क्या हे देवी! ऋषिवर का आगमन होने वाला है, परन्तु उनको अन्न के लिए भी तो सम्बोधित करना है। तो मेरे प्यारे! वह राज लक्ष्मी बोली, क्या प्रभु! उनके लिए अन्न पर्याप्त है। तो राजा ये उच्चारण कर रहे थे, जो ऋषि जो होते हैं, यह राष्ट्र के प्राण होते हैं, वह राष्ट्र के प्राण होते हैं क्योंकि राजा के राष्ट्र को यदि सजातीय बनाता है। तो बुद्धिमान बनाता है। तो मानो देखो, उसके लिए अन्न पवित्र होना चाहिए, तो मेरे प्यारे! देखो, उस समय राजलक्ष्मी ने कहा, कि हे भगवन! मैं कई वर्ष और देखो, छह माह हो गएं हैं, छह माह से मैं सूर्य की प्रार्थना कर रही हूँ सूर्य देव की आराधना कर रही हूँ, और आराधना करके उसकी कान्ति में विद्यमान हो करके मानो मैं यह चाहती थी, कि मेरा हृदय तेजोमयी बन करके मानो देखो, मैं मानो यह निर्णय करा देते। कौतुक मुनि महाराज ने मुझे यह निर्णय करा दिया था पूर्व काल में क्या यह जो पीपल का वृक्ष है, पीपल के वृक्ष में मानो सूर्य की प्रतिभा विशेष होती हैं। मानो देखो, एक रुवासि केतु वृक्ष होता है, उसमें भी सूर्य की किरणों विशेष होती है। मानो मैं उस अन्नाद, उसका रस ले-ले करके, मैं पांचाग बनाती रही हूँ, और मैं सूर्य की किरणों में, तपा-तपा करके, मानो पवित्र भूमि में जो हमारे यहां अन्न उत्पन्न होता हैं मानो देखो, उस पीपल के रसों में खरल करके, मैं इसको मिलान करती हूँ, ऋषि के लिए मानो मधु मक्ख ले करके मानो देखो, मैं अपने ऋषि के लिए, मैंने इस अन्नाद को उत्पन्न किया। तो मानो देखो, जब ये चर्चा ही हो रही थी, इतने में मानो हमारा आगमन हो गया। जब मानो देखो, आगमन हुआ, तो राजा ने मानो देखो, यज्ञशाला में पर्दापण कराया, आईए, भगवन! वृष्टि याग करना है। वृष्टि नही हो रही है। तो मानो देखो, उस अन्न को पान करना, राजा भी उसी अन्न को पान

कर रहा है। पुरोहित जन भी उसी अन्न को पान कर रहे हैं, उद्गाता, अध्वर्यु भी उसी को पान कर रहे हैं, तो मानो पान करते-करते जब याग का प्रारम्भ हुआ, तो मानो देखो, साकल्य भी, मुनिवरों! देखो, वनों में से साकल्य एकत्रित किया गया, औषध विज्ञान मानो इस प्रकार एकत्रित करके जब वह याग किया, तो याग करने से ही मानो देखो, मुनिवरों! बेटा! देखो, उसी याग के मध्य में, मेरे पुत्रों! देखो, चाक्राणी आ पंहुची। तो चाक्राणी देवी ने कहा ऋषि से क्या कर रहे हो भगवन? तो उन्होंने कहा कि हम क्या नही कर रहे हैं, उन्होंने कहा तो मैं जानना तो चाहता हूँ उन्होंने कहा हम पितर याग कर रहे हैं। हम मानो देखो, पितर की उपासना करते याग चाहते हैं। जिससे मानो देखो, वह पितर बन करके कुछ प्रदान कर दे। तो मानो देखो, उसी समय, जब ब्रह्मे वैशम्पायन ने कहा था, सम्भूति ब्रह्मवाचा देवो हे ऋषिवर! ये सब उद्गाता निरीक्षण कर लीजिए, इनका देवता भी निरीक्षण कर लीजिए। उन्होंने याग का निरीक्षण किया। तो वास्तव में वह मानो पितर याग हो रहा था। तो मेरे पुत्रों! देखो, यहाँ केवल यही नही है समय समय पर बेटा! वृष्टि प्रारम्भ हो गई जिससे मेरे पुत्रों! देखो, जो ऋषि-मुनि होते हैं, राष्ट्र का राष्ट्र के पितर हैं, और राजा और प्रजा के लिए राजा पितर है, जो अपनी प्रजा के लिए वृष्टि की कामना कर रहा हैं।

मेरे प्यारे! मुझे कुछ ऐसा स्मरण है क्या मुनिवरों! देखो, राजा और ऋषि ने जब याग किया, होता जनों ने मेघों की उत्पति हो गई मुनिवरों! देखो, धीमी-धीमी वृष्टि प्रारम्भ हो गई, मेरे पुत्रों! देखो, पृथ्वी ने विष उगलना प्रारम्भ कर दिया अमृतमयी बन गई। नाना प्रकार के व्यंजनों वाली बन गई तो विचार-विनिमय क्या वेद का ऋषि कहता है, वैशम्पायन ने कहा, कि-प्रभु! याग चलता रहा, परन्तु हमारे यहाँ माता को जैसे हम पितर कहते हैं, पितरों को पितर कहते हैं, राजा को भी पितर कहते हैं, परन्तु इसी प्रकार हम याग को भी पितर कहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, यह जब वाक् ऋषि ने प्रगट किया तो आनन्दवत् हो गएं। तो वैशम्पायन अपनी विवेचना प्रारम्भ की, अपनी विवेचना में कहा कि याग ही हमारा पितर है, मानो वह देवता ही पितर कहलाता है। मानो देखो, जो पितरों से जिसका समन्वय रहता है तो मुनिवरों! देखो, जहाँ हृदय की मैं विवेचना प्रगट कर रहा था, अन्नाद की, जहाँ चर्चा आ रही थी, तो महर्षि वैशम्पायन ने कहा, कि इसीलिए ऋषि-मुनि भयंकर वनों में, मानो पर्वतों की गुफा में, आत्म चिन्तन करते रहते थे, मानो उस अन्न का पान करते थे, जिस पर किसी का अधिकार नही होता, मानो उस अन्न को पान करने बुद्धि प्रखर रहती है, बुद्धि मानो देखो, ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ने वाली रहती है। तो विचार-विनिमय क्या है मेरे पुत्रों! वैशम्पायन ने अपना वक्तव्य दे करके, वह मौन हो गएं और उन्होंने कहा-प्रभु! मैं जहाँ माता हमारी पितर है, राजा पितर है, वहाँ देखो, ब्रह्म वाचो ब्रह्मे व्रताः मेरे प्यारे! देखो, ये याग भी हमारा पितर कहलाता है। तो मेरे पुत्रों! देखो, वैशम्पायन ये उच्चारण करके, बेटा! मौन हो गएं। जब मौन हो गएं, इतने में महषि प्रवाहण मुनि उपस्थित हुए, और महर्षि प्रवाहण ने कहा, क्या और कोई ऋषि है, जो मानो जो याग के सम्बन्ध में पितर याग के सम्बन्ध में, अपना व्यक्तव्य देने वाला हो मानो इतने में ही मुनिवरों! देखो, हमारे यहां ब्रह्म वाचो ब्रहे इतने में ही महर्षि शाकल्य मुनि महाराज उपस्थित हुए, और महर्षि शाकल्य मुनि ने कहा, क्या जो वैशम्पायन ने, अभी-अभी अपना विचार दिया है, जिससे आगे मैं कोई वाक् उच्चारण करूं, तो मानो देखो, उसके आगे की मैं नही गया, परन्तु देखो, जब तुमने मुझे आज्ञा दी है, तो मैं गुरुदेव इस यागों के सम्बन्ध में कुछ अपना मानो विचार दे सकता हूँ।

तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने कहा कि मैं मानो एक समय मैं अपने में ही मेरे पुत्रों! साकल्य मुनि ने कहा कि मैं तत्त्व मुनि महाराज के यहाँ मैं अध्ययन करता रहा हूँ, तत्त्व मुनि महाराज के यहाँ मैं अध्ययन करता रहा, एक समय हमने, सबने मानो अपने पूज्यपाद गुरुदेव को ब्रह्मचारियों को निमन्त्रित किया, और मुनिवरों! देखो, शाकल्य मुनि ने कहा, क्या जब महर्षि तत्त्व मुनि महाराज थे, सब ब्रह्मचारियों ने यह प्रश्न किया, कि महाराज! ये पितर

याग क्या है? मानो देखो, हमारे यहाँ कहीं-कहीं पितरों में देखो, ये सूर्य भी आता है, तो मानो इसका हम याग करना चाहते हैं। तो वह कैसे मानो सूर्य कैसे पितर बनेगा? तो मानो उस समय महर्षि तत्त्व मुनि महाराज ने कहा कि ये जो सूर्य है, इसकी नाना प्रकार की किरणें आती रहती हैं। नाना प्रकार की धाराएं आती रहती हैं, मानो देखो, यह हमारा पितर कहलाता है। और यह कैसे पितर कहलाता है। मानो देखो, यह जो पृथ्वी है, यह जो हम पृथ्वी पर रहने वाले प्राणी है, यह सब अपनी प्रत्येक इन्द्रियों से मानो गन्ध को त्यागते रहते हैं। अथवा विष को त्यागते रहते हैं। तो विष को जब हम त्याग देते हैं, तो वह त्याग करके मानो देखो, पृथ्वी में प्रवेश करके यह पृथ्वी विष उगलने लगती है। जब यह विष मानो वमन करने लगती है, जब यह वमन काल में आ जाती है, तो सूर्य मानो इसके वमन किए हुए तरंगों को मानो अपने में ग्रहण करने लगता है। किरणों के द्वारा वह मानो वह मानो वह किरणें वह परमाणु चले जाते हैं, और वह परमाणु वह जो धाराएं हैं। विषधर जितने भी पृथ्वी पर मानो देखो, विषधर प्राणी हैं, चाहे वह सर्पराज हो, सर्पराजों की कोटि में कोई भी विषधर प्राणी हो, वह सूर्य की किरणों को ले लेती है, मानो किरणों को ले करके वह उन किरणों में से विष को अपने में ग्रहण कर लेती हैं। पृथ्वी में से विष को ले लेते हैं, और वह अमृत को प्रदान कर देते हैं। और वह जब अमृत को प्रदान कर देते हैं, तो सूर्य की आभा में, मानो वह तपती रहती हैं। और तपायमान हो करके सूर्य हमारा पितर कहलाता है। सूर्य ने विचारा, सूर्य के आंगन विषय विषय में मुनिवरों! देखो, आचार्यों ने एक रूपान्तर बनाया एक रूपरेखा बनाई आलांकारिक रूपों में की सूर्य द्यौ के द्वार पर पंहुचा, और द्यौ से जब प्रकाश और ऊर्ज्वा को लेने लगा तो मानो देखो, उस समय मानो द्यौ ने कहा हे सूर्य! ये तुम क्या कर रहे हो? तो सूर्य ने कहा सम्भो ब्रहा सम्भो भावाम् ब्रहे मैं तेरे से ऊर्ज्वा को ले रहा हूँ। प्रभु मैं (पुस्तक से) तेरा पुत्र हूँ मैं तेरे समीप आया हूँ, भगवन! तेरा कितना विशालतम विज्ञान है, वह सूर्य पितर कहलाता है। शिशु की एक बिन्दु में भी सूर्य की किरण विद्यमान रहती है, वह बिन्दु माता के गर्भ में पंहुचा, वहाँ भी उस बिन्दु को शिशु को प्रकाश विभाजित कर देता है। और माता उस मेरे देव से वंचित हो जाती है, वह पितर बन करके तपा रही है, प्रकाश दे रहा है, मुनिवरों! देखो, वही प्रकाश बन करके बाह्य जगत में आ जाता है, तू कैसा अनुपम पितर है, तू कैसा पितर बना हुआ है।

देखो, जब इस पृथ्वी पर नाना प्रकार के पापाचरण होने लगते हैं, तो उस समय सूर्य समुद्रों से कहता है कि हे समुद्र! तुम अग्नि बन करके मेरे में प्रवेश कर जाओ। तो सूर्य द्यौ से अपनी किरणों के द्वारा सम्मिलान करके वहाँ बड़वानल नाम की अग्नि बन करके समुद्रों में अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। राजा के राष्ट्र में नाना प्रकार के पापाचरण को पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करके वह जल प्लावन का रूप धारण कर लेता है। वही तो जल प्लावन लाता है।

मुनिवरों! देखो, वह कैसा पितर है। जो समय-समय पर दण्डित करता रहता है, अपनी आभा में नृत्त करता रहता है, वह पितर हमारे लिए कितना कल्याण कारक है। हमें अपनी संरक्षणता में, अपने में धारण करके नाना प्रकार की किरणों के द्वारा, हमें ओजस्वी बनाता है, तेजोमयी बनाता है, मैं विचार दे रहा हूँ कि सूर्य हमारा पितर है।

आचार्यों ने अपना विचार वर्णन करते हुए कहा है कि विषधर प्राणी भी तो पितर कहलाते हैं, क्योंकि वह विष को अपने में धारण कर हमें अमृत प्रदान करते हैं, महर्षि शाकल्य मुनि ने कहा कि हे मुनिवरों! मेरे विचारें में तो यह आता है कि विषधर प्राणी से ले करके किरणों तक जो सूर्य आभा में रत्त रहने वाला है, वह हमारा पितर कहलाता है, यह वाक् उच्चारण करके शाकल्य मुनि महाराज अपने में समाहित हो गएं और उन्होंने कहा कि मेरे विचार में तो यह सर्वत्र देखो, सर्प भी हमारा पितर है। सर्प के अंग संग रहने वाले विषैले प्राणी जो पृथ्वी के गर्भ

में रहते हैं, उसी पृथ्वी के गर्भ में खनिज तप रहा है, खाद्य तप रहा है वही जल तपायमान हो करके अपने वाहन क्रियाकलाप कर रहे हैं। विचार-विनिमय क कि वेद का आचार्य यह कहता है कि यह सब हमारे पितर हैं, सूर्य इन सब पितरों का पितर कहलाता है। क्योंकि वह सबकी संरक्षणता में रहता है, मैं कोई वक्तव्य देने नही आया हूँ, केवल तुम्हें सूक्ष्म रूपों से एक परिचय देने के लिए आया हूँ। वेद के ऋषि ने कहा कि सम्भवा लोकाम् पितरश्चमा वाचन्नमाः वह पितरों के रूप में इनकी उपासना करने वाले बनें। परन्तु अभिप्रायः वही है जो महर्षि लोमश ने कहा कि रक्षा करने वाले पितर कहते हैं, और पितर शब्द की अनेक प्रकार से विवेचना की जा सकती है। यह विवेचना दे करके शाकल्य मुनि महाराज मौन हो गये, तीनों ऋषि अपने-अपने वाक् को प्रगट करके अपनी-अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो गएं, और मौन हो करके न्यौदा में मन्त्रों का उच्चारण करके, शान्ति का दान प्राप्त करने के लिए उन्होंने प्रभु से याचना की।

बेटा! आज का वाक् समाप्त हो गया। मैं कल भी पितर या के सम्बन्ध में विचार दूंगा, आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार हो जाएं। मंगलम् ब्रहे देखो, मैं मंगलमय कामना कर रहा हूँ कि हम पितरों की विवेचना में रत्त रहें क्योंकि प्रत्येक आभा में पितर ही पितर विद्यमान हैं हे प्रभु! आप तो सर्वत्र पिता हैं आपकी उपासना करते हुए पितरों की विवेचना में रत्त हो गएं हैं समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगें। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

६ अग्नि का पितृ रूप ०६ ०८ १९८५

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन किया जाता है तो इसीलिए वेद की आख्यिका कहती है हे मानव! तू उस परमपिता को अपना वरूणा बना अथवा उसे वरने वाला बन। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा पुरोहित हैं, वह वरणीय माने गएं हैं, जो भी मानव उसको अपना वरुणा बना लेता है, अथवा उसे वर लेता है, वह प्रायः उसी को प्राप्त हो जाते हैं। क्योंकि जो उसे अपना वरण बना लेता है, मानो वह उसी की आभा में रत्त हो जाता है। तो विचार क्या है वेद का मन्त्र यह कहता है, वरुणो ब्रहे वरणा मानो उसको तू अपना वरण कर, जैसे यज्ञशाला में मानव यज्ञमान ब्रह्मा का अपने में वरण करता है और उसे वर लेता है, इसी प्रकार, हम उस परमपिता परमात्मा को अपना वरणीय बनाते हैं, और जो वरणे वाला है उसी को वह प्राप्त हो जाएं। मानो ऐसा हमारा वेद की एक आख्यिका है। परन्तु आज का हमारा यह विचार, वेदमन्त्रों में क्या-क्या हमारे में, रहस्यतम मननशील विचारों में, बेटा! हम परिणत हो जाते हैं आज का हमारा वेदमन्त्र कहता है हे इन्द्रोभो! मानो तू दया कर, महानता के लिए वृष्टि कर। जिससे तेरी महान, वृष्टि हो करके, हम सोम को पान करते रहे, परन्तु सोम के सम्बन्ध में, भिन्न-भिन्न प्रकार की उड़ान है, ऋषि-मुनियों की, सोम की कल्पना करता है। मेरे प्यारी माता भी बाल्य से कहती है कि सोम का पान कर, और स्वयं भी सोम को अपने में धारण कर। परन्तु वाक् तो बड़ा प्रियतम माना गया है। वेद का आचार्य कहता है, कि हे मानव! तू अपनी मानवीयता को ऊँचा बना करके, तू सोम का पान कर। परन्तु सोम किसे कहते है? हमारा यहाँ सोम, जो वास्तविक सोम है, उसको तो ऋषि-मुनि ही पान करते हैं। मानो वह नाना प्रकार के वृक्षों की, पंचांग को पान करके योगाभ्यास में आरूढ़ हो जाते हैं। और मन और प्राण की दोनों की सन्धि कराने में लगे रहते हैं, मानो जब दोनों की सन्धि हुई, तो आत्मा और परमात्मा की सन्धि हो जाती है। जब वहां बेटा! सन्धि होने पर, योगी को आनन्दमयी सोम जो प्राप्त होता है तो वह सोम अपने में एक महान बन करके रहता है। तो बेटा! मैं सोम की विवेचना तो देने नही आया हूँ, परन्तु आयुर्वेदाचार्यों ने भी सोम की कल्पना की है, मानो यह जो हमारे यहाँ नाना वैद्यराजों की, दर्शनों में यह प्रतीत हुआ, कि वह भी अपनी औषधियों का सोम रस बनाते और उनके मनों की प्रवृत्तियां मानो ऊर्ध्वा गति में रत्त रही हैं, ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ती रही हैं। मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहाँ एक सर्पकेतनी एक औषध होती है, जिसका नाम ऋषि-मुनि साधक जन आसन बनाते हैं और आसन बना करके मानो देखो, अपने में अपनी सिद्धियों को प्राप्त हो जाते हैं मानो देखो, आसन में एक विशेषता रहती है जो पृथ्वी की विद्युत को अपने में सिंचन करने वाली औषधियां होती हैं, और वह जब मानव उसका आसन बनाता है, तो उससे वह अपने में तरंगों में परिणत हो करके, वह तरंगित होता रहता है। परन्तु हमारे आसन का बड़ा प्रभाव होता है, उसमें किसी औषधियों में, विद्युत की विशेषताएं होती है, विद्युत उसमें हरण, वृत्तियों में परिणत हो जाती हैं। तो मेरे पुत्रों! मैं इस सम्बन्ध में कोई विशेष विवेचना देने नही आया हूँ, क्या मैं सोम की गाथा गाता रहूं। बेटा! जब पूज्यपाद गुरुजन शिष्य को अपने चरणों में ओत-प्रोत करा करके, सोम का पान कराते हैं, तो माता अपनी लोरियों का पान करके, सोम का पान कराती रही है।

आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा वेदमन्त्र कुछ कह रहा है, सोम की गाथा आ रही है। परन्तु आओ, मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ ऋषि-मुनि अपना विचार देते रहते थे, और वह यह जानते है कि हम

अकाटय विचार मन्थन किए विचारों में जो देंगें तो इन विचारों को जब मानेगा तो इनका विनाश नही होगा, तो इन वाक्यों में हमारे विचारों में मानो देखो, मन्थानं ब्रहे ब्रहा मुनिवरों! देखो, काटने की शक्ति नही होगी तो रूढ़ि नही बनेगी। क्योंकि प्रायः ऐसा होता है जो महापुरूष बिना तपस्या के अपने स्वार्थ, अपने अधूरे ज्ञान के आधार पर, वह परमात्मा को अपना आश्रय न बना करके, वह घोषणा कर दे, तो वह रूढ़ि का संदेह बना रहता है। तो मेरे पुत्रों! ऋषि-मुनि अपने तपस्या में लगे रहते हैं मानो एक तपस्वी अपने आसन पर मानो एकत्रित हो करके अपना विचार व्यक्त करते हैं। तो मुनिवरों! देखो, इससे पूर्व काल में, ऋषि-मुनियों के अकाटय विचार तुमने श्रवण किए, मानो एक दूसरे से समन्वय करते हुए एक दूसरे की धारा एक दूसरे में परिणत हो करके, मानो देखो, इसका ओजस्तव बन जाता है।

तो विचार-विनिमय क्या, मुनिवरों! देखो, मैं तुम्हें उस क्षेत्र में जहाँ, ऋषि-मुनियों का विचार-विनिमय हो रहा है, एक मानो देखो, पितर याग की चर्चाएं चल रही हैं, पितर यागों की चर्चाओं, में मैंने दो ही शब्दों का, एक ही शब्द को उद्बुद्ध किया है कि जो रक्षा करने वाला हो वह पितर कहलाता है। तो आज उसका विस्तार उसकी भूमिका बनाने में, हम यह जानते हैं, हम यह जानने के उत्सुक भी रहते हैं, जानते भी हैं क्या मानो हमारे कितने पितर कहलाते हैं, और उन पितरों में महानता की प्रतिभा मानो अपने में प्रकाशित होती रहती है। तो मेरे पुत्रों! देखो, यह वाक्, विचार बेटा! ऋषि मुनियों के द्वारा एक विचार बना रहता है और वह कहते रहते हैं पितर कितने प्रकार के होते हैं? कौन-कौन हमारे पितर हैं? मानो बेटा! इसके ऊपर हम बेटा! अपने विचारों को व्यक्त कर रहे थे। ऋषि-मुनियों ने अपने विचार दिए हैं तो मानो देखो, इससे पूर्व काल में हम उच्चारण कर रहे थे, सूर्य हमारा पितर कहलाता है। और सूर्य के संरक्षण में रहने वाले, मानो देखो, विषधर भी हमारे पितर कहलाते हैं, ऐसा एक वाक् आया, परन्तु ऋषि-मुनि प्रवाहण जी उपस्थित हो करके बोले क्या महाराज! ऋषि ने अपना विचार तो हमें व्यक्त कराया है, हम बड़े प्रसन्न है, परन्तु ऋषि-मुनि और भी विद्यमान हैं, अपना-अपना विचार व्यक्त कर सकते हैं, पितर याग के सम्बन्ध में, मानो देखो, पितर यागी कौन जैसे विश्वामित्र ने पितर याग के सम्बन्ध में सूर्य को पितर माना है, तो और भी ऋषि-मुनि अपना विचार व्यक्त करें। मेरे पुत्रों! देखो, इतने में ही सभा में महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज, और माता अरूणधती विद्यमान हैं। तो माता अरूणधती उपस्थित हो गई, और माता अरूणधती ने कहा कि हे ऋषियों! तुम सब ब्रह्मवेत्ता हो, परन्तु तुम पितर याग के सम्बन्ध में अपना-अपना विचार दे रहे हो, अपना-अपना मन्थन किया हुआ जो वेद का वाक् है, उसे उच्चारण कर रहे हो। परन्तु मेरे विचार में यह आता है, कि यह संसार जितना भी है, इस ब्रह्माण्ड की आभा में जितना भी यह क्रियाकलाप हो रहा है, वह सर्वत्र मानो एक दूसरें में गुथा हुआ, होने से, वह सर्वत्र ही पितर कहलाता है। परन्तु देखो, हमारे आचर्यों ने पूर्व विचार वेत्ताओं ने पूर्व अपना एक विचार दिया है कि सूर्य एक पितर है, और नाना मानो देखो, प्राणी भी मानो हमारे पितरों का क्रियाकलाप करते रहे हैं। जैसे हमारे यहाँ मछली मानो जो जल में रहने वाला एक प्राणी है, वह प्राणी है कैसा विचित्र है? मानो देखो, उसी में श्वास लेता है, उसी में आहार करता है, उसी में उम्मीच करता है, परन्तु वह करता रहता है, वह कैसा विचित्र है, जल में किसी भी प्रकार का विष हो उसे मानो देखो, अपने में ही पान करता है, वह अपने पान करता रहता है। तो विचार आता है कि समुद्रों में नाना प्रकार के प्राणी होते हैं, और वह नाना प्रकार के प्राणी मानो एक दूसरे के सहायतार्थ में लगे रहते हैं, मानो देखो, आहार करते हैं, क्या विष को आहार करते हैं, वह अमृत को प्रदान करते हैं। मेरे प्रभु का कैसा यह विधान है? क्या एक मानव बन करके कर्म कर रहा है, वह कर्मों में निकृष्टता आ जाती है, उसे योनियां मानो देखो, निकृष्ट प्राप्त होती हैं, और वह निकृष्ट प्राणियों में भी प्रभु क्या मानो क्या परोपकार ओत-प्रोत कर दिया है। उसका अपना स्वाभाविक गुण बना दिया है। वह कोई न कोई

परोपकार को ले करके आता है, वह दूसरों के लिए कुछ देता है कैसा मेरे प्यारे प्रभु का यह विधान है, मेरे पुत्रों! समुद्रों में रहने वाला मछली एक प्राणी है परन्तु और भी नाना प्रकार के प्राणी हैं, परन्तु देखो, वे देते क्या यहाँ अमृत देते हैं, और वह मानो आहार क्या करते हैं विष को आहार कर जाते हैं मानो देखो, समुद्र, यह जो पृथ्वी के द्वारा प्राणी रहता है, यह जो विष उगलता है, पृथ्वी विष वमन करती है प्राणी उसमें विष वमन करता है और वह तरंगें समुद्रों में जाती है जल में यह विशेषता होती है क्या जल मुनिवरों! देखो, यह विष की तरंगों को अपने में सिंचन कर लेता है, अपने में ग्रहण कर लेता है। इसीलिए हमारे यहाँ यज्ञशाला में मानो देखो, वरुण का पूजन होता है मानो देखो, कलश का पूजन होता है। कलश का अभिप्रायः यह है कलशं ब्रीहि वर्णा अस्वति मेरे प्यारे! देखो, उसका पूजन करता है ब्राह्मण कहता है हे वरुण! तू हमारा कल्याण करने वाला है मानो ईशान कोण में यज्ञशाला में वह स्थापित किया जाता है क्यों किया जाता है ईशाण कोण में? क्योकि वहाँ से प्रकाश आता है, और जब प्रकाश आता है तो देखो, वर्णं ब्रहे, वह जो कलश है उसमें जो जल है उसमें सूर्य की किरणें प्रातःकाल में मानो देखो, कुछ दोषों को ले करके गमन करती हैं, तो जल जो मानो कलश है मानो इसको सिंचन करता है, अग्नि में जैसे यज्ञमान होताजन आहुति देते हैं, परन्तु देखो, जो अग्नि विष को उगलती है, उसको वह जल अपने में ग्रहण करता है, वह आपो कहलाता है मानो उसका वह शोधन करता है, इसी प्रकार यह जो समुद्र है समुद्र में भी मानो जो भी हम उगलतें हैं, प्राणी मात्र, उसको मानो देखो, वह समुद्र अपने में ग्रहण कर लेता है, जल अपने में सिंचन कर लेता है, उसी जल में रहने वाला जो प्राणी मछली है, मानो देखो, वह अपने में ही अपनेपन में लय हो जाता है। वह देखो, अपने में सिंचन कर रही है, श्वासों मानव के द्वारा अमृत दे रही है, वह जल का शोधन हो रहा है। मेरे प्यारे! देखो, जल का जब शोधन होता है तो अनावृष्टि नही हुआ करती है, समय समय पर वृष्टि होती है। मेरे पुत्रों! देखो, प्रभु का कैसा विचित्र रचना है, मछली ने कर्म तो निकृष्ट किए हैं, परन्तु निकृष्ट कर्म करके मछली का जीवन प्राप्त हुआ। परन्तु वाह रे मेरे प्रभु! तू कितना विचित्र है कि उसके कर्मफल जल में वास करने के हैं, परन्तु उसका इन्द्रियों का भी विशेष निर्माण नही हुआ है, परन्तु उसमें एक गुण प्रभु ने प्रदान कर दिया, कि वह मानो देखो, विष को अपने में ग्रहण करती रही है, जल का शोधन करती है वाह रे मेरे प्रभु आपने कैसे-कैसे प्राणियों का निर्माण किया है। परन्तु अनन्य प्राणी हैं, जो समुद्रों के आँगन में बेटा! गमन करते हैं। और विष को अपने में सिंचन करते रहते हैं, यदि यह प्राणी समुद्रों में न हो तो अन्य प्राणी एक क्षण समय भी संसार में श्वास नही ले सकते।

तो मेरे प्यारे! मैंने बहुत पुरातन काल में निर्णय दिया था, क्या मुनिवरों! देखो, सम्भोति ब्रह्मा मानो देखो, ऋषि-मुनियों की सभा में, माता अरूणधती ने यह वाक् वर्णन किया उन्होंने कहा कि यह जो मानं ब्रहे अस्वादन है यह जो समुद्र है इसमें देखो, कैसा प्राणी रहता है इसी प्रकार यह मानो देखो, पितरों की कोटि में तो आता नही परन्तु यह पितरों से कुछ सूक्ष्म भी नही हैं। मेरे प्यारे! देखो, भगवान मनु का एक वर्णन दिया उन्होंने कहा भगवान मनु की रक्षा करने वाली, नौका की जल प्लावन में रक्षा करने वाली, मछली थी। जो मानो देखो, एक सींग वाली मछली होती है, समुद्रों में सींग वाली मछली होती है और उसका बेटा! तो वर्तमान का तो मुझे प्रतीत नही हैं परन्तु समुद्रो में एक सींग वाली मछली होती थी, जो विशाल, मेरे प्यारे! देखो, उसने अपने सींग से नौका को जकड़ लिया था, जब जल प्लवान आया था, वह जल प्लावन मेरे प्यारे! देखो, मछली ने ऋषि की रक्षा की। तो इसीलिए रक्षा करने वाला प्राणी को पितरों की कोटि में नियुक्त किया गया है। तो मेरे प्यारे! देखो, वह कोटि ब्रहे वाचन माना गया है, तो हमारे आचार्यों ने, यह कहा कि हे मानव! तू अपने जीवन को मंगलमय बना, और उस आहार को कर जो वास्तव में मानव का आहार है, मेरे प्यारे! यूं तो संसार में, एक प्राणी दूसरे प्राणी का भक्षण भी

कर रहा है। जैसे रक्षा कर रहा है ऐसे भक्षण भी कर रहा है। परन्तु उस भक्षण प्रणाली को त्याग करके, तू रक्षा की परम्परा को अपनाने वाला बन, तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने, यह वर्णन करके बेटा! अपने में मौन हो गई, क्या मैंने तो यह विचार किया कि प्रत्येक प्राणी की रक्षा होनी चाहिए, यह हमारे पितर कहलाते हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, जब वह शान्त हो गई तो वह प्रवाहण पुनः उपस्थित हुए उन्होने कहा और कोई विचार देना चाहता हो पितरों के सम्बन्ध में तो मेरे पुत्रों! देखो, इतने में महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज उपस्थित हुए और वशिष्ठ मुनि बोले कि मैं मानो पितरों के सम्बन्ध में तो मानो कुछ कहना नही चाहता उच्चारण करना क्योंकि अपना-अपना व्यक्तव्य बहुत दिया हैं। और यह सब पितरों की कोटि में ही जगत माना गया है। परन्तु देखो, जब तुमने विचारार्थ मुझे भी कहा है, तो मैं भी इस सम्बन्ध में सूक्ष्म से अपना कुछ व्यक्तव्य अपना विचार दूंगा, संक्षिप्त में मानो मेरा जो यह मन्तव्य रहा है कि जितने भी पंचमहाभूत हैं यह सर्वत्र मानो पितर कहलाते हैं, जैसे पूर्व मानो ऋषि-मुनियों ने कहा है कि सूर्य हमारा पितर कहलाता है तो मानो देखो, जहाँ सूर्य पितर है, वहाँ मानो आपो भी पितर है, जहाँ आपो पितर है, वहाँ अग्नि भी पितर कहलाता है, यह जो अग्नि हमारी रक्षा करती है, और यह अग्नि कैसे रक्षा करती है, यह अग्नि मानो भिन्न-भिन्न रूपों में गमन करती रहती है यही अग्नि मानो शीतल बनाने वाली है यही अग्नि उष्ण बनाने वाली है मानो अग्नि के भिन्न-भिन्न प्रकार के भेदन माने गएं है। मानो देखो, यह अग्नि जब मेरे प्यारे! देखो, जिसमें मिश्रण जल हो जाता है, आपम् ब्रह्मे वाचो मेरे प्यारे! देखो, जल और अग्नि और वायु की जब पुट लग जाती है तो बेटा! यह अग्नि शीतल बन करके रहती है। जब मेरे प्यारे! देखो, यही अग्नि जब केवल्य रह जाती है तो मानो देखो, परमाणु बन करके रहती है, जब यह अग्नि मानो देखो, यह जब किसी के सम्पर्क में, समिधा के सम्पर्क में आती है तो यह आज्याहुति बन जाती है। मानो यही अग्नि है जो अग्नि, लौकिक अग्नि को बेटा! जागरूक करती रहती है वह लौकिक अग्नि कहाँ रहती है बेटा! काष्ठों में रहती है। वह अग्नि कहाँ रहती है बेटा! पृथ्वी के समन्वय से होती हुई बेटा! देखो, अपने स्वरूप को अपने में धारण करने लगती है वही अग्नि बेटा! देखो, विचित्र बन करके, मानव के नेत्रों में समाहित हो जाती है। मेरे प्यारे! देखो, मानव दृष्टिपात कर रहा है, उसका मानो सूक्ष्म रूप उस अग्नि का नेत्र बन गया है, और उसका विशाल रूप बन करके बेटा! वही अग्नि बन गई है, वह वैश्वानर अग्नि बन करके रहती है। मेरे प्यारे! देखो, वही अग्नि वाणी बन करके रहती है, जब वह मानव के शरीरों में रहती है, तो वही अग्नि मानो देखो, वाणी बन करके रहती है, मानव वाक्यों की रचना करता रहता है, वाक् में जब रचनाकार रचना करता है, जब मानो अग्नि हो, विशेष और अग्नि में मानो देखो, जल की धाराओं की पुट लग जाती है, और वायु का वेग उसमें मिश्रण हो जाता है, तो बेटा! वाक् की रचना हो जाती है। तो बेटा! वाक् की जहाँ रचना हुई, रचना होते हुए मेरे पुत्रों! देखो, वाक् बन गया, तो वाक् अग्नि में मानो देखो, वह वाणी अग्नि बन करके रहती है, बेटा! वह अग्नि मानो देखो, यदि वह साधारण रूप में अग्नि वैश्वानर नाम की कोटि में रहती है, तो मानव वह मधुर वाक्यों को ग्रहण करता रहता है उनको अपने में धारण करता रहता है उसी मानो देखो, वाणी में जब घृणा की पुट लग जाती है तो वही वाणी बेटा! देखो, वह मानो देखो, तीक्ष्ण बन जाती है। मानो यदि वह तीक्ष्ण बन करके, राष्ट्रों को घृणात्मक बना देती है, तो राष्ट्र भयंकर अग्नि का काण्ड बन जाते हैं। ग्रह में घृणात्मक अग्नि के साथ, शस्त्रों की पुट लगा देता है तो गृह अग्नि के काण्ड बन जाते हैं। मानो देखो, यदि कोई वृद्ध है, मानो देखो, वृद्ध के प्रति एक अशुद्ध शब्द बाल्य कह रहा है तो वह मानो देखो, भयंकर अग्नि बन करके रहता है तो अग्नि का बेटा! कितना विशाल स्वरूप माना गया है।

तो विचार-विनिमय क्या बेटा! देखो, यह अग्नि मानो काष्ठों में रहने वाली है, काष्ठ जहाँ एक काष्ठ का दूसरे काष्ठ से मिलान हुआ, मानो देखो, अग्नि अपने स्वरूप को धारण कर लेती है, वास्तव में देखो, वायु का वेग वायु

पुट लगते ही देखो, अग्नि अपने स्वरूप में प्रवेश हो जाती है। जल की धाराओं का मिलान होते हैं बेटा! देखो, पिण्ड की धाराओं में रत्त हो जाते हैं। तो मेरे प्यारे प्रभु का कितना विशाल यह विज्ञान है वेद का ऋषि तो बहुत कुछ कहता है, वेद क्या कहता है, वेद यही तो कहता है कि ज्ञान को अपने में श्रवण करो। मेरे प्यारे! देखो, वेद का ऋषि क्या कह रहा है? आचार्य ने कितनी अपनी घोषणाएं की हैं, आज मैं तुम्हें उस वाक्यों की अग्नि के विशाल रूपों में ले जाऊंगा, बेटा! यही अग्नि है एक पाण्डितव वेदों का अध्ययन कर रहा है, अध्ययन करता हुआ, वह मानो देखो, उद्गीत गा रहा है, जटा पाठ गा रहा है, मनोनीतता में अग्नि को घृणात्मक अग्नि शान्त है वह द्वेषाग्नि शान्त है मेरे प्यारे! देखो, वह धीमी-धीमी अग्नि रसों को ले करके जब गमन करती है, तो मुनिवरों! देखो, वही रस तीक्ष्ण प्राणियों के हृदयों को स्पर्श करता है, तो वह भी बेटा! शीतल बन जाते हैं।

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है वशिष्ठ जी कहते है। कि एक समय मानो देखो, पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा ब्रह्म विद्या को पान कर रहा था, तो ब्रह्म विद्या को पान करके श्वेतकेतु ऋषि महाराज मेरे ब्रह्म के मानो देखो, पितर कहलाते थे वह एक समय बोले कि हे ब्रह्मचारी! चलो, आज भ्रमण करते हुए ऋषि-मुनियों के दर्शन करेंगे, तो मानो देखो, पूज्यपाद गुरुदेव हम मानो भ्रमण करते हुए मुनिवरों! देखो, कहीं दण्डक वनों में पंहुचे, दण्डक वनों में एक ऋषि रहते थे, जिन ऋषि का नाम तुयंगत ऋषि महाराज था तो तुयंगत ऋषि महाराज मानो देखो, अपने में साधना प्रभु के द्वार पर जाना चाहते थे, तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा हे तुयंगेत्वर ऋषि महाराज! यह तुम क्या कर रहे हो? क्यों विराजमान हो? तो उन्होंने कहा-प्रभु! मैं मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करना चाहता हूँ, मैं ग्रहण करने से पूर्व यह विचार रहा हूँ, क्या कौन-सी धारा को मैं अपनाऊं? कहीं तो वेद का मन्त्र अग्नि को ब्रह्माग्नि कहता है, कहीं वायु के वेग को प्राणों की धारा कहता है, और प्राण कहीं परमात्मा से सम्बन्धित है। तो मैं इस चिन्तन में लगा हुआ हूँ, कि कौन-सी धारा को अपनाऊं। तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव बोले कि क्या हे तुयंगेत्वर ऋषि महाराज! तुमने कौन-सी धारा को अपनाया है? उन्होंने कहा मैंने अग्नि की धारओं को अपनाने का प्रयास किया है। मानो यह अग्नि, वाणी के रसों में प्रवेश कर जाती है। तो शीतल बन जाती है मानो देखो, मैं इसको शीतल बनाने के लिए अब मैं याग कर्म कर रहा हूँ। मानो देखो, वह अपने में याग करने लगे, जब यागां भविते पितर यागों में लग गएं तो मुनिवरों! देखो, वह पितर यागां भविते योगां उन्होंने पुनः कहा कि भगवन्! यह तुम क्या कर रहे हो? उन्होंने कहा मैं पितर याग कर रहा हूँ। मैं पितरों की पूजा करना चाहता हूँ, जिससे मेरा वायुमण्डल पवित्र बन करके, मेरा अन्तर्हृदय पवित्र हो जाएं। तो मानो देखो, अग्नि का चयन कर रहे हैं, वह अग्नि का चयन कैसे करते थे? मानो अग्नि प्रदीप्त हो रही है, उससे समीप विद्यमान हैं, मानो देखो, उसे नमस्कार करके कहते हैं, हे अग्नि! तू प्रकाश का द्यौतक है, प्रकाश देने वाली है, हे अग्नि! तू जिस रूप में मुझे दृष्टिपात कर रही है, रूप तेरा जब विच्छेद हो जाता है, तो तू वाणी के रूप में प्रवेश कर जाती है, जब वाणी का रूप ही तेरा विच्छेद हो जाता है, तो तू मानो देखो, वायु की प्रतिभा को ले करके तू प्राण के साथ मेरे अन्तर्हृदय में रमण करती है, मानो देखो, जब उससे भी ऊर्ध्वा में गति करती है, तो मन को सहकारिता बना करके, प्रभु की पगडण्डी से मिलन की पगडण्डी को ग्रहण करती है, मानो देखो, इस अग्नि के ऊपर, वह चयन करने लगे जब चयन करने लगे, तो पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा हे ऋषिवर! हे पुत्रों! यह अग्नि का चयन कर रहा है, यह अग्नि को पितर जान करके इसका चयन कर रहा है चलो, आज हम भी पितर याग करेंगें। मानो देखो, अग्नि का चयन करेंगें। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा क्या हम दोनों भयंकर वनों में, दूरी जा करके पूज्यपाद गुरुदेव के संरक्षण में भयंकर वनों में मानो अग्नि का चयन करने लगे, वह अग्नि जो हमारे अन्तर्हृदयों में प्रदीप्त हो रही थी, मानो हम दोनों उसका चयन करने लगे, तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कहा करते थे, क्या यह जो अग्नि का चयन मैं कर रहा हूँ, मानो यही तो अग्नि का चयन जब मैं वैज्ञानिको के द्वार

पर जाते हैं, तो अग्नि तरंगें बन करके मानो देखो, वह यन्त्रों का निर्माणित करने लगती है, यन्त्रवादी बन करके, वैज्ञानिक ऊँचा बनता है, वह पूजा कर रहा है, मानो देखो, आओ, हम भी आज वाणी की पूजा करें, यह वाणी मानो देखो, अग्नि बन करके रहती है। मानो उस अग्नि का पूजन करने लगे, बेटा! वह विचित्र अग्नि, जो वाणी के रूप में रहती हैं, विचित्र अग्नि है, जो मानो त्रिगुणात्मक रूपों में रहती है। मेरे प्यारे! देखो, वही अग्नि है जो भृकुटी में बेटा! देखो, ध्यानावस्थित हो करके, उसमें वायु की पुट लगी रहती है, मानो वही अग्नि देखो, जब ब्रह्मरन्ध्र में मुनिवरों! देखो, योगी प्रवेश करता है तो वहाँ नाना प्रकार के अनहाद, स्वर ध्वनियां होती रहती हैं, प्राणों की स्वर ध्वनियां भी इसको ले करके होती हैं, मानो देखो, उन्हीं स्वरों को, अपने में ग्रहण करता हुआ, बेटा! देखो, बुद्धिमान व्याकरण की रचना कर देता है, व्याकरण की रचना का जो प्रादुर्भाव हुआ है, वह बेटा! मानव के मस्तिष्क में, जो मेरे प्यारे प्रभु ने मानो देखो, नाड़ियों का जो आपस में तारतम्य लगा हुआ है, नाड़ियों का जो ब्रीच लगा हुआ है वहाँ जब अग्नि का वेग जाता है। वायु को ले करके, तो भिन्न-भिन्न प्रकार की ध्वनियां होने लगती हैं। तो बाह्य ध्वनि नही आती है, वही ध्वनि मुनिवरों! देखो, व्याकरण की उत्पति का मूल बनती है।

तो विचार आया वेद के ऋषि ने कहा तो यह पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कहा है कि यदि तुम पितरों की सेवा करना चाहते हो तो पितरों की आज्ञा का पालन करना चाहते हो तो तुम अग्नि को अपना पितर बना करके चलो, और मानो तुम अपनी वाणी में पुट लगा करके वायु की पुट उसमें लग करके मानो देखो, ब्रह्मरन्ध्र से ले करके, मूलाधार से ले करके ब्रह्मरन्ध्रों तक जो भी ध्वनि का पिपाद आए उसको ग्रहण करने का नाम अग्नि की पूजा है, और वह अग्नि हमारा पितर बन करके रहती है। मानो वही तो अग्नि पितर कहलाती है।

तो मुनिवरों! देखो, पितरों के सम्बन्ध में आचार्य ने कहा महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज ने कहा कि यह मानो देखो, अग्नि हमारा पितर है अग्नि के भिन्न-भिन्न प्रकार के स्वरूप आज मानो देखो, पर्वतों की माला में जब हम जाते हैं तो वहाँ एक मानो देखो, जल का पिण्ड बन करके मानो देखो, शीतल रूप में हमारे समीप आता है यदि वह पिण्ड का स्वरूप नही बनता और पिण्ड का स्वरूप बिना अग्नि के बन नही सकता था, परन्तु वायु और अग्नि की पुट जब जल में प्रवेश हो जाती है, तो तभी वह पिण्ड बनता है, वह पिण्ड बनता है, पिण्ड बन करके जैसे मानं ब्रहे कृतां वही अग्नि है, मेरे प्यारे! देखो, धीमी-धीमी अग्नि वह पिण्ड अग्नि समाप्त हो करके द्वितीय अग्नि की पुट लगती है वही जल का पिण्ड मेरे प्यारे! शनै-शनै जल के रूप में आ करके, नद नदियों के रूप में आ जाता है, वही जल अन्नाद में प्रदान किया जाता है, वही अन्न मानो देखो, उत्पन्न हो करके मानव के समीप आता है। वाह रे प्रभु! तू कैसा तू कैसा पितर है, हे भगवन! ब्रह्मवाचों तेरी सृष्टि के ऊपर जब मैं विचार करता हूँ तो निरूतर हो जाता हूँ। तू कैसा गम्भीर है, तू कैसा महान है, मेरे प्यारे! देखो, हे अग्नि तू कैसा कैसा पितर है, तू पिण्ड बनाता है, और पिण्ड बना करके उसी रूप में प्रदान कर देता है और वह रूप बन करके पिण्ड बना देता है, सूक्ष्म पिण्ड बना देता है, वाह रे प्रभु! तू कैसा पिण्ड बना रहा है। मानो देखो, कहीं तो जल का पिण्ड बना करके तू हमें शनै-शनै नद-नदियों के रूप में आता है वही मानो देखो, प्राण वर्धक, प्राण वर्धक वायु उसे तेज देता है और वही जब कृषक के द्वार पर जाता है तो वही मानो देखो, अन्न के कणों को एकत्रित करके, उनका वह पिण्ड बना देता है, तो वह भी मेरे प्यारे! देखो, एक दूसरे का पिण्ड बन जाता है मुनिवरों! देखो, यह वाक् जब ऋषि ने उच्चारण किया उन्होंने कहा मेरे विचार में यह अग्नि मानो देखो, पितर कहलाती है हमें इसकी पूजा करनी चाहिए, पितरों की पूजा करना बहुत अनिवार्य है। आज जब मैं मानो देखो, यह जो संसार के पितर हैं, मानो देखो, इनकी पूजा करना क्या? इनकी आज्ञा का पालन करना है, उनके कुछ गुणाधानम् करना है, परन्तु देखो, विस्तृत व्याख्या में पंहुचोगे तो जड़वत् जो देवता है, जड़वत् जो हमारे लिए पितर हैं, वह हमारे जीवन को मानो देखो, प्रदान कर रहे

हैं, यह आभा किससे प्राप्त होती है? तो मेरे पुत्रों! मुझे कुछ ऐसा स्मरण है, क्या यह वाक् कह करके मुनिवरों! देखो, वशिष्ठ मुनि ने यह कहा, कि भई! मैं तो देखो, अग्नि को अपना पितर स्वीकार करता हूँ, यह अग्नि भी पितर है, इसको जानना इसके स्वरूप को जानना मानो वह पितर याग कहलाता है मानो देखो, अग्नि मे हम अशुद्ध वाक् न परिणत करें, यह वाणी भी अग्नि बन करके रहती है। वेग में गति करती है, मानो तरंगें बन करके, अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत हो जाती है। इसी प्रकार यह अग्नि मानो काष्ठों में रहती है, यह अग्नि अपने स्वरूप में प्रवेश हो जाती है, जैसे मुनिवरों! देखो, योगेश्वर, अपने नेत्रों से, अग्नि का प्रहा अपने में धारण कर रहा था, परन्तु जब विराट स्वरूप को जान लिया, तो बेटा! यह मानो यही अग्नि का स्वरूप बन गया।

तो विचार-विनिमय क्या मेरे पुत्रों! मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज अपने में मौन हो गएं और मौन हो करके यह कहा हे मानव! हे ऋषियों! तुम अग्नि को अपना पितर स्वीकार करो यह हमारा पितर है मानो देखो, इतने में वशिष्ठ मुनि महाराज यह उच्चारण कर रहे थे, उन्होंने अपने पूज्य गुरुओं के वाक्यों को उद्गीत रूप में गा करके मेरे पुत्रों! देखो, पुनः उन्होंने कहा सम्भवा लोकां सम्भवा लोकाम् अग्नि हमारा पितर है। (पुस्तक से) वही अग्नि मानो देखो, चैतन्य पितरों के रूप में प्रवेश करके वेग वाली बन करके अपने में धारयामि बनी रहती है।

ऋषि प्रवाहण ने कहा कि पितर याग के सम्बन्ध में और कोई अपनी चर्चा करना चाहता है तो वह चर्चा दे सकता है। इतने में महात्मा जमदग्नि उपस्थित हुए। महात्मा जमदग्नि अपने में बड़े विचित्र महा क्रोधी थे, बड़े ऋषि भी थे मुनि भी थे, वह प्रभु की सर्वत्रता को समेट करके, अपने में लीन रहते थे, ऋषि-मुनियों ने हर्ष ध्वनि की और कहा कि-प्रभु! आप तो अनुभव के वाक् प्रगट कराते रहते हैं, आप हमें कोई ऐसा वचन दे जाईएं, जो इस ब्रह्मवेत्ताओं की सभा में शिरोमणी हो। महर्षि जमदग्नि ने कहा कि भई! जो महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने अभी-अभी अपने विचार उदभुत किए हैं, उन विचारों के आगे पितर याग के सम्बन्ध में कोई वाक् उच्चारण करने योग्य नही रहा है। अब मैं क्या कर सकता हूँ क्योंकि वह ब्रह्मवेत्ता हैं उन्होंने कहाँ से कहाँ इस अग्नि का मिलान किया, यह उनका बड़ा विचित्र मन्थन किया विचार है यह अकाटय में रहता है इसमें विज्ञान भी है इसमें ज्ञान भी है इसमें यौगिकता भी है यौगिकता, ज्ञान और विज्ञान जहाँ होगा, वहीं पितरों की विवेचना होगी तो अब मैं क्या उच्चारण कर सकता हूँ।

वायु का पितृ रूप

महर्षि प्रवाहण ने कहा कि-प्रभु! जो आपके विचारधीन हो, उन वाक्यों को उच्चारण कीजिए। महात्मा जमदग्नि ने कहा कि मेरे विचार में तो जैसे अग्नि को इन्होंने पितर कहा है मैं वायु को पितर कहता हूँ देखो, वायु वेद में गति कर रहा है यदि वायु नही होगी तो यह संसार के चैतन्य पिता और ऋषि-मुनि जो पितर बने हुए हैं वह भी और यह अग्नि भी जितनी पितरवादी है यह सब शान्त हो जाएगी। यदि एक पितर यह हमारा वायु नही होगा तो सब यह पितर बने हुए हैं यह सब शान्त हो जाएंगें यदि एक पितर यह हमारा वायु नही होगा तो सब यह पितर जड़वत हो जाएंगें। तुमने जान लिया होगा कि यह सब जड़वत् बन करके हमें क्या दे सकते हैं? इसीलिए हमें विचारना है कि वायु को अपना पितर बनाना है। वायु को पितर बना करके जानना है कि वायु कैसे हमारा पितर है, क्योंकि वायु के इस ब्रह्माण्ड में भाग बने रहते हैं और देखो, इस पिण्ड में भी दस भाग बने रहते हैं।

महात्मा जमदग्नि ने कहा कि एक समय मैं भ्रमण करता हुआ, महात्मा कश्यप् के द्वार पंहुचा, तो मैंने कहा कि भगवन्! मैं जानना चाहता हूँ कि यह जो हमारा शरीर है इसमें वायु के कितने भाग हैं? उन्होंने साधारण रूप से कहा कि दस भाग हैं दस भागों की विवेचना करने लगे तो कश्यप् मुनि ने कहा कि भगवन्! हम तो जानते हैं नहीं चलो हम गति करते हुए मार्कण्डेय मुनि महाराज जिस आसन पर रहते हैं, उनके द्वार चलते हैं क्योंकि वह

आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान दोनों में गति करते हैं। दोनों भ्रमण करते हुए मुनि के द्वार पर पंहुचे, तो महात्मा मार्कण्डेय से कहा कि-प्रभु! वायु की ब्रह्माण्ड और पिण्ड में कितनी गतियां है? उस समय मार्कण्डेय मुनि ने कहा कि मेरे विचार में तो दस गति हैं। प्राण की पांच गति ही उन्होंने जानी। आगे की वायु की पांचों गति नही जान सके। उनके ऊपर उनका मन्थन चल रहा था। महात्मा मार्कण्डेय जी बोले कि मैं पांचों तक पंहुच गया हूँ, और पांच प्रकार के ऊपर मैं विचार कर रहा हूँ उसक विस्तृत रूप नही जानता। महात्मा जमदग्नि ने कहा तो प्रभु! क्या हम अधूरेपन में रहेंगें। उन्होंने कहा नही चलो गति करते है।

अपान क्रिया

वह भ्रमण करते हुए महाराज शिव के द्वार पर पंहुचें महाराजा शिव से कहा कि महाराज! पिण्ड और ब्रह्माण्ड में वायु की कितनी गतियां हैं, तो शिव ने कहा कि दस गतियां है और यह गतियां अपने-अपने में समाहित हो करके गति करती रहती हैं। यह प्राण बन करके आदान-प्रदान करता रहता है और जब यह उदर ब्रहे वाचन्न अपान बनता है तो जितना भी क्रियाकलाप ब्रह्माण्ड में है वह सब अपान का हो रहा है माता के गर्भस्थल में शिशु को पंहुचाना, यह भी अपान का क्रियाकलाप है और पृथ्वी के गर्भ से जल को ऊर्ध्वा में पंहुचाना यह भी अपान का क्रियाकलाप है जल को एक स्थान से पान करना और दूसरे स्थान में त्याग देना यह भी अपान का क्रियाकलाप है संसार में इसी प्रकार जो भी आदान-प्रदान हो रहा है जो भी प्रोक्षण ऊर्ध्वा में गति करने का ध्रुवा में जाने का यह सब अपान की प्रतिक्रिया है अपान अपने में अपानत्व बन करके रहता है प्राण तो वायु मण्डल में से, लोक लोकान्तरों में से जो उनमें से तरंगें बह रही हैं उनका जो परमाणुवाद आ रहा है उसको यह प्राण अपने में लाता है और अशुद्ध परमाणुओं को वायुमण्डल में त्याग देता है और प्राण का व्रत बन करके, जो अपान के समीप पंहुच गया है, यह उसमें रत्त हो करके, यह अपान कहीं विद्युत के रसनाहम्, कहीं देखो, शिशु के रूप में माता के रूप में प्रवेश कर देता है, पितरों के रूप में प्रवेश करा देता है। कहीं जल को पान करता है तो उसे त्यागता है कृषक जब अनन को उत्पन्न करता है तो जल का प्रोक्षण पृथ्वी से लेता है तो पृथ्वी के गर्भ से उस जल को ऊर्ध्वा गति बनाने का कार्य भी अपान का कहलाता हैं संक्षिप्त में यह कि जितना भी दूरभाषी करने वाला परमाणुवाद को करता है या धातु पिपाद बना करके ऊर्ध्वा गति बनाता है वह सब अपान की प्रतिक्रिया कहलाती है। जब ऋषि इस वाक् को स्मरण करने लगते पहले ही वाक् में ब्रह्माण्ड की कृतिका उनके समीप आने लगी। तृतीय प्राण उन्होंने समान को कहा, कि यह जो समान प्राण है यह अपान के कणों ले करके प्राण के कणों को ले करके रसों का जो विभाजनम् ब्रह्मे वह समान करता रहता है अपने में पहुचाता है वह पिण्ड हो चाहे वह ब्रह्माण्ड हो चाहे वह सृष्टिवाद कितना ऊर्ध्वा कितना ही ऊर्ध्वा गति में करने वाला हो, अपने में रत्त रहता है।

मेरे प्यारे! देखो, विचार क्या, कि ब्रह्म ब्रह्मा लोकां वाचन्नमं ब्रहे उन्होने पांचों प्राण की विवेचना की। तो व्यान संरक्षण करता है और समान में सामान्यता प्रदान कर देता है, सब उनका भाग प्रदान करके चाहे वह वायुमण्डल में परमाणुवाद हो चाहे इस मानव शरीर में रसवाद हो चाहे यह जल जैसे समुद्रों में गति कर रहा है जैसे पृथ्वी के गर्भ में गति कर रहा है इसका जो विभाजनवाद है वह सर्वत्र समान का रहता है। समानम् ब्रह्मे लोकाम् ब्रहे, प्राण अपान, समान, व्यान, उदान यह पांच प्राण कहलाते हैं अब तुम विराजो और विश्राम करो। मैं प्रातःकालीन जब याग करता हूँ तो उसके पश्चात मैं प्राणों की विवेचना ब्रह्माण्ड से मापता रहता हूँ क्योंकि वेद के मन्त्र आते रहते हैं उन्होंने कहा कि यह चर्चाएं मैं कल प्रगट करूंगा।

आज का हमारा यह वाक् कह रहा है कि महात्मा जमदग्नि कहते हैं, कि यह जो वायु हैं यह हमारा पितर है, यदि यह वायु नही रहेगा तो यह चैतन्य पितर, जड़ पितर यह सब शून्यवत बन जाएगा। इसीलिए वायु हमारा

पितर है, वायु का शोधन करना, वायु को पवित्र बनाना यह हमारा कर्तव्य हैं। मुझे तो ऐसा काल है मैं इन वाक्यों में क्या जा सकता हूँ, प्रातःकालीन प्रत्येक गृह में वेदमन्त्रों की द्वारा जग याग होने लगता है। तो राजा भी अपने राष्ट्र से वंचित हो जाता है, प्रत्येक राजा के राष्ट्र में सुगन्धि भरण हो जाती है, परमाणुवाद पवित्र हो जाता है। तो इसीलिए वायु का शोधन करना है, वायु अपने में पितर है, यह महान पितर है, महात्मा जमदग्नि बड़े वन में भ्रमण करते रहते थे, वह यौगिक थे, और यौगिक वाक्यों में प्राण का एक दूसरे से मिलान करना चाहते थे।

बेटा! आज का वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है कि जितने पितर है, यह एक दूसरे में गुथे हुए हैं, एक दूसरे में अभ्यस्त हैं, इन पितरों की उपासना करना हमारा कर्तव्य है। यह तो पितरों की व्याख्या है, बेटा! हम जब पितरों की व्याख्या पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में विद्यमान हो करके करते थे, तो विज्ञान के यन्त्रों का निर्माण भी कर लेते थे, और पितरों की व्याख्या करते-करते बड़े मस्तिष्कों की आभा में, गम्भीर मुद्राओं में परिणत हो जाते थे। पितरों की व्याख्या करते-करते एक-एक वर्ष हो जाता था उनको क्रियात्मक में लाने के लिए वर्षों व्यातीत हो जाते थे। यह बेटा! आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

७ अतिथि याग ०५ १० १९८६

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि प्रत्येक वेदमन्त्र उस महिमा का वर्णन कर रहा है अथवा उसके गुणों का बखान कर रहा है जिससे हमें यह प्रतीत होता है कि हम सब उस परमपिता परमात्मा की आनन्दमयी, मानो लोरियों का पान कर रहे हैं, संसार का जितना भी प्राणी मात्र है, मानो वह चेतना से गुथा हुआ है, उस चेतना में कटिबद्ध रहने वाला है, मानो वह विज्ञानमयी और ज्ञानमयी स्वरूप माना गया हैं और उस परमपिता परमात्मा को मानो भिन्न-भिन्न रूपों से उसका वर्णन करते रहते हैं, अथवा उसके गुणों का वर्णन, कुछ विज्ञानमयी धारा में रत्त हो करके, और उसको अपना पुरोहित हम स्वीकार करते हैं। क्योकि वह पराविद्या को जानने वाला है, मानो पराविद्या उसका आयतन माना गया है तो मानो उस परमपिता परमात्मा की ऊँची-ऊँची, प्रायः उड़ाने उड़ता रहता है और भिन्न-भिन्न प्रकार की कल्पनाएं अथवा उसकी आभा में रत्त होने के लिए तत्पर हो जाती है। जिससे मानव अपनी आभा में सदैव निहित रहने वाला है, मानो उसके ज्ञान और विज्ञान की, प्रायः मानव अपने में कल्पना करता रहता है, और विचारता रहता है कि मैं परमपिता परमात्मा की अनन्तमयी मानो उसकी आभा में सदैव मैं रत्त रहता हूँ, और उसी को जब अपनी अन्तरात्मा में बेटा! अन्तर्मुखी हो करके, अपने प्रभु का जो दर्शन करता है, तो मानव के जीवन में एक महानता की ज्योति जागरूक हो जाती है।

तो आओ, मेरे पुत्रों! आज का हमारा वेदमन्त्र, यह कह रहा है क्या, उस परमपिता परमात्मा को हम अपने में स्वीकार करें, मुझे बहुत पुरातन काल हुआ, प्रत्येक वेदमन्त्र मानो किसी सूत्र में पिरोया हुआ है, जिस भी काल में, हमारे यहाँ वेदों का उद्घोष हुआ, और वेदमन्त्रों के ऊपर अन्वेषण हुआ, अथवा वह किसी प्रकार का अनुष्ठान क्यों न हो, उस अनुष्ठान के लिए, जो वेदमन्त्रों का उद्गीत मानव ने गाया तो ओ३म् का उच्चारण करने के लिए तत्पर हुआ, प्रत्येक वेदमन्त्र बेटा! ओ३म् रूपी सूत्र से पिरोया हुआ है तो हमें यह स्वीकार करना है, क्या हम अपने में मानो उस परमपिता परमात्मा, जिसे ओ३म् के नामों से वर्णन करते रहते हैं, वह प्रत्येक वेदमन्त्रों में मानो ओ३म् की ध्वनि, आचार्य जनों ने बेटा! अपने में सिद्ध की हैं, परन्तु जिस भी काल में ऋषि-मुनि अपने में यह विचार-विनिमय करते रहते थे, क्या ओ३म् के उच्चारण करने से मानो वेद का क्या समन्वय रहता है। तो मेरे पुत्रों! देखो, उसी काल में, ऋषि-मुनियों ने इसका निमटारा किया, और यह कहा कि प्रत्येक वेदमन्त्रों में मानो उस परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान है, और उसमें संसार का ज्ञान और विज्ञान निहित रहता है। परन्तु वह जो ज्ञान और विज्ञान अपने में निहित रहने वाला है, इसीलिए ओ३म् रूपी सूत्र में मानो जितना भी संसार का ज्ञान और विज्ञान है, वह मुनिवरों! देखो, उसमें पिरोया हुआ है, अथवा उसी में वह रत्त रहने वाला है। जैसे मानव का शब्द वह इन्द्रियों में पिरोया हुआ है और मानो देखो, वाक् इन्द्रियों से पिरोया हुआ है, उसकी शक्ति का जो प्रेरणा है, वह मानो देखो, उस महान देवतव आत्मा से कटिबद्ध रहने वाला है, इसी प्रकार जितना भी संसार का ज्ञान और विज्ञान है, चाहे वह यातायात के रूप में हो, चाहे वह मुनिवरों! सूर्य लोक में जाने वाला विज्ञान हो, चाहे वह चन्द्रमा में जाने वाला विज्ञान हो, किसी भी प्रकार में मानो विज्ञान के वांगमय में, जब मानव प्रवेश करता है, तो मेरे प्यारे! वह विज्ञान, किसी सूत्र में वह पिरोया हुआ है। मानो वही सूत्र, वह चेतना के रूप में हैं, वह ओ३म् रूपी धागे के रूप में विद्यमान रहता है। तो मेरे पुत्रों! जब हम अपने प्रभु को अपना सखा अथवा प्राण अपने में

यह स्वीकार करते हैं, कि हम एक सूत्र में पिरोएं हुए हैं, तो सूत्र में हम सदैव सूत्रित होते चले जाते हैं।

मेरे प्यारे! मुझे वह काल जब स्मरण आने लगता हैं जिस काल में बेटा! ऋषि-मुनि अपने में विद्यमान हो करके, उस परमपिता परमात्मा को, अतिथि के रूप में स्वीकार करते रहे हैं, मानो याज्ञिक पुरूषों में, उस परमपिता परमात्मा को अतिथि के रूप में माना है। परन्तु जैसे गृहाश्रम में मानो एक बुद्धिमान अतिथि आता है, और वह अपने गुणों का वर्णन करता हुआ उस गृहपति को देखो, ऊँचा बनाता रहता है। गृह स्वामी गृह स्वामिनी अपने में प्रसन्न होते रहते हैं। मानो इसी प्रकार वे परमपिता परमात्मा, हमारा एक अतिथि के रूप में रहता हैं। मानो जैसे हमारे यहाँ बहुत पुरातन कालों में, बेटा! यागों की रचना की हैं जब हमारे यहाँ वैदिक साहित्य वालों ने, वेद के वांगमय में प्रवेश हुए मन्त्र के ऊपर चिन्तन करना प्रारम्भ किया, तो बेटा! उन्होंने एक नाना प्रकार के यागों में एक अतिथि याग की बड़ी प्रसंशा की है मानो वह बड़ा प्रशंसनीय एक विषय माना गया है, जिसको हम अतिथि के रूप में स्वीकार करते रहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, जैसे भिन्न-भिन्न प्रकार के याग है, मानो देखो, कोई देव याग के रूप में हैं, और जैसे हम ब्रह्मयागी बन जाते हैं, और तो ब्रह्मयागी बन करके हम ब्रह्म का चिन्तन करते हैं मानो इसी प्रकार, मुनिवरों! देखो, संगतिकरण में जो अभ्योदय होने लगता है। तो मेरे प्यारे! इसी प्रकार एक हमारा अतिथि याग होता है। अतिथि का अभिप्रायः यह होता है क्या मानो कोई भी मानव बुद्धिमान मानो किसी भी कोई तिथि उसकी निश्चित न हो, और वह हमारे गृह में प्रवेश करता है, हमें एक ऊँचा उपदेश देता है, ऊर्ध्वा में हमें गमन कराता है तो वह हमारा अतिथि कहलाता है। वास्तव में तो वे परमपिता परमात्मा हमारा प्रायः अतिथि माना गया है। मेरे प्यारे! देखो, अतिथि के रूप में, जब माता के गर्भस्थल से, एक बालक का जन्म होता है, तो वह भी मानो देखो, अतिथि के रूप में माना गया है, क्योंकि वह अपने भावों को व्यक्त तो न कर सका, परन्तु उसके आने से जो प्रसंन्नता मानो देखो, जन समूह में उत्पन्न होती हैं, तो वही बेटा! अतिथि बुद्धिमान के आने पर, गृह में प्रसन्नता का स्रोत मानो बहने लगता हैं।

मेरे पुत्रों! देखो, एक समय हमें स्मरण आता रहता हैं एक समय बेटा! महर्षि कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमश मुनि अपने में दोनों चर्चा कर रहे थे, एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके, वह मानो लोमश जी ने कहा कि हे कागभुषुण्ड जी! यह अतिथि शब्द जो वेदों में आता है, मैं आज न्यौदा में प्रातःकालीन अध्ययन कर रहा था, तो अध्ययन करता हुआ, मानो उसमें अतिथि शब्द आ रहा था, आज के हमारे वेदों के पठन-पाठन में भी, मानो अतिथि शब्दों की विवेचना हो रही थी, परन्तु जब ऋषि ने यह कहा, तो कागभुषुण्ड जी ने कहा कि महाराज! अतिथि तो एक दूसरे के मिलन को कहा जाता हैं। मानो देखो, जैसे परमपिता परमात्मा का भक्त से किसी काल मे मिलान करता है, तो वह मानो एक अतिथि के रूप में, वह कल्याण कर्त्ता कहलाता हैं। जो कल्याणकारी है, वही हमारा मानो देखो, अतिथि के रूप में विद्यमान रहता हैं। तो मेरे प्यारे! जब ऋषि ने यह कहा कागभुषुण्ड जी ने, तो उन्होंने कहा कि भई! आज तो हमारी एक इच्छा है, क्या आज चलो किसी के अतिथि बनेंगें। तो मेरे प्यारे! उन्होंने कहा बहुत प्रियतम।

तो मुनिवरों! देखो, महर्षि कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमश जी भ्रमण करते हुए, मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने जब गमन किया अपने में चिन्तन करते हुए, वह मुनिवरों! देखो, महर्षि श्वेत्ताश्वेतर मुनि के आश्रम में पंहुचे, तो श्वेत्ताश्वेतर मुनि ने दोनों का स्वागत किया, और उन्होंने कहा हे भगवन! आज यह मेरा कैसा सौभाग्य जागरूक हो गया है, जो मानो देखो, तुम्हारे आने की कोई सूचना भी नही हैं, और ब्रह्मवेत्ताओं का आगमन हुआ है। तो मेरे प्यारे! कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमाश मुनि महाराज दोनों अपने में मानो मग्न और हर्ष ध्वनि करने लगे। मेरे प्यारे! उन्होंने उनका अतिथि किया भोज्य कराया अब मुनिवरों! देखो, जब वह विराजमान हो गएं तो विराजमान

होने के पश्चात और भी नाना ऋषिवर उनके आश्रम में आ पंहुचे, मेरे प्यारे! देखो, नाना ऋषियों का जब आगमन हुआ, और भी जिसमें महर्षि पणपेतु मुनि महाराज विद्यमान थे, मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि गौतम मुनि, मेरे प्यारे! देखो, आश्रम में विद्यमान थे, महर्षि गौतम और इत्यादि ऋषियों की वार्त्ता प्रगट होने लगी, उन्होंने कहा मानो उन दोनों लोमश मुनि ने और मुनिवरों! देखो, कागभुषुण्ड जी ने महर्षि गौतम से यह कहा कि हे प्रभु! यह ईश्वर क्या है? आप ईश्वर के सम्बन्ध में, क्या अपनी विवेचना देते हैं। उन्होंने कहा परमपिता परमात्मा मानो सर्वत्र एक चेतना के रूप में हम स्वीकार करते हैं, उन्होंने कहा कि यदि हम परमपिता परमात्मा को मानो हम चेतना के रूप में स्वीकार न करते हुए एक अतिथि के रूप में स्वीकार करें, तो मानो तुम्हारा क्या, इसमें मन्तव्य है? तो महर्षि कागभुषुण्ड जी ने जब यह कहा, तो महर्षि गौतम मुनि बोले क्या मानो ब्रह्मे व्रतं ब्रह्मा वह सर्वज्ञ है, वह अतिथि भी है, मानो वह पुरोहित भी माना गया है। तो मेरे पुत्रों! उन्होंने कहा तो प्रभु! हमें पुरोहित की विवेचना कीजिए, उन्होंने कहा पुरोहित उसे कहा जाता है। जो मानो चेतना में बद्ध रहने वाला, चेतना उसका आयतन माना गया है। जैसे प्राण मानो अपनी गति कर रहा है, प्राण वायु के सन्निधान मात्र से ही मानो देखो, सर्वत्रता में मानो देखो, एक गतियां हो रही हैं तो वह जो गति है वह उस परब्रह्म परमात्मा का एक आयतन माना गया है। वह एक आयतन माना गया है जिससे मानव अपने में, मानवीयता का प्रायः दर्शन करता रहता है। तो मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने यह अपनी विवेचनाएं प्रगट कीं, तो उन्होंने कहा-प्रभु! वाक् तो आपका यथार्थ है, परन्तु हम भी तो किसी के अतिथि हैं, क्या हम प्रभु की आभा में, निहित रहने वाले हैं, उन्होंने कहा अतिथि ब्रह्मा कृत देवा जो अतिथि वह कहलाता है। जो मानो देखो, पराविद्या का उपदेश देने वाला हो। वे परमपिता परमात्मा हमें पराविद्या को प्रदान करनेवाला है। मेरे पुत्रों! यह वार्त्ता यह हो रही थी, गौतम मुनि से कहा गया क्या महाराज! संसार में, जितने भी वैदिक आलांकारिक रूपों में, मानव गति करता रहता है, उसके सम्बन्ध में, आपका क्या विचार है?

महर्षि गौतम बोले कि जितने भी मानवीय आलांकारिक शब्द है, उसको अलंकार के रूप में परिणत रहना चाहिए, मानो जब तब वह आलांकारिक रहेंगें, तब तक उसका अपना कोई अस्तित्व है, और जब वह साहित्य में निश्चित हो करके और साहित्यिक बन जाएंगें, और देखो, वही अलंकार मानो देखो, साहित्य और अलंकार दोनों का मिश्रण हो करके, साहित्य में मानो देखो, भ्रष्टता आ जाती है, वह साहित्य, मानो देखो, उस प्रकार नही रह पाता मेरे प्यारे! देखो, महर्षि गौतम मुनि ने कहा गौतम ऋषि क्योंकि अपने मां गौतप्रहा उन्होंने कहा-प्रभु! आपको गौतम क्यों कहते हैं? उन्होंने कहा यह कोई जानकारी का विषय नही मेरे पुत्रों! लोमश जी ने कहा क्या गौतम इसीलिए कहते है। यह अपनी मानो देखो, अपने विचारों को गोपनीय रख कर ही मानो जिसको गोपनीय विषय बनाए रहते हैं, और गौतम इसीलिए कहते हैं, कि इन्द्रियों को अपने में संयम में लाने वाले है, वह जो गौ नाम की जो इन्द्रियाँ है उनको भी यह संयम में बनाते रहते हैं। तो यह गौतम कहलाते हैं। मेरे प्यारे! उन्होंनें कहा और गौतम के भिन्न-भिन्न स्वरूप हैं, जो मानो देखो, चन्द्रमा अपने में प्रकाश दे करके अपने में रत्त हो जाता हैं, वह मानो चन्द्रमा के तुल्य महर्षि गौतम मुनि का प्रकाश है, मेरे पुत्रों! देखो, वह गौतम ब्रह्मा वह गौतम वही कहलाता है। जो अपनी गो नाम की इन्द्रियों को अपने में संयम में बनाता हुआ, योग की प्रतिभा में रत्त हो जाता है, वह गौतम कहलाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, इसीलिए प्रत्येक मानव प्रत्येक मेरी प्यार ब्रह्मा व्रते मानो सबको अपनी इन्द्रियों पर संयम करना चाहिए। जो इन्द्रियों पर संयम करना जानता है, वही तो मुनिवरों! देखो, गौतम कहलाता है। वह रात्रि को अपने में धारण करता है, तो मुनिवरों! देखो, इसीलिए उन्हें गौतम कहा जाता हैं। क्योंकि हमारे यहाँ देवताओं में और ऋषि-मुनियों की दोनों की प्रतिभा एक ही सूत्र में स्वीकार की गई, तो मुनिवरों! देखो, महर्षि गौतम मुनि से उत्तर प्रश्न करते हुए महर्षि कागभुषुण्ड जी और लोमश मुनि महाराज ने वहाँ से भ्रमण किया और

भ्रमण करते हुए मेरे पुत्रों! देखो, वह राजा रावण के यहाँ लंका में जा पंहुचे।

मेरे प्यारे! देखो, राजा रावण के यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की चर्चाएं होती रहती थी, मेरे प्यारे! देखो, उनके विश्वविद्यालय में उस समय महर्षि भारद्वाज मुनि का आगमन होने वाला था, तो मुनिवरों! देखो, वह भी विश्वविद्यालय में जा पंहुचे महर्षि कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमश मुनि महाराज दोनों मुनिवरों! देखो, राष्ट्रीय आभा में रत्त करते मुनिवरों! देखो, उनके विश्वविद्यालय में पहुचे तो मुनिवरों! देखो, जब विश्वविद्यालय में पंहुचे तो मुनिवरों! देखो, राजा रावण के जो विधाता कुम्भकरण थे वह विद्यमान थे वह विद्यालय में क्योंकि देखो, उनका विज्ञान में पारायण होने से वह विज्ञान की शिक्षा प्रदान कर रहे थे। तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषियों को आगमन में दृष्टिपात किया गया तो वह बड़े हर्ष ध्वनि करने लगे उनको बेटा! ब्रह्म वेत्ताओं का एक आसन प्रदान किया गया और उस आसन पर वह विद्यमान हो गएं। परन्तु दोनों के विद्यमान होने के पश्चात मुनिवरों! देखो, उन्होंने कहा कहिए भगवन! आप का अतिथि किया जा रहा है, आप क्या पान करेंगें उन्होने कहा जो इच्छा जैसी भी तुम्हारी इच्छा हो, मेरे प्यारे! उन्होंने नाना प्रकार के पदार्थों का पान कराया और पान करा करके बेटा! उचित आसन प्रदान कर दिया, मेरे प्यारे! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज अपने ब्रह्मचारियों के सहित मानो देखो, विश्वविद्यालय में उनका आगमन हुआ, और वह अपने वाहनों में विद्यमान हो करके जब वह विश्वविद्यालय में आए तो मुनिवरों! देखो, राजा रावण इत्यादि उनके स्वागतार्थ उन्हें अपनी स्थली को तयागते हुए उन्हें कहा आईए भगवन! वह विराजमान हो गएं और विराजमान उचित आसन प्रदान करके मेरे प्यारे! देखो, उन्हें भोज कराया और भोज कराने के पश्चात मेरे पुत्रों! देखो, विद्यालय में मानो ब्रह्मचारी एक पंक्ति में विद्यमान हो गएं। आचार्यजन एक पंक्ति में विद्यमान हो गएं, मुनिवरों! देखो, ऋषि-मुनियों का एक आसन लग गया, जिसमें महर्षि कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमश और महर्षि भारद्वाज, ब्रह्मचारी सुकेता, और ब्रह्मचारी कवन्धि, ब्रह्मचारी रोहिणी इत्यादि मुनियों का बेटा! एक गमन हुआ और जब वह गमन हुआ ब्रह्मे उत्तम ब्रह्मे वह सब बेटा! अपने आसन पर विद्यमान हो गएं। विद्यमान हो जाने के पश्चात अब मुनिवरों! देखो, बारी-बारी उनका एक उपदेश मंजरी प्रारम्भ हुई, सबसे प्रथम महर्षि कागभुषुण्ड जी से यह कहा गया क्या महाराज आपका कुछ ब्रह्मचारियों को आशीर्वाद के रूप में मानो कुछ उपदेश हो जाना चाहिए। उन्होंने कहा हम तो अतिथि हैं, परन्तु जो निमन्त्रित आए हैं, उनको आप आज्ञा दीजिए, वह अपना उपदेश करेंगें। उन्होंने कहा नहीं भगवन! आप भी हमारे मानो अतिथि वह निमन्त्रित से भी महान होते हैं, आप भगवन! आप देखो, कुछ उपदेश दीजिए, मेरे पुत्रों! देखो, हमें कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है, क्या महर्षि कागभुषुण्ड जी उपस्थित हुए और उन्होंने कागभुषुण्ड जी ने ब्रह्म व्रते वाचक कृते देखो, सभा को सम्बोधित किया हे सभा! हे ब्रह्मचारियों! विश्वविद्यालयों में मानो गमन करने वाले! नाना प्रकार के ज्ञान और विज्ञान की उड़ाने उड़ने वाले हे वेद के पठन-पाठन में रत्त रहने वालो में हम कोई व्यख्याता नही हैं, परन्तु चर्चा यह अवश्य करेंगें क्या हम अपने में मानो देखो, अपने को समाहित हो जाएं, जब अपने में समाहित हो जाता है तो मानो देखो, उसकी बुद्धि मैं मानो ऋतम्भरावी मानो प्रज्ञावी के रूपों में परिणत हो जाता है। हे ब्रह्मचारियों! ये तुम्हारा सौभाग्य है, तुम वेदों का अध्ययन कर रहे हो, विज्ञान में तुम्हारी उड़ाने हो रही हैं, और तुम देखो, अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहते हो मानो यदि राष्ट्र को ऊँचा बनाना है तो विश्वविद्यालयों में जब तक अनुशासन की प्रवृत्तियां नहीं हो पाती जब तक मानो देखो, राष्ट्र और समाज में अनुशासन नही हुआ करता है। इसीलिए विश्वविद्यालयों में अनुशासन होना चाहिए। मानो जब आचार्यजन ब्रह्मचारियों के मानो देखो, उपदेश मंजरी में महान बने रहेंगें, प्रातःकालीन विश्वविद्यालयों में याग होते हैं बेटा! राजा रावण के यहाँ भी विश्वविद्यालय में ब्रह्मचारी याग में परिणत रहते थे, ऋषि-मुनि अपने में याज्ञिक बने हुए थे, मेरे पुत्रों! देखो, वह यह उपदेश दे करके उन्होंने कहा क्या तुम्हारा मेरा तो केवल यही शब्द है,

क्या तुम प्रातः और सांयकाल अपने क्रियाकलापों से निवृत्त हो जाओ उसी काल में तुम्हारे विचारों की उड़ाने कर्तव्यवाद के ऊपर निहित रहनी चाहिएं। मानो कर्तव्यवाद मानो संसार को महानता में ले जाने वाला है, मेरे पुत्रों! देखो, जब उन्होंने यह वाक् कहा तो यह उच्चारण करके मानो अनुशासित रहना चाहिए। विश्वविद्यालयों में अनुशासन रहना चाहिए। तो राष्ट्र अनुशासित हो जाता है, तो मानो जब ऋषि वह इतना उच्चारण करके शान्त हो गये। शान्त हो जाने के पश्चात मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि लोमश मुनि महाराज उपस्थित हुए और उन्होंने कहा कि हे ब्रह्मचारी जनों! तुम्हें यह प्रतीत है क्या यज्ञशाला में यह मानो ब्रह्म विचारकों की यज्ञशाला हैं, इसमें सब ब्रह्म का चिन्तन करने वाले, और मानवीय दर्शनों के ऊपर मानो दर्शनों में परिणत रहने वाले ब्रह्मचारी जन सब उपस्थित हैं। मेरा तो एक ही मन्तव्य है कि इस सम्बन्ध में कि प्रत्येक मानव को अपने विचारों को याज्ञिक रूप में ले जाना चाहिए। जैसे यज्ञशाला में यज्ञमान अपने साकल्य को होता जनों के साथ में मानो वह वायुमण्डल में मानो निस्वार्थ अग्नि के मुख में साकल्य प्रदान कर देता है, और अग्नि उसके तृप्त कर देती है, अग्नि देवताओं का दूत कहलाता है। इसी प्रकार हे ब्रह्मचारी जनों! हे विश्वविद्यालयों में पठन-पाठन करने वालों तुम्हारा हृदय जितना विचित्र इतना विचित्र होना चाहिए क्या तुम्हारे जो शब्द है, वह वायुमण्डल में प्रवेश हो जाएं क्योंकि शब्दों से ग्रह पवित्र बनते है। शब्दों से मानवीयता ऊँची बनती है, और शब्दों से मानो देखो, राष्ट्र और समाज ऊँचे बना करते हैं। आज हम अपने शब्दावली शब्दों में ऐसे गम्भीर जैसे सूर्य की नाना प्रकार की किरणें हैं, नाना प्रकार की कान्तियां हैं मानो देखो, एक दूसरे में सुगठित हो करके सबको ऊर्जा प्रदान करने वाली हैं। और वह जो ऊर्जा सत्ता है, वही तो तुम्हारे लिए महानता का दर्शन करा रही हैं, आज मानो जो सूर्य की नाना प्रकार की रश्मियां प्रातःकाल होते ही प्रकाश में मानव को पंहुचाने का प्रयास करती हैं। प्राणी मात्र को ऊर्जा दे करके उसे परिपक्व बनाती रहती हैं। तो इसी प्रकार मानव के जीवन की जो ऊर्जा है, मानव के जीवन की विचार रूपी रश्मियां हैं, वह मानो देखो, गृह को पवित्र बना देती हैं। विद्यालयों को ब्रह्मचारियों के हृदयों की जो विचित्र रश्मियां हैं, वह मानो देखो, विद्यालय को ऊँचा बना देती हैं, इसी प्रकार सूर्य की नाना प्रकार की जो किरणें है वह किरणें भी मानव देखो, विज्ञान का एक मूलक बन करके रहती हैं, और वह मानव के हृदय में जब समाहित हो जाती हैं, मानव का हृदय भी मानो देखो, प्रफुल्लित हो जाता है। पवित्रता का दर्शन करने लगता है।

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा जैसे सूर्य की नाना प्रकार की रश्मियां मुनिवरों! देखो, चन्द्रमा को ऊर्जा दे करके, चन्द्रमा को अमृतवाला बना देती हैं, और मानो वही ऊर्जा पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश हो करके, नाना प्रकार के खाद्य और खनिज पदार्थों का मूलक बन जाती हैं, वही सूर्य की नाना रश्मियां मानो देखो, तारामण्डलों को, अपनें में धारण करने लगती हैं। मानो वही चन्द्रमा की नाना, सूर्य की नाना प्रकार की जो रश्मियां हैं, वह मानो देखो, कहीं अमृत बन करके, कहीं मानो देखो, अग्नि के रूप में परिणत हो करके मानव के पाप पुण्य कर्मों का फल भी मानो देखो, इसी से प्राप्त होने लगता हैं। तो मेरे पुत्रों! मैं यह विचार इसीलिए दे रहा हूँ क्या आज बेटा! देखो, वेद का मन्त्र इस प्रकार का आ रहा है, वेद का मन्त्र कहता है क्या प्रत्येक मानव को मानव अपने में ही अपने में रत्त रहना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् उच्चारण करके महर्षि लोमश मुनि ने कहा क्या जैसे हम सखा उस परमपिता परमात्मा को पान करना चाहते हैं। प्रत्येक इन्द्रियों की रश्मियों को एक सूत्र में पिरो देते हैं, संयम में ला करके मानो देखो, यौगिकता को प्राप्त हो जाते हैं। जब यह वाक् उन्होंने प्रगट किया बेटा! तो मुनिवरों! देखो, लोमश मुनि अपनी स्थली पर विद्यमान हो गएं, जब विद्यमान हो गएं मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने सम्बोधित करते हुए मेरे पुत्रों! देखो, ब्रह्मचारी कवन्धि को कहा हे कवन्धि! तुम्हारा कोई विचार होना चाहिए। मेरे प्यारे! कवन्धि ब्रह्मचारी उपस्थित हुए तो ब्रह्मचारी कवन्धि ने यह कहा क्या मैं मानो देखो, ऋषि-मुनियों के समीप क्या उपदेश मैं

अपने विचार व्यक्त कर सकता हूँ। परन्तु जो मेरे से जो भी विचार आता है वह मैंने गुरुओं के चरणों में ओत-प्रोत हो करके पान किया है, तो वह उद्गीत के रूप में गाने के लिए तत्पर हुए हैं। मेरे प्यारे! देखो, जब वह उपस्थित हुए तो उन्होंने कहा क्या मेरे विचार में जो सब ब्रह्मवेत्ता जन वैज्ञानिक जन मानो देखो, विश्वविद्यालय के दीक्षान्त रूप में सब विद्यमान हैं। मानो देखो, सबका एक ही मन्तव्य है, क्या मानव को प्रकाश में रत्त रहना चाहिए। उनका सभी का महर्षि कागभुषुण्ड जी ने अपना उपदेश दिया लोमश जी ने अपना उपदेश दिया परन्तु हमारा भी एक मन्तव्य है कि इसीलिए उपदेश है क्या मानव को अन्धकार को त्याग करके प्रकाश में जाना है। मानो उन्होंने एक शीर्षक बनाया तो मुनिवरों! उन्होंने ब्रह्मचारियों को सम्बोधित करते हुए कहा हे ब्रह्मचारियों! तुमने गार्हपथ्य नाम की अग्नि का तुमने सदैव अपने जीवन में पूजन किया है, गार्हपथ्य नाम की अग्नि वह है, जो तुम्हारे शरीरों में अग्नि बन करके रहती हैं, वह ब्रह्मचरिष्यामि बन करके रहती है, वह मानो देखो, अपनी ऊर्ज्वा को तुमने स्थिर करना है, और उसी ऊर्ज्वा के परमाणु रूप को तुम्हें जानना है। उन परमाणु रूप को जान करके तुम्हें विज्ञान के वांगमय में प्रवेश करना हैं, जब हम आचार्य कुल में प्रवेश हुए, तो महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने हमें यह उपदेश कराया था, मानो देखो, रात्रि हो मध्य रात्रि हो दिवस हो मध्य दिवस हो सांयकाल हो परन्तु कोई भी काल हो आचार्य यह कहा करते थे कि कोई भी काल हो परन्तु वह तुम्हें शंका उत्पन्न हो तो प्रगट करो तो दर्शन आचार्य जन के समीप पंहुचे और उन्होंने मानो एक वेदमन्त्र आ रहा था यज्ञं भवितां देवं चित्रम रथं ब्रह्मा क्या मानो देखो, यह वेदमन्त्र की एक आख्यिका हमें स्मरण आने लगी और यह वेदमन्त्र यह कह रहा था क्या ब्रह्मे व्रतम् मानो देखो, यह जो परम ब्रह्मे कृतां मानो देखो, यह जो यज्ञों में पितरों का वर्णन आता है, इसका क्या अभिप्रायः है? तो मानो आचार्य जन हमें यह उपदेश देते थे, क्या इस पितर का अभिप्रायः यह है कि मार्ग में दर्शन करना है मानो चित्रण करना है और चित्रण को हम बाह्य जगत में दृष्टिपात कर रहा है। मेरे पुत्रों! देखो, जब चित्रण, मानव का पवित्र बन जाता हैं। तो बेटा! देखो, वह अपने में शान्त मुद्रित हो करके, दर्शन करने लगता है। मेरे प्यारे! सूर्य की किरणों के साथ, यन्त्रों का गमन होना। मेरे प्यारे! विचारों को यन्त्र बन करके अन्तरिक्ष में गमन करना, विचारों का यन्त्र बन करके, और मानो देखो, वायुमण्डल में भ्रमण करना, यह सर्वत्र मानो देखो, वह कवन्धि ने वर्णन की, और कवन्धि ब्रह्मचारी ने यह कहा, क्या यह मानो देखो, विज्ञान के वांगमय में, जब हम प्रवेश करते हैं, तो मानो देखो, एक-एक परमाणु, एक दूसरे से सहयोग ले रहा हैं, एक दूसरे में पिरोया हुआ है, इसी प्रकार मानव समाज, एक दूसरे से पिरोया हुआ है। ऐसे ही मानो परमपिता परमात्मा का जो अनूठा जो जगत है अथवा वेद के वांगमय में जितना भी ज्ञान और विज्ञान है, एक दूसरे में पिरोया हुआ है, इसी प्रकार जो चित्रण हो करके, मुनिवरों! देखो, अन्तरिक्ष में गमन करता है, और वही अन्तरिक्ष में प्रवेश करके, बेटा! वही मुनिवरों! देखो, परमाणुओं का आदान प्रदान कराता रहता है। विज्ञान के वांगमय में न जाता हुआ, तो ब्रह्मचारी कवन्धि ने अपने शब्दों में कहा, ब्रह्मचारी कवन्धि ने यह कहा है क्या हम अपने विद्यालयों में मानो विद्यमान है, हे ब्रह्मचारी जनों! तुम ब्रह्मवर्चोसि बन करके अपने विद्यालय को सजातीय बनाओ।

मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने जब यह वाक् प्रगट किया तो मुनिवरों! देखो, एक आनन्दवत आ गया। तो हमारा यह विचार, जब ब्रह्मचारी कवन्धि ने यह कहा क्या हम मानो देखो, अपनी उड़ाने उड़ते हुए नाना लोक-लोकान्तरों में गमन करने वले बनें मानो देखो, राष्ट्रीयता में एक दूसरे को हम एक दूसरे राष्ट्र को ऊँचा बना करके मानो चरित्र और मानवीयता को ला करके हमे अपने में ऊँचा बनना होगा जब यह वाक् उन्होंने प्रगट किया तो बेटा! यह उच्चारण करके यह शब्द वह अपने में मौन हो गएं और यह कहा कि हम अपने में अपने को दर्शन करते रहें तो परमपिता परमात्मा का यह अनूठा जगत मेरे प्यारे! देखो, हमारे समीप अपने में अपनी कृतिका को प्राप्त होना

चाहिए। तो मेरे पुत्रों! विचार-विनिमय क्या यह चर्चा हम कर रहे थे अतिथि रूप की तो अतिथि वह कहलाता है तो पराविद्या का उपदेश देने वाला हो, जो आत्म चर्चाओं में मानो संलग्न रहने वाला हो, मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने वहाँ प्राण की विवेचना करते हुए, मेरे पुत्रों! देखो, यह प्राण सखा है, गति देने वाला है, प्राण तो मुनिवरों! देखो, सूर्य की किरणों में कटिबद्ध रहता है, इसी प्रकार, मानव के शरीरों में, जो ऊर्ध्वा गति करती रहती है वह एक दूसरे को पवित्र बनाती रहती है, एक को सताधारी बना करके, मेरे प्यारे! उसका उद्गीत प्रारम्भ हो जाता हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रगट कराने नही आया हूँ, विचार केवल यह क्या हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हम बेटा! इस संसार सागर से पार हो जाएं, क्योंकि प्रत्येक मानव, इस सागर से पार होना चाहता है, जो मानो मान अपमान वाला जगत है, मान अपमान वाला यह जो ब्रह्माण्ड है, इससे प्रत्येक मानव पार होना चाहता है। तो मुनिवरों! देखो, वेद का मन्त्र यह कहता है, कि प्रत्येक मानव को इससे पार होना है। नाना प्रकार के अनुष्ठान प्रायः मानव के मस्तिष्कों में होने चाहिए। वह अपने में मानो अपनेपन को ही प्राप्त होना चाहिए। मेरे पुत्रों! देखो, यह वाक् उच्चारण करते हुए, महर्षि लोमश इत्यादियों कागभुषुण्ड जी दोनों ने मुनिवरों! देखो, यह उच्चारण किया अब मुनिवरों! देखो, उनकी चर्चाएं हम कल ऋषि-मुनियों के विद्यालयों की चर्चाएं बेटा! हम कल प्रगट कर सकेंगें, आज का वाक् हमारा क्या कह रहा है, कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, बेटा! इस सागर से पार हो जाएं। आओ, मेरे पुत्रों! मैं विशेष विवेचना तुम्हें प्रगट नही कर रहा हूँ, केवल विचार यह क्या हम अपने में अनुशासित बन करके परमपिता परमात्मा के अनूठे जगत को जान करके इस सागर से पार हो जाएं। यह है बेटा! आज का वाक्, आज का वाक् क्या कहता है कि प्रत्येक वेदमन्त्र बेटा! मानो वह किसी सूत्र में पिरोया हुआ है। और वह सूत्र क्या है? और वह ओ३म् रूपी सूत्र है जिसमें बेटा! संसार का ज्ञान और विज्ञान जिसमें समाहित रहता हैं।

तो आओ, मेरे पुत्रों! आज का विचार यह हमारा समाप्त होने जा रहा है कल मुझे समय मिलेगा तो बेटा! इससे आगे की चर्चाएं जो रावण का मन्तव्य रहा हैं राष्ट्र मुनि का जो विज्ञान और विद्यालयों से समन्वय रहा है, यह चर्चांए हम कल प्रगट करेंगें, आज का वाक् अब वेदों का पठन-पाठन होगा। ओ३म् देवाः आभ्यां रथं वा चाहं गतं माणाहाम् ओ३म् युव सर्वा वाचन्नमाः ग्राहाणां त्वा यम रथाः ओ३म् सर्वं माहं आ पा ज्योति रथं मम प्रजाहाम्

८ अतिथि याग ०६ १० १९८६

जीते रहो! देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का, गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ, परम्परागतों से, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का, हम सदैव गुणगान गाते रहते है, कहीं परमपिता परमात्मा को अग्नि के रूप में, आचार्यों ने दृष्टिपात किया है और यह वर्णन किया कि वह अग्निमयी स्वरूप माना गया है। मानो वह अग्नि ही उसका आयतन है। किन्हीं आचार्यों ने उस परमपिता परमात्मा को अतिथि के रूप में स्वीकार किया। क्योंकि जब मानव के पुण्यों का उदय होता है तो उस समय एक अतिथि बुद्धिमान अपनी प्रतिभा का प्रायः वर्णन करने लगता है और ज्ञान और विज्ञान की चर्चाएं मानो वह अपने में दृष्टिपात करने लगता है।

अतिथि

तो वह, परमपिता परमात्मा को अतिथि के रूप में, क्यों स्वीकार किया जाता है, वह तो मानव है। नाना प्रकार के प्रश्नों की झड़ियाँ लग जाती है। परन्तु आचार्यों ने और वेद मन्त्रों ने इसका उत्तर देते हुए कहा है कि अतिथि का अभिप्रायः यह है कि जब मानव के गृह में मानो देखो, एक विकृता में क्या, जिसमें कोई विचार ध्वनि भी नहीं है और वह विचार मानो देखो, एक आभा में परिणत हो जाए, ज्ञान और विज्ञान की आभा और चर्चाओं को अपने में धारण करने वाला, तो मेरे प्यारे! देखो, वे परमपिता परमात्मा की एक अनुपम प्रेरणा है और वह जो प्रेरणा का स्रोत है मानो वह भिन्न-भिन्न रूपों में माना गया है। तो हम उस प्रेरणा के स्रोत वाले, मानो जो प्रेरक है, जो प्रेरणा देने वाला है वह हमारे अतिथि के रूप में परिणत किया गया है।

तो आओ मेरे प्यारे! हमारा वेद का मन्त्र हमें भिन्न-भिन्न प्रकार की उड़ाने उडाता रहता है। मानो जहाँ परमपिता परमात्मा को अतिथि के रूप में स्वीकार करते है, वहाँ आचार्य जन यह कहते है पुरोहितां भविते जेब्भ्रह्वा वेद की आख्यिका यह कहती है कि वह तो पुरोहित हैं, जो पराविद्या को प्रदान करने वाला है, जो मानव के मस्तिष्क में, जो नाना प्रकार की मानो ग्रन्थियाँ लगी हुई होती है, जब उन ग्रन्थियों का स्पष्टीकरण होता है, तो मेरे प्यारे! मानव के मस्तिष्क में एक ऊर्ज्वा उत्पन्न हो जाती है और उसी ऊर्ज्वा के साथ मानव अपने संसार के नाना प्रकार के क्रियाकलापों में तत्पर हो जाता है। आन्तरिक जगत और बाह्य जगत दोनों को वह अपने में सजातीय बना लेता है अथवा दोनों में वह अपने को सकलमयी दृष्टिपात करने लगता है।

तो मेरे पुत्रो! विचार, वेद का मन्त्र हमें क्या कहता है। मानो परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में, वेद के वांगमय में जब प्रवेश करते है तो भिन्न-भिन्न प्रकार की धाराएं, भिन्न-भिन्न प्रकार की मानो देखो, तरगें हमारे समीप आनी प्रारम्भ हो जाती है। इन तरंगों को हम अपने में धारण करते हुए, धारयामी बन जाते है। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि-मुनि परम्परागतों से अपने में विचार विनिमय करते हुए, हमारे यहां आध्यात्मिकवाद और भौतिक विज्ञान दोनों की परम्परागतों से बेटा! विचार धाराएं, मानवीय मस्तिष्कों में रही है और ऋषि-मुनियों में रही है। मेरे पुत्रो! एक-एक वाक् को ले करके, उन्होंने ब्रह्माण्ड की, चर्चाएं की है और एक-एक ऊर्ध्वा में ब्रह्माण्ड को उन्होंने दृष्टिपात किया है।

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जिस समय बेटा! गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के आश्रम में, एक समय महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज का आगमन हुआ और वह अतिथि के रूप में जब परिणत हुए तो मानो देखो, अपने में गम्भीर मुद्रा में मुदित हो करके, वह कुछ अणु और परमाणुओं के ऊपर विचार-विनिमय कर रहे

थे। मेरे प्यारे! देखो, एक-एक परमाणु में वह ब्रह्माण्ड का दर्शन कर रहे थे। क्योंकि एक-एक अणु में ही तो ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आने लगता है। तो मेरे पुत्रों! विचार-विनिमय यह कि ब्रह्माण्ड एक नहीं है। मानो देखो, नाना प्रकार के ब्रह्माण्ड जिनकी गणना मुनिवरों! देखो, शून्य बिन्दु पर चली जाती है। आज हम एक परमाणु में ब्रह्माण्ड का दर्शन करते रहते है तो बेटा! महर्षि विभाण्डक मुनि ने कहा प्रभु! मैं आपका अतिथि हूँ मुझे आप निर्णय कराईए कि मैं भी, जिस आभा में आप लगे हुए है, संलग्न है, मैं उसी विज्ञान के वांगमय में प्रवेश करना चाहता हूँ।

परमाणु में ब्रह्माण्ड

तो मेरे पुत्रो! महर्षि गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहा, आओ, विराजो, मेरे पुत्रो! वह विराजमान हो गये। तो वह मानो समाधिष्ट, प्राण और मन को एकाग्र करते हुए, प्राण का शोधन करते हुए, प्राण को अपान में परिणत करते हुए, मेरे प्यारे! देखो, वह परमाणुवाद का दर्शन करने लगे। जब लघु मस्तिष्क में उसका दर्शन करने लगे तो बेटा! बुद्धि मानो प्रवृत्तियों से, प्राण की धुक्धुकी से, जिस परमाणु को विभक्त किया जाता, उसी में बेटा! ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आने लगता। मेरे पुत्रो! देखो, यह विज्ञानमयी भौतिक विज्ञान, आध्यात्मिक विज्ञान परम्परागतों से ही, ऋषि-मुनियों के मस्तिष्कों में नृत्त करता रहता है मानो देखो, वे अपने में ही नृत्त में परिणत रहे हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, आज के हमारे वेद के पठन-पाठन में जहाँ ब्रह्माण्ड में, अणु में, ब्रह्माण्ड का दर्शन है, परमाणु में ब्रह्माण्ड का दर्शन है मानो देखो, वहाँ याग जैसे उत्तम महान, कर्मो में भी मुनिवरों! देखो, ब्रह्माण्ड का दर्शन होता, दृष्टिपात आता है। जब बेटा! देखो, इस आभा में हम परिणत हो जाते है, तो नाना ऋषियों का, क्योंकि याग हमारा अतिथि माना गया है। यह मानो अतिथि क्यों है? क्योंकि यह हमारे हृदयों में प्रेरणा का एक स्रोत बन जाता है। और जो प्रेरणा देने वाला है, वहीं मानो देखो, एक मानव के हृदय में, एक प्रेरणा आ जाए, वह प्रेरणा का स्रोत बन करके, मानवीयता में परिणत हो जाए, तो मानो देखो, वह अतिथि बन करके, याग हमारे समीप आ गया।

मेरे पुत्रो! देखो, याग का अभिप्रायः तो प्रायः बड़ा विस्तृत माना गया है। परन्तु आचार्यो ने, जब याग की कल्पना की है तो मानो इस ब्रह्माण्ड को, यज्ञशाला के रूप में, मानव ने ऋषि-मुनियों ने, योग समाधिवत हो करके इसका दिग्दर्शन किया है और विचारा है कि यह तो सर्वत्र मानो एक याग हो रहा है। क्योंकि मानव जितना सुक्रियाकलाप कर रहा है, वही याग में परिणत हो रहा है, वह ही यागों में तत्पर हो रहा है।

सभापति

तो मेरे प्यारे! देखो, इस याग को ले करके आज मैं बेटा! तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ, जहाँ राजा रावण के विश्वविद्यालय में, नाना प्रकार के रूपों में देखो, बेटा! अतिथि की विवेचना होती रही है और उन्होंने अपना मन्तव्य प्रगट करते हुए, कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमश, ब्रह्मचारी कवन्धी, ब्रह्मचारी सुकेता और महर्षि भारद्वाज बेटा! एक पंक्ति में विद्यमान है राजा रावण के यहाँ, मेरे पुत्रों! देखो, राजा रावण को सभा का अध्यक्षत्व प्रदान किया गया। परन्तु राजा रावण ने यह कहा, जब उनका नामोकरण सम्बोधित होने लगा तो उस समय उन्होंने कहा-नहीं, हमारे जो पूज्य है वह महर्षि भारद्वाज है। और भारद्वाज मुनि महाराज मानो सभा के अध्यक्षत्व को प्राप्त करने वाले बने। तो मुनिवरों! देखो, जब उन्होंने यह वाक् कहा-तो उन्होंने यह स्वीकार नहीं किया, मैं तपे हुए महापुरुषों के मध्यम में मैं एक मानो राष्ट्रवेत्ता होने से संलग्न हूँ मैं मानो इस सभा के पतित्व को ग्रहण नहीं करूंगा। क्योंकि राजा को सभापति नहीं बनना चाहिए। राजा को सभापति क्यों नहीं बनना चाहिए? क्योंकि सभापति वह बनता है जिसका अन्तरात्मा पवित्र होता है। सभापति वह बनता है, जिसकी आत्मा में, ब्रह्म ज्ञान की पिपासा होती है। मानो देखो, सभापति वह बनता है जो ब्रह्मवेत्ता, ब्रह्म की उड़ान उड़ने वाला होता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, जब यह वाक् राजा रावण ने कहा तो मुनिवरों! देखो, महर्षि कागभुषुण्ड जी ने, इनकी प्रशंसा की और यह कहा, लोमश मुनि ने भी इन्हीं वाक्यों की प्रशंसा की और उन्होंने भी कहा-धन्य है राजन्! मानो देखो, तुम्हारा यह जो याग होने जा रहा है, यह जो आध्यात्मिक याग होने जा रहा है यह जो राष्ट्रीय उत्थान के लिए याग होने जा रहा है यह मानो देखो, सफलता के आंगन में प्रवेश कर रहा है, यह सफलता को प्राप्त हो रहा है। जब मानो देखो, यह वाक् उन्होंने प्रकट किया तो राजा रावण अपनी निचरली स्थली पर विद्यमान हो गये। मेरे पुत्रों! देखो, इतने में ब्रह्मचारी कवन्धी ने कहा-हे भगवन! देखो, हमारे सहपाठी, विज्ञान में पारायण है मानो देखो, उनका जितना सात्विक आहार है, उतना ही सात्विक व्यवहार है देखो, महाराजा कुम्भकरण, सुनेत ब्रह्मचारी को इस याग का अधिपति बनाना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, इतने में उन्होंने कहा कि उनका उपाधि नाम कुम्भकरण माना जाता है। महाराजा कुम्भकरण ने कहा कि नहीं, मैं और मेरे विधाता तो एक ही सूत्र के मनके है। मैं इस वाक् को स्वीकार नहीं करूंगा, क्योंकि मैं मानो सदैव ऐसे महापुरुषों से, विद्यालयों में अध्ययन करता रहा हूँ, मैं भयंकर वनों में, पर्वतों की कंदराओं में, हिमालय की कंदराओं में विराजमान हो करके उनके सहयोग से विज्ञान की नाना प्रकार की धाराओं का अध्ययन करता रहा हूँ, मैं इस पद को कदापि ग्रहण नहीं करूंगा।

तो मेरे पुत्रों! देखो, वह भी निचरले स्थान पर विराजमान हो गये। महर्षि कागभुषुण्ड जी ने कहा भगवन! हे भारद्वाज! क्योंकि आप ब्रह्मवेत्ता भी ह,ै विज्ञानवेत्ता भी है, विज्ञान की अनूठी, अनूठी वार्त्ता को तुम हमारे समीप उद्धृत करते रहते हो। आओ, भगवन! इस अध्यक्षत्व को ग्रहण करो। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने, सर्वत्र ऋषियों की वार्त्ता को स्वीकार कर लिया। मुनिवरों! उन्होंने कहा कि भगवान! आप जो भी उच्चारण कराना चाहते हैं, क्योंकि भगवान! वह जो पुरोहित होता है, वह अतिथि है और जो अध्यक्षत्व को प्राप्त होता है वह सभा का अतिथि होता है। मानो अतिथि कहते है जो प्रबल हो, जो मानो निष्पक्ष वार्त्ता प्रगट करने वाला हो। जिसके हृदय में मानो सात्त्विकता के अनुपम विचार हो। मेरे पुत्रो! देखो, इस वाक् को ले करके, उन्होंने कहा-तुम अपने विचार व्यक्त करो।

मेरे प्यारे! देखो, विचारों को व्यक्त करने के लिए, ब्रह्मचारी कवन्धी अपने विचारों को व्यक्त कर रहे थे। इतने में ब्रह्मचारी सुकेता उपस्थित हो गएं और सुकेता ने कहा-प्रभु! हम इस विश्वविद्यालय में मानो विराजमान है जहां पृथ्वी के, ब्रह्मचारी अपने में अध्ययन कर रहे है, अपने में अनूठा, अनूठा अध्ययन ज्ञान और विज्ञान में जिनकी प्रायः अनुपम गतियाँ रही है। आज देखो, हम सभा में विराजमान है। आह, हमारे यहाँ सबसे प्रथम ब्रह्मचारी को जो दीक्षान्त उपदेश दिया जाता है, तो दीक्षान्त में कहा जाता है कि जिस विद्यालय में जो ब्रह्मचारी अध्ययन करता है, जो ब्रह्मचारी अपने जीवन की महान प्रतिक्रियाओं में लगा रहता है। ज्ञान और विज्ञान में रक्त रहने वाला, लोक-लोकान्तरों की उड़ाने उड़ता रहता है वह ब्रह्मचारी अपने विद्यालय के उस भूमि तल पर, अपनी विचारधाराएं व्यक्त करने वाला है और उसका मानो जो भी अपने जीवन में क्रियाकलाप हो, चाहे वह क्रियाकलाप आध्यात्मिकवाद में हो, चाहे वह विज्ञानवाद में हो, चाहे वह इस गृह में प्रवेश करने वाला हो, चाहे, आचार्य कुल में प्रवेश करने वाला हो, परन्तु अपनी पवित्र, पावन भूमि का उपदेश अपने हृदय से दूरी नहीं करना चाहिए। मेरे पुत्रों! अपना दीक्षान्त उपदेश दे करके यह विचार उन्होंने व्यक्त किया कि हम सबसे प्रथम आध्यात्मिकवाद में जन्म लेते है आध्यात्मिकवाद की प्रतिभा में रक्त रहते है, हमारे यहाँ आध्यात्मिकवाद किसे कहा जाता है? भौतिक विज्ञान किसे कहा जाता है? यह प्रश्न हमारे विद्यालयों में प्रायः बना रहता है।

भौतिक व आध्यात्मिक विज्ञान

मेरे प्यारे! देखो, मुझे तो कुछ ऐसा स्मरण है, मैंने बहुत पुरातन काल में यह वाक् प्रगट भी किया कि

ब्रह्मचारी जन, अपने में मानो देखो, भ्रमण करते हुए अतिथि के रूप में, एक समय गाड़ीवान रेवक मुनि के द्वारा पहुंचे और वहाँ से भ्रमण करते हुए, महर्षि वैशम्पायन के द्वारा जा पहुँचे और वैशम्पायन ऋषि महाराजा ने ब्रह्मचारियों को, ऋषि-मुनियों को ले करके भारद्वाज गोत्र में शिकामकेतु द्वार पर जा पहुँचे। परन्तु देखो, उनमें विचारधारा केवल यही कि आध्यात्मिकवाद क्या है? और भौतिक विज्ञान क्या है? जब शिकामकेतु से यह कहा गया कि महाराज! आध्यात्मिकवाद क्या है? तो ऋषि ने कहा-कि आध्यात्मिकवाद तो एक अतिथि के रूप में है। भौतिक विज्ञान एक राष्ट्र के रूप में माना गया है मानो देखो, जहाँ समाज का संगठन होता है। उसमें एक अधिपति, एक-दूसरे की रक्षा के लिए निर्वाचन होता है उसका नाम तो भौतिकवाद कहलाता है। और जो आध्यात्मिकवाद है उसमें जब अनुसन्धान करने लगता है, व्यष्टि में जाता है, समष्टि में प्रवेश हो जाता है, एक-एक कण-कण में वह ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात करने लगता है और उसमें मानो देखो, वह जो अणु है वह जो परमाणु है वह मानो देखो, एक सूत्र में पिरोया हुआ है, एक चेतना में पिरोया हुआ है, उस चेतना के स्वरूप को जानना ही आध्यात्मिकवाद कहलाता है।

मेरे पुत्रो! देखो, जब ऋषि ने यह वर्णन कराया, तो मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारी सुकेता ने कहा-कि महाराज! ऋषि-मुनि अतिथि के रूप में जाते है और वह अपने में ज्ञान और विज्ञान की वार्त्ता को ले करके अपने समीप आते है।

चित्र में क्रियाकलाप

मेरे प्यारे! देखो, शिकामकेतु के सम्बन्ध में, मैंने तुम्हें कई काल में चर्चाएं की, हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की चर्चाएं होती रहती है, मानो देखो, शिकामकेतु उद्दालक गोत्रीय कहलाते थे, हमारे यहाँ उद्दालक गोत्र बड़ा विचित्र गोत्र रहा है। तो मुनिवरों! देखो, जो भी अतिथि आता था। उसका मानो वह स्वागत करते रहते थे। तो मुनिवरों! देखो, शिकामकेतु ऋषि महाराज, आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान क्या, अपने यन्त्रों में विज्ञान के द्वारा अपने पचासवें महापिता का वह दर्शन करते रहते थे। मानो देखो, उन्होंने यह निर्णय लिया था, कि हमारे यहाँ जो यज्ञशाला में, यज्ञमान विद्यमान होता है और वह स्वाहाः उच्चारण करता है तो वह जो शब्द है, वह अग्नि की धाराओं पर, साकल्यों को ले करके, वेद मन्त्रों की ध्वनि को ले करके, मुनिवरों! देखो, वह द्यौ लोक में प्रवेश कर जाता है मानो वह द्यौ लोक में चला जाता है। तो द्यौ लोक में देखो, शब्द के साथ में क्रियाकलाप भी है, मानव का चित्र भी है, और चित्र सहित उसका क्रियाकलाप यन्त्रों में बेटा! प्रायः दृष्टिपात आता रहा है।

आज मैं याग के सम्बन्ध में, तुम्हें कोई विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विचार क्या, मुनिवरों! देखो, यह वाक् ब्रह्मचारी सुकेता ने वर्णन किए और सुकेता ने कहा कि महाराज! हमारे यहाँ जितने भी राजनेता हुए हैं अथवा भगवान मनु से ले करके राष्ट्रवेत्ताओं की प्रणालियाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की चली। परन्तु देखो, उनमें एक विशेषता रही है कि वह धर्म की रक्षा करने के लिए क्योंकि राष्ट्र का निर्माण किया जाता है और राष्ट्र क्योंकि धर्म के लिए होता है और विचारना यह है कि धर्म किसे कहते है?

ज्ञानेन्द्रियों में धर्म

प्रत्येक मानव धर्म की विवेचना में लगा रहता है। मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे कई काल में, धर्म की विवेचना करते हुए मानो अपने वाक् प्रगट किए, धर्म की विवेचना करते हुए, ब्रह्मचारी सुकेता ने यह कहा कि मानव के शरीर में जो पांच ज्ञानेन्द्रियाँ है, इनमें धर्म समाहित रहता है। यही धर्म का पुंज कहलाता है। मानो देखो, इससे जो भी पृथक् क्रियाकलाप है वह मानो देखो, धर्म में न रह करके, वह रूढ़िवाद भी परम्पराओं में परिणत हो जाता है। क्योंकि राष्ट्र का जो निर्माण है अथवा राष्ट्र का जो जन्म है, वह राष्ट्र इसलिए उत्पन्न होता है कि धर्म और मानवीयता की रक्षा होनी चाहिए। मुनिवरों! देखो, मानव सदैव सुदृष्टिपात करने वाला हो, हमारे यहाँ वेद के

वांगमय में, जब ऋषि-मुनि याग के क्षेत्रों में जाते हैं तो वहाँ पहला एको ब्रह्मा एक ही शब्द होता है स्वाहाः। उद्गाता जब उद्गीत गाता है, मन्त्रों का समापन होता है तो वह वहाँ स्वाहा कहता है। स्वाहा का अभिप्रायः यह है कि सुदृष्टिपात करना, सुवाक् उच्चारण करना, मानो सु-प्रीति होना। मेरे प्यारे। देखो, सुगन्धि होना, और मेरे प्यारे! देखो, सु-शब्दों में शुद्धता होनी चाहिए। तो विचार मानो देखो, सु-रक्त होना चाहिए। जब सु आता है तो मेरे प्यारे! स्वाहा बन करके, वही मुनिवरों! देखो, मानव की पाँच ज्ञानेन्द्रियों का, एक रथ बन करके, मेरे पुत्रो! देखो, द्यौ लोक में प्रवेश कर जाता है। तो आज मैं बेटा! देखो, विज्ञान के वांगमय में न जाता हुआ, केवल धर्म क्या है? सु का नाम धर्म है। इसे अपने में धारण करना है। तो मेरे पुत्रो! विचार विनिमय में क्या, आज मैं तुम्हें विशेषता में ले जाना नहीं चाहता हूँ यह तो विचारो का वन है, इस वन में नहीं जाना चाहता हूँ।

महानता का दर्शन

केवल विचार-विनिमय क्या, मेरे पुत्रो! देखो, ब्रह्मचारी सुकेता ने अपने शब्द, उच्चारण किए और उन्होंने कहा-प्रभु! आओ, अब हम याग करने वाले है। मेरे प्यारे! देखो, जहाँ साकल्य का विचार होता है, अग्नि को देवताओं का मुख बनाया जाता है, वहाँ राष्ट्र में बेटा! विचारों का भी याग होता है। वहाँ राष्ट्र में धर्म और मानवीयता को अग्रणीय बनाने के लिए बेटा! देखो, अपनी एक महान पद्धति बनाता है और विचित्रता में परिणत कर देता है। तो बेटा! विचारों का याग होना, विचार क्या कहता है, मुनिवरों! देखो, चिन्तन, मनन करना और मन के साथ में विचारों को लाना यही तो मुनिवरों! देखो, एक महानता का दर्शन करना है। यही याग के वांगमय में प्रवेश करना है, जिससे मानव के हृदय में, एक हृदय अगम्यता की ज्योति में प्रवेश होता हुआ, मुनिवरों! देखो, ज्ञान और विज्ञान की अनुपम धाराओं में गति करने लगता है।

मेरे पुत्रो! देखो, यह विचार दे करके मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारी सुकेता अपने में मौन हो गएं और उन्होंने कहा-कि प्रभु! मेरा विचार तो केवल इतना ही है कि यह याग अपने में महान बना रहे, जिससे राष्ट्र एक मानवता व्यक्त करता हुआ, राष्ट्र अपने में महान बना रहे। मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् उच्चारण करते हुए, ब्रह्मचारी सुकेता अपने स्थान पर विद्यमान हो गये। मेरे पुत्रो! उन्होंने अपना सम्बोधन करते हुए देखो, उनके सम्बृद्धे वृत्तं ब्रह्माः मुनिवरों! देखो, उन्होंने कुम्भकरण जी को सम्बोधित किया, कि वह अपने विचार व्यक्त करें।

कुम्भकरण का उद्बोधन

मेरे प्यारे! देखो, कुम्भकरण जी उपस्थित हो करके, नत मस्तिष्क हो करके, ऋषियों के चरणों को स्पर्श करते हुए कहा-हे भगवन! मैं इसलिए उपस्थित हुआ हूँ कि मैं ऋषियों के चरणों की वन्दना कर सकूं, मैं व्याख्याता नहीं हूँ, क्योंकि जो भी कुछ मैंने अपने जीवन काल में अध्ययन किया है, जीवन काल में जो जाना है, वह इन्हीं चरणों के आनन्दं ब्रह्मे चरणों में ओत-प्रोत हो करके मैंने उस वाक् को जाना है। जिसको मैं उद्गीत गाता रहता हूँ, परन्तु इनके समीप मैं क्या उद्गीत गा सकता हूँ। मेरे पुत्रो! देखो, उन्होंने वर्णन करते हुए कहा कि मेरे हृदय की एक ही कामना रहती है, क्योंकि मैंने ज्ञान और विज्ञान को बहुत जाना है हमारे यहाँ नाना प्रकार के यन्त्र है जो लोक लोकान्तरों में गति करने वाले है हमारे यहाँ और भी भिन्न-भिन्न प्रकार के यन्त्र है परन्तु देखो, इन यन्त्रों की गाथा न गाता हुआ, केवल हमारे यहाँ वरूणास्त्र है, ब्रह्मास्त्र है, भिन्न-भिन्न प्रकार के यन्त्र है। लोक लोकान्तरों में जाने वाला यातायात बनने वाला है, कुछ बन गया है। परन्तु देखो, उसके पश्चात मैं अपने में यह उद्गीत गाने के लिए आया हूँ कि यहाँ प्रजा विद्यमान है, यहाँ राष्ट्रवेत्ता विद्यमान है।

राष्ट्र की पवित्रता

मेरे विचार में यह है कि हमारा राष्ट्र उस काल में सफल होगा, जब एक दूसरे का समाज में ऋणी कोई

नहीं रहेगा। क्योंकि जब तक समाज ऋणी रहता है तब तक मुनिवरों! देखो, राष्ट्र कदापि ऊंचा नहीं बनता। यह राजा का कर्तव्य है कि राजा अपने राष्ट्र में मानो देखो, एक दूसरे का ऋणी न रहने दे, मेरे प्यारे! आध्यात्मिक वांगमय में जाने वाले ऋषि-मुनियों ने मानो देखो, ये पांच प्रकार के या तीन प्रकार के देखो, ऋणों का वर्णन किया है सबसे प्रथम ऋण तो ब्रह्मऋण कहलाता है, उसके पश्चात देव ऋण है और उसके पश्चात अतिथि ऋण है और भी नाना प्रकार के मानो देखो, वृचां ब्रहे देखो, ऋषियों का ऋण है, इन भिन्न-भिन्न प्रकार के ऋणों में देखो, हम ऋणी रहते हैं, वह ऋण हमसे जाना चाहिए। हमें ऋणी नहीं रहना चाहिए और वह ऋण उस काल में जाता है जब ब्रह्मचारी जन मानो बाल्य काल से युवा काल तक ऋषि-मुनियों के विचारो की गाथा गाते हुए, अपने को उसमें संलग्न कराए, तो ये विश्वविद्यालय पवित्र बन जाते है। और जब विश्वविद्यालयों में ऋषि-मुनियों के तपे हुए विचारों को व्यक्त करने लगते है, तो राजा का राष्ट्र भी पवित्र बन जाता है क्योंकि राजा का राष्ट्र, केवल विचारों से ऊंचा बनता है, गृहों से ऊंचा नहीं बनता, भवनों से ऊंचा नहीं बनता यह केवल मानो देखो, विचारों से ऊंचा बनता है। जब मानव के हृदय में एक दूसरे के प्रति स्नेह के विचार बन जाते है, एक दूसरा मानो देखो, किसी का ऋणी ना रहे तो जब वह अपने में होतज्ञ हो जाता है तो मानो देखो, वह अपनी राष्ट्रीयता में, अपने को महान बनाता रहता है। और राष्ट्र भी महान बन जाता है।

कुम्भकरण जी का चिन्तन

तो मुनिवरों! देखो, महाराजा कुम्भकरण ने एक वाक् यह कहा कि एक समय मैं हिमालय की कन्दराओं में अध्ययन कर रहा था। भारद्वाज मुनि के आश्रम से मैं भ्रमण करके आया, उन्होंने मुझे वर्णन कराया कि यह जो स्वर्णमयी धातु है, यह जो स्वर्णमयी खनिज है इस खनिज में मानो देखो, सुगन्ध को ग्रहण करना है। मेरे प्यारे! जितना भी धातु पिपाद है संसार में, सर्वत्रता में एक सुगन्धि की तरंगे होती है क्योंकि वह सुगन्ध को अपने में ग्रहण कर लेती है, हमारा इतना गम्भीर अध्ययन होना चाहिए, हमारी इतनी गम्भीर आचारणीयता होनी चाहिए, जिससे हम इसे अपने में जान सकें, अपने में विचार ला सकें कि हम इसकी सुगन्ध जान सके, वास्तव में खनिज में सुगन्ध आ जाना, मुनिवरों! देखो, इसको जान लेना, उस सुगन्ध से मानव के जीवन का क्या सम्बन्ध है। क्योंकि मानव का जीवन जब पिण्ड और ब्रह्माण्ड की कल्पना करता रहता है तो मानो वह सुगन्धमयी परिणत कहलाता है। मुनिवरों! देखो, जब उन्होंने यह वाक् कहा कि मैं जब हिमालय की कन्दराओं में यह अध्ययन कर रहा था तो भिन्न-भिन्न प्रकार की अग्नियों का चयन कर रहा था, कि किस अग्नि के द्वारा यह स्वर्ण की धातु का मानो खनिज का निर्माण होता है और भी नाना प्रकार की अग्नियाँ पृथ्वी के गर्भ में विद्यमान होती है।

मंगल लोक के यात्री कुम्भकरण

तो मेरे प्यारे! देखो, कुम्भकरण जी ने जब यह वर्णन कराया, राज सभा में तो ब्रह्मे व्रतं देवाः तो उन्होंने कहा मैंने इस धातु को जान करके, नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों का यात्री बना हूँ मानो देखो, यात्री बन करके, उस समय मैं यात्रा में भ्रमण करता हुआ मानो गुरुदेव की आज्ञा पा करके, एक समय हम मंल लोक में पहुंचे थे। तो मानो मंल लोक के एक विज्ञानवेत्ता ने यह कहा कि यह जो तुम लोक लोकान्तरों में भ्रमण कर रहे हो, यह तो मानो नकारात्मक है मैं यह जानने के लिए तत्पर रहता हूँ कि तुम्हारा राष्ट्र जहाँ से तुम्हारा आगमन हुआ क्या है? वह महान सुचरित्रता उसके द्वारा होनी चाहिए। क्योंकि सुचरित्रता ही देखो, लोक-लोकान्तरों में परिणत करा देती है, सुगन्धि देने लगती है।

तो मुनिवरों! देखो, जब उन्होंने यह वार्त्ता प्रगट की तो मानो मैं शान्त हो करके पुनः अपने आश्रम में आ पहुँचा। और मुनिवरों! आश्रम में आकर के यन्त्रों के द्वारा अपने को शान्त दृष्टिपात किया। तो मैं विचारने लगा,

विचारते-विचारते मैं पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा पहुँचा तो तब उन्होंने मुझे निर्णय कराया कि यह यथार्थ है कि तुम सबसे प्रथम अपने राष्ट्र, अपने समाज को महान बनाओ, उसके पश्चात तुम्हारा राष्ट्र पवित्र बनेगा। मेरे पुत्रो! देखो, यह वाक् कह करके उन्होंने कहा-मेरी इच्छा यह है मैं अणु और परमाणुओं की शिक्षा देता रहता हूँ, अपने विचार व्यक्त कहता रहता हूँ। मानव को यौगिकता के द्वारा और भौतिकवाद की की प्रतिभा के मानो अनन्य प्रकारों से उसका उद्गीत गाता रहता हूँ, अथवा उसका उद्गीत गाते गाते अन्त में मानो देखो, मैं मौन हो जाता हूँ। तो मेरा विचार यह है कि-ब्रह्मचारी जनो! तुम्हें मैं मानो विद्यालयों में शिक्षा देता रहता हूँ, मेरा विचार यह है कि तुम अपने मानव जीवन को महान बना करके, पवित्र बना करके, तुम अपने को संसार में अतिथि के रूप में स्वीकार करो, क्योंकि संसार में जो भी प्राणी यहाँ आता है और मानो वह अतिथि बन करके ही आता है और वह अतिथि बन करके ही अपने लोक को प्राप्त हो जाता है।

मेरे पुत्रो! देखो, यह वाक् उच्चारण करके, महाराजा कुम्भकरण अपने में मौन हो गएं और यह कहा कि प्रभु! मेरा तो केवल इतना विचार है कि हम अपने राष्ट्र और मानवीयता को ऊंचा बनाए तो मेरे पुत्रो! देखो, वह अपनी स्थलियों पर विद्यमान हो गए। जब विद्यमान हो गएं तो देखो, महर्षि भारद्वाज ने संकेत किया, जो राष्ट्रपिता थे मानो देखो, जो रावण के नाना थे उनका बाल्यकाल का नाम मानो देखो, कुछ ओर ही कहा जाता था, जब वह उपस्थित हुए, उन्हें संकेत किया गया तो वह अपने आसन पर विद्यमान हो गये। उन्होंने कहा, मैं दम्मह चरणों की वंदना करते हुए ऋषि-मुनियों का जो मानवीय जीवन होता है वह राष्ट्रवेत्ताओं से ऊर्ध्वा में गति करने वाला है, ऊर्ध्वा में गति करता रहता है और उन्होंने अपने में उपस्थित हो करके, अपने समाज को सम्बोधित करते हुए अपने मानो देखो, आचार्यो को सम्बोधित करते हुए, मुनिवरों! देखो, ऋषि-मुनियों के चरणों की वन्दना करते हुए उन्होंने कहा कि मेरे हृदय में यह आकांक्षा रही है कि मेरा राष्ट्र, ज्ञान और विज्ञान में इतना पारायण होना चाहिए कि मानो देखो, लोक लोकान्तरों के विज्ञानवेत्ता भी उसकी मानो देखो, रचना न पा सके। मेरे हृदय की यह कामना रहती है। परन्तु आध्यात्मिक विज्ञान इतना महान होना चाहिए, जिससे प्रत्येक, अपनी अन्तरात्मा को जान सके, क्योंकि अन्तरात्मा मानो देखो, याग के सदृश्य है जैसे यज्ञशाला में ब्रह्मा अपने पद को ग्रहण करता हुआ वह अपने में अपनेपन की धारा में रत्त हो जाता है वह याग का स्वामीतव करने वाला है, अहिंसा परमोधर्म की वेदी को, विचारों को अपनाने वाला है मानो देखो, वह जो ब्रह्मा है वह याग का नेतृतव करने वाला है। इसी प्रकार मेरे विचारों में यह आता रहता है कि राष्ट्रपिता इसी प्रकार का होना चाहिए क्योंकि वह राष्ट्र और प्रजा का एक यज्ञ मानो देखो, वह ब्रह्मा बना हुआ है उनके द्वारा ब्रह्मज्ञान होना चाहिए, आत्मा की ऊंची उड़ान होनी चाहिए। वह देखो, वेद प्रवृत्तियाँ मानो उनके हृदयों में लगी रहे।

रावण का उद्बोधन

मेरे पुत्रो! देखो, ये वाक् जब उन्होंने प्रकट किया तो उन्होंने कहा प्रभु! मेरे हृदय में एक ज्ञान की पिपासा है परन्तु मैं देखो, ज्ञान भी न करने वाला हूँ अश्वमेध याग कहते है जहाँ मानो देखो, अतिथि जन आए और आ करके वेदज्ञान में परिणत हो जाए। मेरे यहाँ याग और देखो, प्रजा दोनों एक सूत्र में परिणत हो जाएं। मेरे पुत्रो! देखो, अश्व नाम राजा का है राजा और प्रजा मिलकर के दोनों राष्ट्र को एक महान, उज्ज्वलता में परिणत कर दे, तो उनका एकोकीकरण हो जाता है।

तो मुनिवरों! देखो, राष्ट्र पवित्र बन जाता है। यह राजा ब्रह्मवेत्ता होना चाहिए। परन्तु देखो, रावण ने अपने को सम्बोधित करते हुए कहा-प्रभु! मैं याग कर रहा हूँ मैं ब्रह्मवेत्ता तो उतना नहीं बना हूँ, परन्तु देखो, एक याग हो जाएं तो महान विज्ञानवेत्ता बनकर के इस संसार के, परमपिता को अपने में धारण करना चाहता हूँ। मेरे पुत्रो!

देखो, यह वाक् कह करके उन्होंने कहा-मेरे राष्ट्र में मेरी पुत्रियाँ मानो देखो, पवित्र बन करके भक्ति के मार्ग पर जाने वाली है।

मानो देखो, ये वाक् कह करके रावण अपनी स्थली पर विद्यमान हो गएं और उन्होंने कहा-प्रभु! मैं तो इतना विशेष अपने में कल्पना करता रहता हूँ अपना विचार विनिमय में करता रहता हूँ। तो मेरे पुत्रो! ये वाक् जब उन्होंने प्रकट किए तो अपने में अपनेपन की दृष्टि को दृष्टिपात करने लगे।

प्रत्येक मानव का अतिथि रूप

तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या, आज के हमारे वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि अतिथियों का मान करने वाले, समय-समय पर होने चाहिए। जिस अमृत को पान करके, अमृतमयी बन करके उसको अपने में धारण कर लें। तो मेरे प्यारे! ये वाक् उच्चारण तो विचार विनिमय क्या हमारा जो विचार चल रहा है वो ये विचार है कि प्रत्येक मानव देखो, अतिथि के रूप में विद्यमान है। मेरे प्यारे! ज्ञान और विज्ञान के रूप में विद्यमान है क्योंकि मानव ब्रह्माण्ड और पिण्ड की कल्पना करता रहता है अपने में सुगन्ध करता रहता है अपने में मानवीयता का दर्शन करता रहा है जिससे बेटा! वह महान, विज्ञान और आध्यात्मिकवाद में प्रवेश होता हुआ और भौतिक विज्ञान को अपने में, भेदता हुआ, वह आध्यात्मिवाद में प्रवेश कर जाता है।

तो मेरे पुत्रो! आज का विचार, हमारा ये क्या कह रहा है, हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, महानता के लिए सदैव तत्पर रहते है। परम्परागतों से ही, इन्द्रियों का साकल्य बनाता रहा है। और साकल्य बनाना देखो, आध्यात्मिक याज्ञिक देखो, बेटा! अपने में अपना याग कर रहा है उसी में हूत कर रहा है और ब्रह्माण्ड का तो दर्शन करता रहता है इस ब्रह्माण्ड में मानो देखो, कितने मनके एक सूत्र में पिरोए हुए है जिनकी माला बना करके अपने में धारण करता रहा है। तो मेरे पुत्रो! विचार विनिमय क्या, आज का हमारा ये वाक् क्या कह रहा है हम परपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हम इस संसार सागर से पार हो जाएं, सम्भव बह्मे आज का विचार, हमारा यही कहता है कि प्रत्येक मानव को अपने याग में परिणत हो जाना चाहिए।

जीवन का मन्तव्य

आओ मेरे प्यारे! आज का ये विचार क्या कह रहा है मानो परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, अपनेपन का विचार करते हुए, इस संसार सागर से पार हो जाएं। बेटा! ये संसार जो दृष्टिपात आ रहा है मानो ज्ञान, विज्ञान की उड़ाने उड़ रहा है कोई आध्यात्मिवेत्ता बना हुआ है मानो अपने लिए अपनेपन का गठन कर रहा है तो बेटा! कल मुझे समय मिलेगा, तो मैं महर्षि भारद्वाज मुनि, विद्यालय में...... मानो देखो, जैसे विद्यालय में आचार्य ब्रह्मज्ञानियों को उद्बोधित करता है, कही विज्ञान के वांगमय में, कही मानो, दर्शनों के वांगमय में, कही मुनिवरों! देखो, ये चर्चा कल प्रकट करेंगे। आज का विचार हमारा क्या कह रहा है हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, हम बेटा! इस संसार सागर से पार हो जाएं, हमारा वेद का मन्त्र यही कहता है कि हम परमपिता परमात्मा की महिमा को जानते हुए, इस सागर से पार हो जाएं। मानो देखो, जितने भी संसार में ज्ञान और विज्ञान नाना प्रकार के अनुष्ठान करता रहता है, क्रियात्मक अपने जीवन को बनाता रहता है उसका एक ही मन्तव्य होता है कि मेरे जीवन में अन्धकार नहीं रहना चाहिए। मेरे जीवन में प्रकाश रहना चाहिए, अन्धकार को मैं नहीं चाहता मैं रात्रि, अहिल्या को नहीं चाहता....। मेरे प्यारे! मैं रात्रि, अहिल्या को नहीं चाहता हूँ, जो अन्धकार में ले जाएं, जो सुषुप्ति में ले जाएं, जो मानो मुझे आलस्य और प्रमाद में ले जाएं, मैं तो प्रकाश में बना हुआ हूँ। तो मेरे प्यारे! देखो, अन्धकार ज्योतिस्कृता लोकाः।

मेरे पुत्रो! देखो, मैं उस स्थान में जाना चाहता हूँ जिससे मुझमें प्रकाश आ जाएं, जैसे वेद रूपी प्रकाश, मेरे प्यारे! मानव के अन्तःकरण को पवित्र बनाने वाला है जैसे नेत्रों का प्रकाश अद्वितीय है, इसीलिए हृदय का जो प्रकाश है, अन्तरात्मा का जो प्रकाश है वह वेद रूपी ज्ञान माना गया है। इसीलिए बेटा! वेद रूपी प्रकाश को अपनाते हुए, हम अन्धकार रूपी मानो अहिल्या को त्याग करके, हमें प्रकाश रूपी गौतम को अपना लेना चाहिए। जो मेरे प्यारे! गौतम गो वरं ब्रह्मा मानो देखो, अन्धकार को त्यागने वाला, प्रकाश में रत्त रहने वाला, उसका नाम गौतम कहा जाता है। ये चर्चायें बेटा! आज मैं इसलिए उच्चारण कर रहा हूँ कि हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में, वेद के वांगमय में बेटा! ये अलंकार की चर्चायें आती रहती है और अलंकार को, अलंकार के रूप में स्वीकार करना, साहित्य को साहित्य के रूप में स्वीकार करना, मेरे पुत्रो! देखो, ये है आज का वाक् समाप्त। अब समय मिलेगा तो शेष चर्चायें कल प्रकट करेंगे। ओ३म् देवाः ओ३म् ग्राहणां त्वां मां आप्याहम रथा यम सर्वाहं ओ३म् आत्मा रथं आपा रयि रथं मनाः आप्यां रेवं सर्वा। अच्छा भगवन्! आज्ञा।

९ प्राणायाम ०७ १० १९८६

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी हैं, मानो उस ब्रह्माण्ड के सर्वत्र मूल में वह विद्यमान हैं, उस परमपिता परमात्मा को हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न रूपों में उसका निरूपण किया हैं। परमपिता परमात्मा को कहीं अग्नि के रूप में परिणत किया है, क्योंकि वह तेजोमयी है, और अग्नि उसका आयतन माना गया हैं। वह उसका गृह है, अथवा उसका वह सदन हैं, तो इसीलिए परमपिता परमात्मा को हमारे यहाँ अग्निमयी माना गया हैं। हमारे एक ही प्रकार की विवेचनाओं में नाना प्रकार की विवेचनाएं हमारे समीप आती रहती हैं। हमारे यहाँ जैसे अग्नि के भिन्न-भिन्न स्वरूपों का वर्णन आता रहता हैं। इसी प्रकार यह जो चेतना में जो बद्ध रहने वाला हैं, मानो वह चेतनामयी स्वरूप माना गया है। जो हमारा निर्माण करने वाला हैं, अथवा जो नियन्ता हैं, और अनुपम हैं, हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा का सदैव गुणगान गाते रहें। क्योंकि प्रत्येक मानव इस संसार में जब आता हैं, तो मानो उस परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसके गुणों का गुणवादन करने के लिए आता हैं। और यदि प्रत्येक मानव उस परमपिता परमात्मा को अपने अधिकार पूर्वक अपने में ग्रहण करता रहे और अपने को समाहित होता हुआ दृष्टिपात करता रहे, तो मेरे पुत्रों! वह मानव और परमपिता परमात्मा का जो अनुपम जगत है, यह महान बनता चला जाता हैं।

आज के हमारे वेद के पठन-पाठन में भिन्न-भिन्न प्रकार की चर्चाएं आती रहती हैं, हमारे यहाँ माताओं का मानो जैसा वेद का मन्त्र हमें ममतामयी में प्रवेश कराता रहता है, परन्तु जब माता अपने कर्तव्य का पालन करती हैं, तो मुनिवरों! देखो, वह कर्तव्यवाद में उस माता की ममतामयी और महान बना देता हैं। उस माता के हृदय की जो कृतियां हैं, अथवा जो धाराएं हैं, वह इतनी महान और पवित्र बन जाती हैं। परन्तु आज का हमारा वेद का पठन-पाठन आज हमें उसी आश्रम में ले जाना चाहते हैं, जहाँ ऋषि-मुनि अपने में बेटा! भिन्न प्रकार का विचार-विनिमय करते रहे हैं, और नाना प्रकार के विचारों में अपने को रत्त कराते रहे हैं। परमपिता परमात्मा को कहीं पुरोहितों के रूप में मानो यह पराविद्या को प्रदान करने वाला है, वह पुरोहित कहलाता हैं। जैसे गृहाश्रम में मानो एक अतिथि का आगमन होता है, और गृह स्वामी और गृह स्वामिनी उस अतिथि के चरणों की वन्दना करते हैं और चरणों की वन्दना करते हुए नाना प्रकार कन्दमूल इत्यादि अन्न जल से जब तृप्त करते हैं। तो अपने में वह तर्पण करते रहते हैं, तर्पण का अभिप्रायः यह है कि त्याग पूर्वक मानो उसकी आराधना करके कहते हैं। आओ, भगवन! यह हमारा बड़ा सौभाग्य है, आप मानो बिना सूचना के मेरे आश्रम में आपका गमन हुआ हैं। मैं कितना सौभाग्यशाली हूँ, मुनिवरों! देखो, जब गृहस्वामी और गृहस्वामिनी यह कहते हैं, तो अतिथि अपना उपदेश देता हैं। अन्न जल से तृप्त होता हुआ वह अतिथि कहता है कि ब्रह्मणो वाचो सम्भवा लोकाम् मानो देखो, यह लोक-लोकान्तरों वाला यह जो अनूठा जगत है, मानो यह ब्रहा गृहस्वामी यह तेरे लिए प्राप्त होना चाहिए। यह तेरी प्रतिभा में मानो सदैव रत्त रहने वाला हो। तो मेरे प्यारे! देखो, जब वह यह कहता हैं, तो वह गृह स्वामी अपने में प्रसन्न होता हैं, और उसे उपदेश देता है, इसी प्रकार हमारे यहाँ गृह स्वामी गृहस्थलियों में विद्यालयों में आचार्यों के समीप मानो यह सदैव परम्परागतों का एक सिद्धान्त है, क्या अतिथि जन आते हैं, और वह अपना उपदेश दे करके चले जाते हैं। प्रायः हम प्रातःकालीन हम उस परमपिता परमात्मा का जब स्मरण करते हैं, तो उस समय हम प्राण

को अपना अतिथि स्वीकार करते हैं, और वह जो प्राण हमारें में गति कर रहा है, वह दसो रूप वाला प्राण कहलाता हैं, जिसके दस प्रकार के स्वरूप माने गएं हैं, जिस प्राण के आश्रित बेटा! यह ब्रह्माण्ड को मापा जाता हैं। ब्रह्माण्ड को मापने वाला कौन है? मेरे प्यारे! जो ब्रह्माण्ड का सूक्ष्मतम तन्तु हैं, और वह जो गति जो आत्म ब्रह्म छाया मेरे पुत्रों! देखो, उसे अपने में धारण करता रहता है।

तो विचार-विनिमय क्या मुनिवरों! देखो, वह मनस्तव माना गया है, तो विचार क्या मुनिवरों! देखो, यह दस रूपों वाला जो यह प्राण सखा है, हमारा अतिथि यह जो प्राण है, यही तो मुनिवरों! देखो, ब्रह्माण्ड का हमें दर्शन कराता हैं, हमें मौलिकता के सूत्र में ले जाता है, यही वाक् मेरे प्यारे! देखो, मुझे वह वाक् स्मरण हमें आता रहता है जिस काल में ऋषि-मुनि अपने में ओत-प्रोत हो करके अपने में विद्यमान हो करके ऊँची-ऊँची उड़ाने और कल्पना करते रहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, उसी के सम्दर्भ में आज हम जब अपनी कल्पना और अपने विचारों में तत्पर हो जाते हैं। तो हमें ऐसा प्रतीत होता है कि हम ऐसे मौलिक जगत में विद्यमान है, जिस मौलिक जगत में ज्ञान और विज्ञान में अपनी महानता में देखो, खिलवाड़ कर रहा हैं। अपनी महानता में मानो देखो, वह नृत्त कर रहा है।

तो मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार आज हम विचार-विनिमय करते हुए मैं महर्षि भारद्वाज मुनि के चर्चा प्रगट करने आया हूँ, मेरे प्यारे! महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज अपनें में मानो देखो, विश्वविद्यालयों में उनका गमन होता रहता था, विज्ञान की धाराओं में वह सदैव रत्त रहते थे। तो मेरे प्यारे! देखो, जब सर्वत्रता में सबका उपदेश समाप्त हो गया, तो भारद्वाज मुनि से यह प्रश्न किया गया कि महाराज! आज आप अपना कुछ उपदेश दीजिए, जिससे मानो यह ब्रह्मचारीजन अपने ब्रह्म वर्चों को ऊँचा बना सके, और ब्रह्मवर्चोसि बन करके अपने जीवन को दूहने वाले हों, जैसे गौ का स्वामी मानो गो को दूहने वाला है, जैसे योगी जन अपनी गो इन्द्रिय देखो, गो रूपी इन्द्रियों को अपने में दूहने लगता हैं मानो अपने में धारण करा देता है। तो मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार आप भगवन! कोई उपदेश दीजिए। जिससे आपके विचारों और आपके वाक्यों का अमृत पान करते हुए मानो देखो, उस आभा में हम सब परिणत हो जाएं, और राष्ट्र को ऊँचा बनाने के लिए समाज को मानो देखो, ब्रह्मवर्चोसी की आवश्यकता रहती है। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज मानो अपने उपदेशामृतों का पान कराने लगे। उन्होंने कहा यह जो हम मानो जिस विश्वविद्यालय में हम विद्यमान हैं, इसी विश्वविद्यालय में राजा रावण इत्यादि सभी ने शिक्षा को ग्रहण किया था, महाराजा कुम्भकरण ने भी मानो शिक्षा का अनुपान किया है और महात्मा पुलस्त ऋषि महाराज भी इसी विद्यालय में मानो देखो, अध्ययन करते रहे हैं। यह हमारा बड़ा सौभाग्य है, सभी आचार्यों ने ब्रह्मचारियों को यह उपदेश दिया कि अपने प्राणतव को जानना चाहिए। मानो देखो, जो प्राणतव को जानता है, वह ब्रह्मवर्चोसि का पालन करता हैं, मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचर्य जीवन एक ऐसा जीवन हैं, जो मानो देखो, जिसमें वह अध्ययन करता है, और एक अध्ययन में ही भिन्न-भिन्न प्रकार का अध्ययन करता है, वह कहीं योग में जाता है, कहीं अणु और परमाणुओं में रत्त होने लगता है, कहीं मानो देखो, राष्ट्र की उड़ाने उड़ने लगता है, और कहीं वह खनिज पदार्थों में प्रवेश कर जाता हैं, नाना प्रकार की उड़ाने उड़ता हुआ भिन्न-भिन्न प्रकार की उड़ाने उड़ता हुआ वह अपने में यह स्वीकार करने लगता है कि मानो एक उड़ानं ब्रहे मैं अपने को अपने में ऊँचा बनाने के लिए मैं तत्पर होने जा रहा हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, भारद्वाज मुनि ने कहा क्या तुम्हें प्राणायाम करना है, हे ब्रह्मचारी जनों! प्राणायाम करने के नाना प्रकार होते हैं एक प्राणायाम मानो देखो, खेचरी मुद्रा वाला प्राणायाम होता हैं, जो खेचरी मुद्रा में प्राण को अपना सखा बना लेता है। प्राण को अपना अतिथि बना लेता हैं, वह मानो देखो, महानता के लिए तत्पर हो जाता

हैं। एक प्राणायाम मानव का संकल्पोमयी होता हैं, संकल्पोमयी वह होता है, शान्त मुद्रा में विराजमान हो करके और मन को प्राण के प्राण सखा के निकट ले जा करके वह जो हमारी नासिका के दोनों जो स्वर है। उन स्वरों पर मुनिवरों! एक संकल्प बना करके मेरे प्यारे! देखो, दोनों का व्यवधान करता हैं, वह दोनों का अवरोध करता रहता हैं, तो विचार यह संकल्पोंमयी प्राणायाम होता हैं। मानो जिस समय बारह वर्ष इस प्रकार के संकल्पमोमयी प्राणायाम वाला अभ्यासी महापुरूष जब बन जाता है। तो मानो देखो, अपने अन्तःकरण में जो नाना जन्मों के चित्र और देखो, चित्रों का चित्रण हो रहा हैं, अपने चित्त के मण्डल में जन्म-जन्मान्तरों के संस्कारों को हम दृष्टिपात करते हैं। वह ऋषिजन मानो बारह वर्ष के अभ्यास करने से वह तन्मय होने से वह संस्कार उसके समीप आने प्रारम्भ हो जाते हैं। वह उसे जानने लगता है, वह उसे अपने में ही मानो चित्त के मण्डल में अपनी श्रुतियों को लगा करके अपने में उसको साकार रूप बनाता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, यह प्राणायाम इसको हम संकल्पोंमयी प्राणायाम कहा करते हैं, एक प्राणायाम हमारे यहाँ मानो देखो, आकाश गमन के लिए होता हैं, मानो अन्तरिक्ष में गमन करना चाहता हैं, जैसे एक वैज्ञानिक जन अपनी विज्ञानशाला में विद्यमान हो करके, वह नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करता है और निर्माण करता है, एक यन्त्र ऐसा निर्माणित करता है, जो सूर्य की ऊर्ज्वा से मानो देखो, यन्त्र गति करता है, और उसमें विराजमान हो करके वैज्ञानिक मानो देखो, सूर्य की परिक्रमा करने लगता है। इसी प्रकार जब मानो देखो, प्राण के प्राण रूपी ऊर्ज्वा को अपने में जानने लगता हैं रेचक और कुम्भक में परिणत हो जाता हैं। तो मानो देखो, वह गमन करने लगता है, वह अपने आकार हृदयशेष में प्रवेश करता हुआ मुनिवरों! देखो, प्राण के वाचो रूपों को जान करके मेरे प्यारे! देखो, अपने में अपने अभ्यस्त होता हुआ मुनिवरों! देखो, उन दीर्घता का वह दर्शन करता हैं। जिसका वह अपने में मानो अभ्यासी बनने के लिए तत्पर होने जा रहा था।

तो विचार क्या मुनिवरों! देखो, वह अन्तरिक्ष में गमन करने वाले यह प्राणायाम कहलाते है। जो अपने मुनिवरों! देखो, प्राण को अपान में, अपान को व्यान में, और व्यान को समान में, और समान को उदान में, जब इनका पंचीकरण करने लगते हैं और एकोकी धारा में जब वह परिणत हो जाता है, और अपने हृदय शेष में इनको अपने में ध्यानावस्थित हो जाता हैं। तो बेटा! देखो, अन्तरिक्ष में वह गमन करने के लिए तत्पर हो जाता है, आज मैं प्राण विद्या में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूँ, तुम्हें स्मरण होगा पुत्रों! देखो, जिस समय राम और रावण का संग्राम हुआ अप्रतं ब्रह्मा वाचप्रहे लोकाम् मेरे प्यारे! महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा क्या जिस समय देखो, रेणकेतु ऋषि के द्वार पर स्वाति केतु ऋषि पंहुचे तो स्वाति केतु ऋषि महाराज ने अपने प्राणायाम के द्वारा अपने सर्वत्र प्राण को मानो देखो, वह वह पग देश में ले गएं, और वह पग मा देखो, किसी से भी वृत्तियाँ ने करने वाले बनें। तो परिणाम यह हुआ कि वह प्राण मुनिवरों! देखो, जहाँ तुम ले जाना चाहते हो वहीं मानो देखो, प्राण अपने में मुनिवरों! देखो, अपने स्वरूप को धारण कर लेता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, प्राण ऐसा विचित्र कहलाता हैं, मुनिवरों! देखो, वह अपने में गमन करता हुआ अन्तरिक्ष से मानो पृथ्वी पर आता हैं, प्राण के द्वारा मेरे प्यारे! देखो, प्राण के द्वारा ही महात्मा कुक्कुट मुनि महाराज के महापिता मानो देखो, एक समय वह दण्डक वनों में कुछ अभ्यास कर रहे थे, और अभ्यास करते हुए मुनिवरों वह एकान्त स्थली में विद्यमान हो करके अपने चित्त के मण्डल को दृष्टिपात करना चाहते थे। तो मेरे प्यारे! देखो, प्राण और अपान और व्यान में समावेश करके मेरे प्यारे! बारह-बाहर वर्षों के मुनिवरों! देखो, लगभग तीन अनुष्ठान किए और अनुष्ठानों में यह प्रवृति हुई कि वह अपने चित्त के मण्डल में मुनिवरों! देखो, जो करोड़ों-करोड़ों के जन्मों के जो संस्कार थे वह उनके देखो, समीप आने प्रारम्भ हो गएं।

तो मेरे प्यारे! विचार क्या आज मैं अपने विचारों को बहुत गम्भीरता में नही ले जाना चाहता हूँ यह अनुसन्धान और यह विचार का मानो देखो, एक विषय माना गया है आज मैं प्राण की चर्चा कर रहा था यह प्राण

मुनिवरों! देखो, अनुपम माना गया है, प्राण को जब योगीजन मेरे प्यारे! समाधिष्ट हो जाते हैं, और प्राण को लघु मस्तिष्क में ले जाते हैं, तो मुनिवरों! देखो, जितना यह ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात आ रहा हैं इसकी यह माला बनानी प्रारम्भ कर देता हैं, और इसकी माला को धारण करने लगता है। मेरे प्यारे! देखो, आधुनिक क्या परम्परागतों से ही, हमारे यहाँ कुछ ऐसा माना गया है मुनिवरों! देखो, प्राण और मन को दोनों को जब तुम ब्रह्मरन्ध्र में लघु मस्तिष्क में ले जाते हो, ब्रह्मरन्ध्र से ऊर्ध्वा भाग में मानो देखो, लघु मस्तिष्क में ले जाते हो, लघु मस्तिष्क से जब स्वेचा वाचु मस्तिष्क में ले जाते हो तो मेरे प्यारे! यह जो परमात्मा का एक अनूठा जगत है लोक-लोकान्तरों वाली जो धाराएं है, अथवा उस माला को अपने में वह धारण करने लगता है। वह माला को अपने मे मानों सूत्रों में सूत्रित हो जाता है, तो विचार-विनिमय क्या बेटा! वह जो माला को धारण करने वाला है वही तो एक अनुपम मानो देखो, चित्त के मण्डल को ले करके मन की धाराओं को ले जा करके बेटा! ब्रह्माण्ड का वह दर्शन करने लगता है। तो इसीलिए भारद्वाज मुनि ने कहा कि मैं अपने विद्यालय में विद्यमान हूँ, और विद्यालय मे मैं यही उद्गीत गाना चाहता हूँ हे ब्रह्मचारियों! तुम्हारा जो ब्रह्मचर्य व्रत है, वह मानो दो ही रूपों में रत्त रहने वाला है। आज यदि तुम अपने राष्ट्र और मानवता को ऊँचा बनाना चाहते हो और अपनी मानवीयता और विद्यालय को विद्यालय बनाना चाहते हो, तो तुम्हारा प्रातःकालीन सांयकालीन मानो देखो, प्रभु का स्मरण करते हुए, और अपने मानो ब्रह्मचरिष्यामि अपनी आभा को जानने वाले बनो, देखो, बिना प्रकृति के जाने हुए तुम ब्रह्मचारी नही बन सकते और प्रकृति को अपने में क्रियात्मक जब तक नही बनाओगे, जब तक ऊँचे नही बनोगे। मेरे प्यारे! देखो, यहाँ यह कहा गया, कि राजा का कर्तव्य है कि वह प्रातःकालीन मानो देखो, अपने आसन को त्यागने से पूर्व वह अपने में मानो देखो, प्राणायाम करने वाला हो, जिससे प्राण सत्ता प्राणायाम करने से मानव का जो मस्तिष्क है, मानव को जो लघु मस्तिष्क है, मानव की जो प्रवृत्तियां हैं, उनमें मुनिवरों! देखो, एक व्यापकवाद आ जाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, एक सर्वे वृत्तियाँ प्राप्त होने लगती हैं। प्राण ही मुनिवरों! देखो, मानव के मन को शक्तिशाली बनाता है। यह मन बड़ा विचित्र हैं, परन्तु मन को कहीं से कोई भी वस्तु अंकुर रूप में प्राप्त हो जाएं, उसे वह साकार रूप में बना देता हैं, और साकार रूप में बना करके वह मनस्तव की एक प्रवृत्तियां बन जाती हैं। तो मेरे प्यारे! विचार क्या मानव देखो, वही तो सखा है वही तो अपनी आभा में ले जाने वाला हैं, वही तो प्राणतव कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, जो इस प्राण सखा को मानो जानने लगता है, तो इस संसार सागर से वह पार हो जाता है।

तो मेरे प्यारे! हमारे यहाँ नाना प्रकार के इस प्रकार के राजा हुए है, मुनिवरों! देखो, भारद्वाज मुनि ने यह वर्णन कराया क्या एक समय मैं अयोध्या में गमन कर रहा था जब मैं अयोध्या में पंहुचा तो प्रातःकालीन भगवान राम, राम का जो क्रियाकलाप मानो रघु वंश में जो राजा हुए है, उनके वंशलजों की उनके क्रियाकलापों की जब चर्चाएं अथवा उनका क्रियाकलाप जब मुझे स्मरण आने लगता हैं, तो मैं अपने में गद-गद हो जाता हूँ। तो भारद्वाज मुनि ने कहा कि राम के यहाँ प्रातःकालीन वह प्राणायाम करते हैं, वह प्राण सखा को मानो अपने में अवरोध करते हैं, और अवरोध करते हुए वह ब्रह्मचरिष्यामि बन करके अपने में अपने में अपनेपन का भान करते रहते हैं। मानो देखो, इसी प्रकार वह प्रतिक्रिया तुम्हारे यहाँ प्रायः अपनानी चाहिएं। क्योंकि जिससे यह राष्ट्र यह समाज और ब्रह्मचर्य देखो, जो छात्र बल है यह ऊँचा बन जाएं जिस राजा के राष्ट्र में छात्र बल ऊँचा होता हैं। छात्र बल वैज्ञानिक होता है, छात्र बल ब्रह्मवर्चोसि होता है, छात्र बल जब कर्तव्य पारायण होता हैं। तो उस राजा के राष्ट्र में एक महानता की प्रतिभा जागरूक हो जाती हैं। मेरे पुत्रों! देखो, भारद्वाज मुनि महाराज ने अपना उपदेश दे करके यह कहा कि तुम प्रातःकालीन प्राणायाम करो, प्रातःकालीन क्या सांयकाल को भी प्राणायाम करो, क्योंकि इससे तुम्हारा मन वह प्रकृति के स्वरूपों को तुम्हारे समीप लाता रहे, क्योंकि मन ही तो संसार के स्वरूपों को

लाता हैं। जब इसके अंग संग यह प्राण विशुद्ध रूप से अतिथि बन करके मानो देखो, इसको प्रेरणा देता रहता हैं, प्रेरित बनाता रहता है, तभी तक मुनिवरों! देखो, यह मन, मन कहलाता है यह मनन करने लगता है, और जब यह मानो प्रकृति के अवरोधों में परिणत हो जाता है। तो यही मन मानो देखो, प्रकृति के स्वरूप की आभा को नष्ट करके और देखो, मानव की प्रकृति को नष्ट कर देता है। और उसका जो ब्रह्मवर्चोसि जीवन है मानव वह कहीं का कहीं चला जाता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, जब भारद्वाज मुनि ने यह कहा तो ब्रह्मचारियों ने कहा-प्रभु! धन्य है हे प्रभु! हम अपने यहाँ मानव देखो, अपने में अनुसन्धान करते हुए अपने मनस्तव प्राणतव को जानते हुए हम प्रभु विज्ञान के युग में प्रवेश करना चाहते हैं। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। तुम विज्ञान के युग में भी प्रवेश करो, परन्तु देखो, यह है कि अपने राष्ट्र अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाने के लिए देखो, छात्र बल बल शाली होना बहुत अनिवार्य है। यह बलिष्ठ होना चाहिए। जिससे मानो देखो, ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारणियां अपने मानवीयतव को ऊँचा बना सकें, और ब्रह्मज्ञान को प्राप्त करते हुए वह ब्रह्मवादी बन करके देखो, इस राष्ट्र को और मानवीय समाज को ऊँचा बना सकें। ऐसी मानो देखो, इस गृह की प्रवृत्ति राष्ट्र में होनी चाहिए। मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा क्या राजा के राष्ट्र में मानो देखो, अभी-अभी रघु वंश में कुछ समय हुआ है, एक वहाँ मानो देखो, सभा हुई है, जो महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज की अध्यक्षता में एक सभा हुई है, उन्होंने अपनी सभा में यह निर्णय दिया हैं, क्या राजा के राष्ट्र में पाण्डितव होना चाहिए, और पाण्डितव इस प्रकार का हो जिस पाण्डितव में मानो देखो, वास्तव में विवेक होना चाहिए। वेदों का पठन-पाठन होना चाहिए। वेदों के पठन-पाठन की जो एक अनुपम प्रतिक्रियाएं हैं, वह विद्यालयों में वह गृहों में वह प्रातःकालीन मानो होनी चाहिए, मानो देखो, जिससे मानो जितना विवेकी पुरूष होता हैं। जितने पाण्डितव मानो देखो, प्रवृत्ति वाला पुरूष होता है। उतना ही जन समूह ऊँचा बनता हैं। जन समूह में मानो देखो, ज्ञान और विवेक की प्रवृत्ति हुआ करती हैं। मेरे पुत्रों! देखो, यह वाक् महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने वर्णन किया भारद्वाज मुनि ने कहा है, क्या इसीलिए प्रत्येक राजा को चाहिए। क्या समय-समय पर बुद्धिमानों की गोष्ठियां हो करके और राष्ट्र में विवेकी पुरूषों की आधीन रहना चाहिए। जिससे जितना भी विवेक होता है, उतना कर्तव्यवाद होता हैं, और जितना भी कर्तव्यवाद होता है, उतना ही जन समूह ऊँचा बनता रहता हैं, मेरे पुत्रों! देखो, राष्ट्र को चाहिए कि अहिंसा परमोधर्म को अपनाते हुए, अपने राष्ट्रीयतव और मानवीयतव को ऊँचा बनायें।

मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने चर्चाएं की, उन्होंने कहा कि हमारे यहाँ प्राण चिकित्सा का भी वर्णन आता है मैं प्राण की चर्चा कर रहा था हमारे यहां प्राण चिकित्सा का भी वर्णन आता है ऐसे-ऐसे वैद्यराज होने चाहिएं जिससे प्राण के माध्यम से ही देखो, रूग्णों का देखो, समाप्त हो जाना चाहिए। मेरे पुत्रों! देखो, यह वाक् महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने अपने वक्तव्यों में कहा, कि हमारे यहाँ विज्ञान इतना महानता पर होना चाहिए जिससे हम लोक-लोकान्तरों की उड़ाने उड़ सके और लोक-लोकान्तरों में हमारा यातायात होना चाहिए। हे ब्रह्मचारियों! यह ब्रह्मचारियों के माध्यम से ही प्रायः मानो देखो, उड़ाने उड़ सकते हैं तो मेरे पुत्रों! देखो, यह वाक् उन्होंने जब उद्गीत रूप में गाया, तो विचार-विनिमय क्या हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, मेरे प्यारे! देखो, अपने में योगेश्वर बनते हुए यौगिक प्रवृत्तियों को ऊँचा बना करके ही, हम संसार को ऊँचा बना सकते हैं। मेरे प्यारे! देखो, हम विज्ञान का सदुपयोग करने वाले बनें, क्योंकि विज्ञान का जब सदुपयोग होता हैं, तो यह प्राण की रक्षा होती है। और प्राण और मन का दोनों का समावेश हो करके कर्तव्यवाद में मानव परिणत हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, मुझे वह काल स्मरण आता रहता हैं जिस काल में मेरे पुत्रों! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के यहाँ नाना प्रकार की गोष्ठियां होती रहती थी। एक समय भगवान राम लक्ष्मण शत्रुघ्न मानो देखो, भरत इत्यादि सब ब्रह्मचारी और भी ऋषि-मुनि मानो देखो, विराजमान रहते थे, उनके यहाँ गोष्ठियां होती, चाहे अयोध्या को कैसे ऊँचा

बनाएं जाएं और त्याग कैसे अवरोध में लाया जाएं, क्योंकि जितना मानव में त्याग होता हैं त्याग से समाज ऊँचा बनता है, त्याग से राष्ट्र बनता है, त्यागी पुरुष ही ऊर्ध्ववेत्ता देखो, यौगिकता में परिणत हो सकता है। मेरे पुत्रों! देखो, उन्होने यह वाक् बारम्बार प्रगट कराते रहते थे। क्या राष्ट्र तो मानव के ही लिए अनिवार्य नही हैं, क्योंकि राष्ट्र तो उनके लिए होता है, जो कर्तव्य से विहिन हो जाते हैं। मानो देखो, राष्ट्र उनके लिए होता हैं, जो कर्तव्य का पालन नही करते हैं, मानो देखो, समय-समय पर विद्या का अध्ययन न करना विद्या से अपने को दूरी ले जाना पाण्डितव न रहना यह सब देखो, राष्ट्र के लिए होता है। मुनिवरों! देखो, राष्ट्र की आवश्यकता उन प्राणियों को नही रहा करती है, जो प्राणी विवेकी होते हैं, जो प्राणी पाण्डितव वादी होते हैं, जो वाणी से सत्य उद्घोष करने वाले हैं। जो मेरे प्यारे! देखो, अहिंसा परमोधर्म को अपनाने वाले हैं, वही उनका धर्म कहलाता है, बेटा! उस काल में अरे, राष्ट्र की भी आवश्यकता नही होती। राष्ट्र तो उस काल के लिए होता है, राष्ट्र वहाँ होता है, जहाँ मानव अपने कर्तव्य का पालन नही करता, आत्मा का जो विरोध करता है, अन्तरात्मा कुछ कह रहा है, बाह्य जगत उसका कुछ बना हुआ हैं, मेरे पुत्रों! देखो, राष्ट्र उनके लिए हुआ करता हैं।

आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा वाक् क्या कह रहा हैं, हम अपने में मानो देखो, प्राणतव को जानते हुए अपनी आभा में हम सदैव रत्त रहें। मुनिवरों! देखो, ऋषि-मुनियों का जो मन्तव्य रहा है, ऋषि-मुनियों ने यह कहा भारद्वाज मुनि ने यही कहा है कि विश्वविद्यालय में घोषणा करते हुए क्या तुम्हारा राष्ट्र और तुम्हारी मानवीयता और विवेकता ऊँची होनी चाहिए। जिससे मानव तुम्हारा आत्मतत्त्व एक महान बन करके प्रभु के राष्ट्र में जा करके तुम अपना खिलवाड़ कर सकते हो, क्योंकि वह खिलवाड़ परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में आत्म तत्त्व को जानने वाला ही मानो बेटा! देखो, भौतिक विज्ञान को अपने नीचे दबा करके लेता है, और भौतिक विज्ञान भी उसके लिए खिलवाड़ बन जाता है।

तो मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या हम आज हम उस परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए हम बेटा! इस संसार सागर से पार होना चाहते हैं मेरे प्यारे! देखो, हम विशुद्ध रूपों से यह अपने में स्वीकार कर लें कि हम प्राण को अपना अतिथि स्वीकार करके और विवेकी बन करके और अपनी राष्ट्र और समाज और मानवीयता को ऊँचा बनाने वाले हैं। मेरे प्यारे! देखो, हम याज्ञिक बनें, हम याज्ञिक कैसे बन सकते हैं? जब याग के कर्मकाण्ड में क्रियाकलापों मे मानव तत्पर हो जाता है। तो मुनिवरों! देखो, वह जो क्रियाकलाप है, वह मानव को याग में ले जाते हैं, जैसा मुनिवरों! देखो, भारद्वाज मुनि ने देखो, उस काल में राजा रावण के यहाँ एक याग किया था, और याग में उद्गीत गाते हुए उन्होंने कहा कि याग में एक अध्वर्यु होता है, और एक उद्गाता होता हैं, मानो देखो, पुरोहित जन ब्रह्मा इत्यादि विद्यमान हो करके वह पितरों का दर्शन करते हैं, इतने मानो देखो, वैज्ञानिक होने चाहिएं। वह अपने पितरों का दर्शन करने वाले हों, मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ऐसे हों जो मानो वायुमण्डल में जो सूक्ष्म शरीर वाली आत्मा हैं, मानो देखो, उनके विचार मानवीय हृदयों में मानो समावेश होने वाले हों, तो मुनिवरों! देखो, उस काल में विज्ञान अपने में सार्थक बना करता हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! मैं आज तुम्हें विशेष विवेचना देने नही आए हैं उन्होंने कहा है कि मुनिवरों! देखो, यह जो अध्वर्यु की भाषा है, अध्वर्यु किसे कहा जाता हैं, जो मुनिवरों! देखो, द्रव्य का स्वामी होता हैं, जो साकल्य का स्वामी होता है, उसे अध्वर्यु कहा जाता है। वह मानो देखो, अध्वर्यु बन करके वह यज्ञशाला में देवताओं की, देवताओं के भोज्य का वह अध्वर्यु बन करके मेरे प्यारे! देखो, जैसे अध्वर्यु नाम पृथ्वी को कहा गया है। मुनिवरों! देखो, पृथ्वी अध्वर्यु है, यह संसार के नाना प्रकार के साकल्यों को अपने में धारण करने वाली है, और यह मानो उन पदार्थों को उस साकल्य को मेरे प्यारे! देखो, अग्नि को प्रदान करती रहती हैं। वह अग्नि को प्रदान करके वही

मुनिवरों! देखो, वाणी जो उद्गाता उद्गीत गा रहा है, वही तो मुनिवरों! देखो, साकल्य पदार्थों को वेदमन्त्रों के द्वारा अपने में निगल जाता है, और निगल करके मुनिवरों! देखो, वही उद्गीत के रूप में वही उद्गीत गाने वाला वह मुनिवरों! देखो, उद्गाता वह अग्नि को समर्पित कर देता हैं और वह यह कहता है कि हे यज्ञमान! यज्ञ मेरे यज्ञमान की वाणी में पवित्रता आ जाएं। हे अग्नि! तू मानो शोषण करने वाली है, हे अग्नि! तू पापों का शोषण करने वाली है, हे अग्नि! ब्रह्म रूप बन करके वाणी के स्वरूप को धारण करने वाली है, हे अग्नि! तू ही तो मानो देखो, काष्ठों में रह करके तू साकल्य को अपने में धारण करने वाली है। मेरे पुत्रों! देखो, इसमें अग्नि के स्वरूपों का जब वर्णन करता हैं, आचार्य मानं ब्रहा मुनिवरों! देखो, वह याग एक महान बनता रहता है। बुद्धिमानों का याग उसे कहा जाता है जो अपने स्वरूप में, अपने स्वरूप का दर्शन करने लगता है। जैसे मानव मानवतव का दर्शन करता हैं, इसी प्रकार मेरे पुत्रों! आज का विचार हमारा क्या महर्षि भारद्वाज मुनि कहता है। यह पृथ्वी अध्वर्यु है, नाना प्रकार के साकल्यों को प्रदान करने वाली है, इसी अध्वर्यु के गर्भ में जब वैज्ञानिक प्रवेश होता है। इस अध्वर्यु के गर्भ में पंहुचता है, तो यह नाना प्रकार साकल्य प्रदान करता है। यह नाना प्रकार मानो देखो, रत्नों की आभा में इसे परिणत करा देता है। वह वैज्ञानिक जन अपने में विज्ञान को अपना सदन बना करके विज्ञान की तरंगों में रत्त होने लगता हैं। वही मानो देखो, पृथ्वी देखो, वसुन्धरा बन करके मानो नाना प्रकार की धाराओं में अपने में सर्वत्रता को बसाने लगती हैं।

तो मेरे प्यारे! विचार क्या हमारे यहाँ अध्वर्यु कौन है? मानो जो द्रव्य का स्वामीतव कहलाता है, इसीलिए पृथ्वी को हमारे यहाँ अध्वर्यु कहा गया हैं। हे अध्वर्यु! तू इस संसार को अपने में धारण करने वाला है, मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् भारद्वाज मुनि महाराज गम्भीरता के वाक् प्रगट करता हुआ कहता है, कि मेरे यज्ञमान और ब्रह्मा का मानो देखो, ऊर्ध्वातव में प्राप्त हो जाएं। मुनिवरों! देखो, उन्हीं की वाणी पवित्र बन जाती है। यज्ञमान कौन हैं? बेटा! यह आत्मा ही तो यज्ञमान हैं, आत्मा तो यज्ञमान बन करके बेटा! नाना प्रकार का मानो यह साकल्य आता रहता हैं, और यह आत्मा अपने में पवित्र बनता हुआ, यह शरीर को भी पवित्र बनाता है, यह प्रकृति के तन्तु मन को भी ऊँचा बनाना चाहता है। जिससे विवेकी बन करके हम प्रभु को प्राप्त हो जाएं। मेरे प्यारे! आज मैं विशेष विवेचना न देता हुआ मैं कोई बेटा! व्याख्यता नही हूँ, केवल परिचय देने के लिए चला आता हूँ, और वह परिचय क्या है? क्या हम उस देव की महिमा का गुणगान गाते हुए हम मानो देखो, प्राणतव को जानते हुए मनस्तव की धारा को जानते हुए मुनिवरों! देखो, हम सागर की प्रतिभा से ऊँचा बनते चले जाएं। बेटा! यह मन बड़ा विचित्र हैं, इस मन और प्राण की चर्चा तों मैं कल ही प्रगट करूंगा। आज का विचार तो केवल यह है कि हम मेरे प्यारे! देखो, राष्ट्र और समाज में जितने विवेकी पुरूष विशेष होते हैं, उतना राष्ट्र और समाज ऊँचा बनता हैं। मानव देखो, राजा के यहाँ विश्वविद्यालयों में याग होने चाहिएं। प्राणायाम होना चाहिए देखो, वह सर्वत्र विद्या को धारण करके क्षेत्रों में प्रवेश करते रहना चाहिए। राजा अपने में प्राणायाम करने वाला हो राजा मानो देखो, राष्ट्रीयता को यदि ऊँचा बनाना चाहता है। तो उसका मस्तिष्क, लघु मस्तिष्क, रेणा मस्तिष्क, सब मस्तिष्कों में आवागमन होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार अन्तरिक्ष में भी जैसे यन्त्र गमन करता है। अणु और परमाणु से सुगठित होता हुआ इसी प्रकार मानवीयता में भी यह क्या वह अपने में ऊँची उड़ान उड़ता हुआ इस सागर से पार हो जाएं। यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। कल बेटा! देखो, मन की चर्चाएं यह मन कैसा विचित्र है। यह चर्चाएं बेटा! हम कल प्रगट करेंगें। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन ओ३म् मा रथौ गताः आभ्यां देवं गा ताहं प्राची रताः आ पाहा ओ३म् श्वञ्जना ग्राहणां त्वा।

१० पञ्चीकरण ०८ १० १९८६

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि यह परमपिता परमात्मा के वसुन्धरा के रूप में प्रायः उसका वर्णन होता रहता है, और यह कहा है कि माता वसुन्धरा को हम रूप में विद्यमान रहती है। और परमपिता परमात्मा का नामोकरण मानो वसुन्धरा के रूप में वर्णन किया गया है। परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र और भी बहुत-सी ऊँची-ऊँची उड़ाने उड़ रहा था और मानव को भिन्न-भिन्न प्रकार का संकेत अथवा वह ज्ञान और विज्ञान से परिपक्व मानो देखो, महान जो उपदेश हैं। वह सदैव महानता के आँगन में निहित रहते हैं, प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन करता रहा हैं, और उसकी जो अनुपम महती है, उसी में बेटा! वह संसार अपने में प्रभु को स्वीकार करता रहता हैं। हमारे यहाँ साधना वालों ने अपने बहुत से विचार व्यक्त किए हैं, और साधना वालों ने कहा है क्या मानव जब साधना में तत्पर हो जाता हैं, मानो वह जो साधना है वही मानव को एक माधुर्य पगडण्डी का ग्रहण करा देता हैं तो प्रत्येक मानव बेटा! उस पगडण्डी में एक पगडण्डी के आँगन ब्रहे वर्णन उस पगडण्डी में गति करना चाहता हैं।

तो मुनिवरों! हमें एक महान पगडण्डी को अपनाना है, परम्परागतों से यह एक अनूठा, एक प्रत्येक आभा में नृत्त होता रहा है, क्या हम मानो देखो, उस पगडण्डी को ग्रहण करना चाहते हैं, जिस पगडण्डी में जाने से हम वास्तव में देखो, अपने जीवन को पंचीकरण के रूपों में दृष्टिपात करने वाले हैं। हमारे यहाँ पंचीकरण के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न प्रकार की धाराएं मानी गई हैं। मानो पंचीकरण हमारे यहाँ जो पंचधाराएं हैं, अथवा वह जो पंचतत्व माने गएं हैं, प्रकृति का जो सूक्ष्मतम तन्तु माना गया हैं, उसको हमारे यहाँ पंचीकरण कहा जाता हैं। वास्तव में यह वाक् प्रत्येक वृक्ष के जब समीप आयुर्वेदाचार्य इसके ऊपर अन्वेषण करना प्रारम्भ करते हैं। तो एक-एक वृक्ष में मानो पंचीकरण उसमें निर्णित होता हुआ दृष्टिपात आता हैं, तो मेरे प्यारे! हमें यह विचार-विनिमय करना है, क्या वह जो मानवीयता में जो पंचीकरण की वार्त्ता आती है, और पंचीकरण उसे कहते हैं जो पंच महाभूतो से निहित हो मेरे प्यारे! जो भी हमारा मानवीय यह शरीर है। इससे हमें पंचीकरण को जब जान लेते हैं, तो बेटा! हमे सोम की प्राप्ति होती हैं। वेद कहता है कि सोम की प्राप्ति होती है बेटा! सोम किसे कहते हैं? हमारे यहाँ आयुर्वेदाचार्यों ने तो भिन्न-भिन्न प्रकार की लताओं को भी मुनिवरों! देखो, सोम माना है। परन्तु देखो, वह जब पूर्णिमा का दिवस होता हैं, तो चन्द्रमा की नाना प्रकार की जो कान्तियां हैं, उनकी जब धाराएं प्रारम्भ होने लगती हैं, और मानव के आज्ञा चक्र से मानो उनका समन्वय होता है, तो वह सोम को पान करने वाला बेटा! सोमव्रत्ति कहलाता हैं। सोम रस के सम्बन्ध में बेटा! प्राण का निदान किया जाता हैं। यह जो प्राण जो सखा है इस शरीर में, अपनी गतियां कर रहा हैं, और वह प्राण मानो देखो, उसका, जब एक दूसरे में समावेश करते हुए प्राण सखा वह भी मुनिवरों! देखो, इस सोमरस की आभा में निहित कहा गया हैं।

तो विचार क्या मुनिवरों! देखो, सोमरस, प्रत्येक वृक्ष के मानो देखो, पंचांग में भी, मुनिवरों! देखो, पंचीकरण भासता रहता हैं। इसी प्रकार कोई भी, ऐसा मानो देखो, कोई वृक्ष नही हैं, जिसमें हम पंचीकरण को मैं अपने में धारण कर सकूं। मेरे प्यारे! देखो, वह जो पंचीकरण हैं, वही तो मानव को उद्बुद्ध करने वाला हैं, मेरे प्यारे! यह जो मन है, यह भी पंचीकरण कहलाता है। जब मानव ये प्रकृति के महान रूपों में रत्त होने लगता हैं, तो मुनिवरों!

देखो, यह प्राणं ब्रह्मा, यह जो मन है यह प्रकृति का सूक्ष्मतम तन्तु माना गया हैं। मेरे प्यारे! देखो, यही तो घृणा का मूल है, और यही घृणा को दूरी करने वाला हैं, यही घृणा को आश्रय देने वाला हैं, मेरे प्यारे! यही राष्ट्रवाद का निर्माण करने वाला हैं, मेरे पुत्रों! यह जो मन है, यह मन मानो देखो, जहाँ प्राण का अनुष्ठान मात्र हुआ और वह जो प्राण है वह आत्मा की छाया कहलाती हैं। जहाँ छाया का मन से समन्वय हुआ, तो मुनिवरों! देखो, अनन्तमयी ज्योति जागरूक हो जाती है। मेरे पुत्रों! जब मैं इस वाक् के ऊपर हम विचारने लगते हैं, तो प्रायः ऐसा दृष्टिपात आता है कि वह मन और प्राण के सन्निधान मात्र से अपने क्रियाकलापों में यह लगा रहता है। मेरे पुत्रों! वहीं तक वर्णन नही किया गया हैं मुनिवरों! देखो, यज्ञशाला में जब ब्रह्मा यज्ञमान को सम्बोधित करता हैं, तो जीवन में पंचीकरण होना चाहिए, पंचीकरण का अभिप्रायः पांच यज्ञ माने गएं हैं मानो देखो, ब्रह्मयाग है ब्रह्मयाग में ब्रह्म का चिन्तन करना हैं और ब्रह्म के चिन्तन करने के पश्चात वह देवपूजा में आरूढ़ हो जाता हैं, बेटा! देवपूजा किसे कहते हैं? मैंने पूजा के सम्बन्ध तुम्हें बहुत-सी आख्यिकाएं वर्णन की हैं, परन्तु जब न्यौदा में मन्त्रों के गर्भ में प्रवेश करने लगते हैं। तो मुनिवरों! देखो, वह जो प्रहा कृतं ब्रह्म लोकां मेरे प्यारे! मानो वह जो पंचीकरण की वृत्तियाँ आती है, तो वह उस देव याग में भी विद्यमान हैं। मेरे प्यारे! देवताओं का जब याग होता हैं, देवताओं का जो युग मेरे प्यारे! वह अग्नि से स्वीकार किया गया हैं। तो सर्वत्र देवता ये अग्नि के आश्रित रहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, पुरोहित जन क्या आचार्य जब अपनी यज्ञशाला में विद्यमान होता हैं। तो वह ब्रह्मा बन करके, मानो अग्न्याध्यान के लिए घोषणा करता हैं, अग्न्याध्यान किया जाएं, वह अग्नि मुनिवरों! देखो, देवताओं का मुख है। देखो, अग्नि का अग्नि से समन्वय हो जाता है, क्योंकि अग्नि ही वाणी रूप है, और अग्नि ही जो यज्ञशाला में प्रदीप्त होने वाली है, वह भी अग्नि है। परन्तु दोनों प्रकार की अग्नियों का जब मुनिवरों! देखो, परस्पर जब समन्वय हो जाता है। तो मुनिवरों! देखो, वह मानव अपनी महानता को प्राप्त होने लगता हैं।

तो मेरे पुत्रों! देखो, वेद का ऋषि कहता हैं क्या हम देव पूजा करें। पूजा का अभिप्रायः यह है कि हम उसे यथोचित मानो उसका आदर होना चाहिए, उन क्रियाओं में हमें लग जाना है जैसे परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में, मानो यह पृथ्वी का निर्माण किया, और पृथ्वी में मेखला का निर्माण किया, जिस मेखला में मानो बेटा! जल भी का प्रोक्षण किया जाता हैं, वह जल मुनिवरों! देखो, अमृत हैं, वह उस जल की देखो, उस संसार रूपी यज्ञशाला का जो, मेरे प्यारे! विचारक हैं वह देखो, सर्वत्र मेखला के रूप में विद्यमान हैं मानो इसी प्रकार जब हम अपने बाह्य या दैनिक क्रियाकलापों में प्रवेश करते हैं, तो दैनिक क्रियाओं में भी, दैनिक मानो देखो, कर्मकाण्ड में भी बेटा! देखो, मेखला का सम्बन्ध है, क्योंकि मेखला कहते हैं, जहाँ जल की आभा प्राणवाचक होने लगती है। मेरे पुत्रों! देखो, वह अपने में जब ये विचारते हे कि वह हमारा पंचीकरण कहलाया जाता हैं, मेरे पूर्वजों ने, आचार्यों ने मुनिवरों! देखो, ऊर्ध्वा में कल्पना करते हुए, ऊर्ध्वा में गति कराते हुए, मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने वर्णन करते हुए कहा है, उन्होंने अपनी आख्यिका प्रगट करते हुए कहा हैं, क्या यह जो मानो देखो, हमारा जो पंचीकरण मानो पंच याग है देवयाग विशेष माना गया हैं, मानो कर्मकाण्ड की पद्धति में, ब्रह्मा आचार्यजन कहते हैं, आओ, हे यज्ञमान! तुम मानो जल का प्रोक्षण करो, जैसे परमपिता परमात्मा ने इस पृथ्वी के विष को उगलने, पृथ्वी के विष को सिंचन करने के लिए, अपने में मानो देखो, पृथ्वी से अपने में मानो देखो, जलों का सिंचन करता हैं, और वह पृथ्वी के विष को अपने में धारण कर लेता है। मेरे प्यारे! देखो, वही तो मानो देखो, मेखला के रूप में विद्यमान हैं, वही जल है, वही आपो है, उस आपो की जो प्रतिभा है, वह मानो देखो, एक आभा में निहित हो रही हैं। मेरे पुत्रों! देखो, यज्ञमान, अपने या ब्रह्मा, पुरोहित को अपने यज्ञमान को उस स्थली पर ले जाता हैं, जहाँ मुनिवरों! देखो, वह आचमन करता हुआ कहता है कि मैं माता के गर्भस्थल में विद्यमान था, तो मानो देखो, मेरी तो आपो ने

ही तो रत्ना की हैं, माता को जानने की कौन रत्ना कर रहा है, वेद की आख्यिका कहती है, कि मानो देखो, वह आपो ही तो कहलाता है जो आपो बन करके रहता है, आपो ही ओढ़न बन करके रहता है, आपो ही मानो जो अपने रूपों में प्रगट होती रहती है। पांसे बन जाती हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, वह जो आपोमयी ज्योति है, उसका वह प्रोत्तण कर रहा हैं, परन्तु देखो, उसमें कितनी आभा निहित है। तो पूजा का अभिप्रायः यह है, क्या उसका हम सदुपयोग करें, जहाँ यज्ञशाला में यह ज्ञान कराया जाता हैं।

मुझे वह काल स्मरण आता रहता हैं जिस काल में बेटा! विश्वविद्यालयों में, आचार्य जन ब्रह्मचारियों को बेटा! देखो, यह कर्म काण्ड की प्रतिभा, मानो देखो, उन्हें स्मरण कराई जाती है। क्योंकि कर्मकाण्ड ही अपने में, एक मर्म कहलाता है, मानो देखो, वह याग की भूमिका कहलाती है, वह याग का एक उच्चतम मानो कर्म कहलाया जाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह अपने में तीन आचमन करके कहता है, मेरा ओढ़न, मेरा आसन, मानो सभी आपोमयी ज्योति कही जाती हैं। वह मेरा हृदय मानो उसमें संलग्न हो जाता हैं, मैं कितना विचित्र बनने जा रहा हूँ, तो मेरे पुत्रों! जब ऋषि ने अपने में वाक् अपने में वार्त्ता प्रगट कर रहा हैं, तो वह कहता है, क्या यज्ञमान को आचमन करा करके मानो देखो, वह वह दत्तिण और देखो, ऊर्ध्वा में गति करता हुआ, मुनिवरों! देखो, वह देवत्तव को प्राप्त होता हैं। मेरे प्यारे! देखो, स्वाहा कह रहा हैं वह अपने में स्वाहा कह रहा हैं क्या मेरी वाणी पवित्र हो जाएं, मेरे नेत्र पवित्र हो जाएं, मानो सर्वत्र को निष्ठावान और मानो संकल्पवादी बनाता हैं। जब संकल्पवादी बनाता है तो मुनिवरों! देखो, एक महानता का दर्शन होता हैं। मुझे एक वार्त्ता स्मरण आ रही है मानो देखो, यह जो याग का पंचीकरण है, पंच यज्ञों का जो हमारे यहाँ एक विधान है बड़ा विचित्र माना गया हैं। परन्तु आचर्यों ने और भी ऊँची-ऊँची कल्पनाएं की हैं, और वह कल्पना पूर्व काल में हमने वर्णन की हैं। मेरे प्यारे! देखो, जब यह हमारे यहाँ नाना ऋषि-मुनियों का एक समाज जब एकत्रित होता है, तो बेटा! ऋषि मुनियों का विचार उनका चिन्तन बड़ा गम्भीरता में मुद्रित हो जाता हैं। मेरे प्यारे! मुझे कुछ स्मरण आता रहता हैं, नाना ऋषि-मुनियों का एक समाज विद्यमान हैं, और उस सभा में परमाणुवाद की कुछ चर्चाएं की, मानो कुछ याग की चर्चा की, और मुनिवरों! कुछ मृत्यु की चर्चाएं की। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि वरतेन्तु अपने में एकान्त प्रश्नों का उत्तर देने लगें। उन्होंने कहा भई! मेरे विचार में तो यह आ रहा है, कि यह जो परमाणुवाद हैं, यह हमारे ऋषि-मुनियों से मस्तिष्कों से दो प्रकार से यह गति करता रहता हैं, एक गति ध्रुवा है, एक ऊर्ध्वा है। एक अन्तिम मानो शून्य बिन्दु पर है, और दूसरी शून्य बिन्दु को ले करके, मानो उसका प्रारम्भ होता है। जैसे मुनिवरों! देखो, बहुत पुरातन काल में हमने अपना वाक् निर्णय देते हुए कहा था वाक् उच्चारण करते हुए कहा क्या जब नाना ऋषि-मुनियां का एक मानो समूह विद्यमान हो गया, तो वहाँ जब परमाणु की चर्चा होने लगी तो उस चर्चा में मुनिवरों! देखो, ऋषि ने यह कहा क्या यह जो चन्द्रमा हैं, यह मानो देखो, यह अपने में भासता रहता हैं, यह अपने मानो प्रकाश देता रहता हैं, रात्रि अहिल्या को अपने में धारण करने वाला हैं। सहस्त्रों मानो देखो, कान्ति वाला बन करके, रात्रि अपने गर्भ में धारण कर लेता है। वह मानो देखो, कौन है, ऐसा मुनिवरों! जो धारण कर रहा है, अपने गर्भ में धारण कर रहा है, वह चन्द्रमा कहलाता है बेटा! जो रात्रि के वैभव को अपने में धारण कर लेता हैं, मुनिवरों! देखो, वह चन्द्रमा अमृत बहाता रहता है। अमृत को देता रहता है, वह मानो देखो, मुझे नाना वार्त्ताएं स्मरण आती रहती हैं। एक समय बेटा! ब्रह्मचारी कवन्धि ने अपने वाक्यों में यह कहा था वह एक समय मानो कुछ पुष्पांजलियों को वह पनपाने के लिए वह जल का प्रोत्तण कर रहे थे। जब जल का प्रोत्तण कर रहे थे, तो सुकेता ने कहा भगवन! क्या कर रहे हो? तब उन्होनें कहा मैं मानो देखो, वृत्त का सींचन कर रहा हूँ, उन्होंने कहा तुम वृत्त का क्यों सिंचन कर रहे हो? उन्होंने कहा कि मैं चन्द्रमा से मानो इसमें रस आयेगा अमृत बन करके मैं इस अमृत को दृष्टिपात करूंगा। मेरे प्यारे!

देखो, वह उस वृक्ष में तो पूर्व ही पंचीकरण था परन्तु जब मानव देखो, चन्द्रमा अपनी आभा में छटकने लगा अहिल्या को अपने में धारण करता हुआ तो मुनिवरों! देखो, वह उसे अमृतमयी बनाने लगा, उन्होंने वृक्ष को अमृतमयी बनाया, जब मानो देखो, कृषक उस गृह में पंहुचा, तो कृषक के यहाँ मुनिवरों! देखो, एक पौधा है, उस पौधे पर दो प्रकार का अन्न विद्यमान हैं, उस अन्न में मुनिवरों! देखो, चन्द्रमा अमृत दे रहा हैं, वह इस चन्द्रमा देता हुआ कहता है, यह तो अमृत है, तो मेरे प्यारे! वह अमृत वह अमृतं ब्रह्मा कृषक प्रसन्न हो रहा है। मेरी कृषि प्रियता में हो गई है, उपजने लगी हैं, उसको कौन-सा रस प्राप्त हुआ है, बेटा! वह चन्द्रमा का रस प्राप्त होने लगा, वही चन्द्रमा जब मैं अपनी माता के द्वार पर जाता हूँ।

एक समय मैंने देखो, महर्षि कागभुषुण्ड जी की माता से यह कहा कि क्या हे माता! जब महर्षि कागभुषुण्ड जी तुम्हारे गर्भस्थल में विद्यमान था, तो तुमने कौन से अमृत का पान किया? मेरे प्यारे! माता नही जानती थी परन्तु वह तपों में निहित रहती थी तपों में निष्ठावान रहती थी, उन्होंने कहा तप तो करती रही हूँ, परन्तु मैं ओत-प्रोत नही हुई हूँ, तो मेरे प्यारे! देखो, विचार आया वह जो चन्द्रमा का मानो सोम था, वह माता की रसना के निचले विभाग में बेटा! देखो, इसको परमपिता पिता परमात्मा मानो देखो, इसको प्रोक्षण के रूप में प्रोक्षण करने लगा। तो मेरे पुत्रों! हमें कुछ ऐसा स्मरण है, जब माता प्रहा माता नही जानती कि कौन अमृत दे रहा हैं? कौन-सी नाड़ी के द्वारा अमृत प्राप्त हो रहा है, जब मैं नाड़ी क्षेत्र में प्रवेश करता हूँ, तो माता निरूतर हो जाती है। मानो देखो, उसमें बेटा! पंचीकरण बेटा! एक नाड़ियों का होता हैं, रसना के निचले विभाग में चन्द्रकेतु नाम की नाड़ी है, चन्द्रकेतु नाम की नाड़ी का समन्वय मेरे पुत्रों! देखो, वह अस्सुतम ब्रह्मा मुखां मातां ब्रह्मे कृतं देवा रसना के निचले विभाग में वह नाड़ी है। उसी नाड़ी की एक धारा हैं, जिसको व्रेतकेतु नाड़ी कहा जाता हैं। उस नाड़ी का सम्बन्ध माता की पुरातत नाम की नाड़ी से होता है, पुरातत नाम की नाड़ी का समन्वय माता के रीढ़ से होता है। रीढ़ से पंचम नाड़ी बन करके चलती हैं, वह मानो नाभि केन्द्र में मानो देखो, लोरियों से ले करके नाभि केन्द्र में प्रवेश कर जाती है। तो मानो देखो, वह नाड़ी का समन्वय होता हैं, मानो देखो, वह पंचम नाड़ी कहलाती हैं। जिसको हमारे यहाँ पंचीकरण कहा जाता हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, यह जो चन्द्रमा है, यह पंचीकरण कहलाता है, परन्तु देखो, ऋषि-मुनि बड़े विचित्र होते हैं। उन्होंने कहा कि वही पंचीकरण समुद्रों में प्रवेश कर रहा है। चन्द्रमा का जो समन्वय हैं, जब पूर्णिमा आती हैं, पूर्णमा का दिवस होता है, तो यह चन्द्रमा अमृत को अपने में सिंचन कर लेता हैं। अमृत को अपने में ग्रहण कर लेता है, जब यह अमृतमयी बन जाता है, अमृत को प्राप्त कर लेता हैं। तो मेरे पुत्रों! देखो, मानव भी अमृतमय बनता हुआ समुद्रों में अन्तरिक्ष में जब मानो देखो, वही स्थिर हो जाता है। मानो जल का परमाणुवाद उसी समय मुनिवरों! देखो, सूर्य की पूजां ब्रहा मानो देखो, चन्द्रमा तो उसे स्थिर करने वाला हैं, वह धीमी-धीमी वृष्टि के रूप में बेटा! परिणत हो जाता हैं, अरे, वही तो अमृत है। जो नाना प्रकार के व्यंजनों को जन्म देता है, जो नाना प्रकार के खाद्य और खनिज पदार्थों को ऊँचा बनाता है। तो बेटा! देखो, विचार क्या चल रहा है विचार यह चल रहा था कि मानो यह जो चन्द्रमा हैं वह सोम की वृष्टि करने वाला है, जो उसे पान कर लेता है, मैंने तुम्हें कई काल मे वर्णन कराते हुए कहा था महात्मा अश्विनी कुमार जो राजा रावण के यहाँ वैद्यराज थे और अश्विनी कुमारों ने मानो देखो, जो उनकी माता थी श्वेधनि वह मुनिवरों! देखो, चन्द्रमा के पूर्णिमा के दिवस मानो चन्द्रमा को उनकी कान्तियों को अपने शरीर में सिंचन करती रही हैं, और उनके गर्भ से उत्पन्न होने वाले अश्विनी कुमार दो पुत्रों जन्म हुआ। उन अश्विनी कुमारों की चर्चाएं पुत्रों! मैंने कई काल में वर्णन की हैं, आज मैं मानो अश्विनी कुमारों के गर्भ में नही जाना चाहता हूँ। वह कितने वैद्यराज थे, उनकी कितनी आयुर्वेद में गति थी, यह चर्चा तो बेटा! हम पुरातन काल में करेंगें, आज का विचार तो केवल यह कि माता ने उसका निर्माण कर दिया

और उस पंचीकरण में मानो परिणत करते हुए कहा था एक आभा में जीवन को प्रदान कर दिया, तो मेरे पुत्रों! देखो, विचार क्या है, हमारा जो विचार चल रहा है, क्या हम अपने में पंचीकरण करते हुए मानो चन्द्रमा की धारा में रत्त हो जाएं। मेरे प्यारे! देखो, जब चन्द्रमा की धाराएं समाप्त होने लगीं, तो उन्होंने बेटा! देखो, लोकों का वर्णन करने लगे, और वह जो नाना प्रकार के तारा मण्डलों की एक माला है, और एक-एक माला का अपना-अपना महत्व है। बेटा! मेरे प्यारे! देखो, कोई तो वैज्ञानिक मानो देखो, पृथ्वी के मध्य में और कोई देखो, सूर्य के मध्य वाले मानो देखो, माला को धारण करता हैं। मेरे प्यारे! देखो, कोई यह कहता है कि नही सूर्य की माला को धारण कर लिया जाएं, मेरे पुत्रों! देखो, चन्द्रमा की जो प्रतिभा है, अथवा उसकी जो प्रतिष्ठा हैं, वह मुनिवरों! देखो, सूर्य में ओत-प्रोत हो जाती हैं। वह सूर्य मुनिवरों! देखो, एक माह है। मैंने कई काल में बेटा! तुम्हें सूर्य का वर्णन करते हुए कहा हैं, यह जो सूर्य यह महानता वाला हैं। मानो यह द्यौ से प्रकाश लेता है, यह मानो प्रत्येक प्राणी को ऊर्ज्वा देता है, नाना प्राणियों में वही तो ऊर्ज्वा को देने वाला है, मेरे पुत्रों! देखो, एक समय हमारे यहाँ राजा रावण की वैद्यराज थे, वह वैद्यराज एक समय भयंकर वनों में चले गएं, पर्वतों की कन्दराओं में चले गएं, तो मानो जब उन्हें एक औषध को दृष्टिपात किया, बेटा! वह प्रातःकाल से मानो उदय होना उसका प्रारम्भ होता था सांयकाल को को उसी औषध का क्षय हो जाता था। मध्य मानो देखो, मध्य दिवस में उसका पूर्ण हो जाना, और मध्य में से उसकी प्रतिभा मानो समाप्त हो जाना, मेरे प्यारे! देखो, वैद्यराज ने उसे दृष्टिपात किया सूर्य उदय होने पर उसकी प्रतिभा महान है। परन्तु सूर्य अस्त होने पर उसकी प्रतिभा ओर प्रकार की बन गई हैं। जिसका बेटा! देखो, निदान करना, यह अन्वेषण करना या विचार-विनिमय करना बेटा! एक महानता एक नृत्त कहलाता है।

तो आओ, मेरे प्यारे! यह जो सूर्य है, यह ऊर्ज्वा के देने वाला हैं, यह जो सूर्य है, यह प्रकाश में पंहुचाने वाला हैं, प्रत्येक मानव को प्रकाश में रत्त रहना हैं, प्रत्येक मानव को प्रकाश के मानो पुंज में पंहुचाना हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह सूर्य भासता रहता हैं, यह अमृत है, यह ब्रह्मचारी है, आदित्य है, यही ऊर्ज्वा का मानो देखो, पथिकतव माना गया है। मेरे प्यारे! देखो, यह याग को अपने जो गर्भ में धारण कर लेता हैं, याग को बेटा! देखो, यह अपने में धारण करके व्यंजनों को जन्म देता है, तो मुनिवरों! देखो, यह सूर्य, अपने में आभा वाला हैं, परन्तु जब यह भी समापन होने लगा, तो ऋषि ने अपने में यह विचारा कि मानो अब मैं मालाओं में जाना चाहता हूँ। वह जो मालाएं हैं जिस पर आचार्यजन, वैज्ञानिक जन मानो जिस माला को धारण करके, बेटा! अपने में, अपने को शून्य बिन्दु में ले जाते थे, बेटा! मैंने बहुत पुरातन काल में, निर्णय देते हुए कहा था, जब लोकों की गणना हुई, करने लगते हैं तो हम बेटा! मौन हो जाते हैं। ब्रह्माण्ड का वर्णन किया नही जाता, पूर्ण रूपेण परन्तु जितना भी अनुसन्धान किया है वह ऋषि-मुनियों ने बड़ा अद्वितीय किया हैं।

मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे यह वर्णन कराया क्या आधुनिक वर्तमान का जो विज्ञानवेत्ता हैं, वह मानो देखो, तेरह लाख पृथ्वियों को जान पाया परन्तु हमारे जब हम वेद के वांगमय में प्रवेश करते हैं, और लघु मस्तिष्क में ध्यानावस्थित होते हैं, तो बेटा! विचारा गया है कि तीस लाख पृथ्वियों तक मानव ने विज्ञानवेत्ताओं ने पृथ्वियो को जाना है बेटा! इसकी एक माला बनती हैं। उस काल को मानो भक्तजन प्रभु के जो महान पुजारी होते हैं, वह अपने में धारण करने लगते हैं। वह एक विचित्र माला बन करके मेरे पुत्रों! देखो, हम अपने में उसे धारण करने लगते हैं। मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में निर्णय देते हुए कहा था, क्या यह जो तारामण्डलों का एक समूह बना हुआ हैं, तारामण्डलों की जो प्रतिभा बनी हुई हैं मुनिवरों! वही तो एक महानता वाली एक ज्योति कहलाती है, जिस ज्योति का अनुभव करता हुआ मानव अपने में बेटा! देखो, ज्योतिवान बन जाता हैं, पवित्र बन जाता हैं, मेरे प्यारे! देखो, वह जो तारामण्डलों की माला हैं, ऐसे-ऐसे तारामण्डल प्रभु के राष्ट्र में हैं, जिसमें बेटा! एक सहस्र

सूर्य उसमें समाहित हो जाते हैं। बेटा! जब विचारा जाता हैं, क्या जब इस सीमा पर जाते हैं, तो विचार आता है शून्य बिन्दु पर गणना का क्षय हो जाता है।

तो विचार-विनिमय क्या यह पृथ्वी अपने में महानता वाली है, और इन पृथ्वियों की माला को सूर्य अपने में धारण करता है। मेरे प्यारे! यह सूर्य अपने में अपनेपन की आभा को प्राप्त होने लगता हैं, आओ, मेरे प्यारे! विचार क्या चल रहा हैं, विचार-विनिमय हमारा यह है, क्या हम मुनिवरों! देखो, अपनेपन में अपने आभा को दृष्टिपात करते रहें, तो यह जो नाना प्रकार के तारामण्डलों की माला है, एक माला नही, दो माला नही, मानो अनन्तमयी माला हैं। जिस माला में बेटा! देखो, एक-एक सौर मण्डल समाहित हो जाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह सौर मण्डल समाहित रहता हुआ आकाश गंगा को धारण करने वाला बेटा! शिव कहलाता है। जब हम शिव के द्वार पर जाते है, और विचारते हैं कि गंगाओ को कौन धारण कर रहा हैं, जिसमें मानो अरबों-खरबों मुनिवरों! देखो, जिसमे सौर मण्डल कहलाते हैं। जिसमें मानो देखो, वह अरबों-खरबों जो सौर मण्डल हैं, उन सौर मण्डलो में गति कराने वाला बेटा! कौन हैं? कौन धारण कर रहा है, अरे, वही तो शिव कहलाता हैं। वही तो मानो देखो, जो शिव है, जो मानो देखो, इस संसार को पिण्ड का आकार में पिण्डाकार में इस ब्रह्माण्ड को जो निर्माण करता हैं। जो मानो इसे अपने में धारण कर रहा है, मेरे पुत्रों! वह शिव कहलाता हैं, विचार क्या वह मुनिवरों! देखो, वे परमपिता परमात्मा एक महान अन्नतमयी कहलाते हैं, तो वह इस माला का अन्तिम जो मनका हैं, वह गन्धर्व कहा जाता है। और गन्धर्व से पूर्व मानो देखो, नाना मण्डलों की चर्चाएं होती रहती हैं। आज मैं उस विचारों में जाना नही चाहता हूँ, पुत्रों! क्योंकि यह तो विचारक वन है, लोक-लोकान्तरों का वन हैं, एक विशाल कहलाता है। आओ, मेरे पुत्रों! हम जाना नही चाहते हैं विचार कहाँ, विचारों का अन्त करना चाहते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि कहता है, कि यह गन्धर्व, अपने में कहीं प्रतिष्ठित होता हुआ, मेरे प्यारे! देखो, वह इन्द्र कहलाता है। हमारे यहाँ इन्द्र की विवेचना करने वालों ने, मानो इन्द्र नाम बेटा! उस परमपिता परमात्मा का, इन्द्र नाम राजा का, मेरे प्यारे! देखो, इन्द्र नाम सूर्य को, विद्युत को भी कहा जाता हैं। द्यौ को भी वह इन्द्र के रूप में परिणत किया गया है। उस राजा का नाम इन्द्र है, जो एक सौ एक अश्वमेध याग कर देता है और जिसका संसार में कोई भी मानो देखो, बहिष्कार न करने वाला हो, और सब उसका आदर करने वाले हों मेरे पुत्रों! देखो, वह इन्द्र कहलाता हैं। अश्वेमध याग का अभिप्रायः क्या है? हमने तुम्हें कई काल में वर्णन करते हुए कहा था कि अश्वमेधं याग उसे कहते जो मानो देखो, अश्व नाम राजा का, और प्रजा नाम देखो, मेध कहलाई जाती हैं और प्रजा मानो आज्ञा के अनुसार याग में परिणत हो जाएं, और वह मुनिवरों! देखो, राजा कहलाई जाती हैं। वह इन्द्र है, वह इन्द्रतव कहलाता हैं। मेरे प्यारे! एक नही नाना प्रकार की इसकी विवेचनाएं है, जिसे अपने विशुद्ध रूप में रत्त होती रहती हैं। मानो देखो, इसके गौ के रूप में वह इन्द्र हैं, वह सखा है, वह इन्द्र हमारा पालन करने वाला हैं। मेरे प्यारे! देखो, इन्द्रो भवा सम्ब्रह्मा इन्द्र एक लोक को भी कहा जाता है, जहाँ यह गन्धर्व समाहित होता है, मानो उसे भी इन्द्र कहते हैं, यहाँ इन्द्र का जो प्रकरण है, वह बड़ा विचित्र हैं, मेरे प्यारे! देखो, वह मन से इसका समन्वय रहता हैं। यह जो प्रकृति का सूक्ष्मतम तन्तु हैं इसका नाम भी इन्द्र कहा जाता है और वह मनस्तव के रूप में प्रगट होता रहता हैं। मेरे पुत्रों! देखो, यह जो मन है यही तो मानो सर्वत्र प्रकृति की आभा को अपने द्वारा लाता हैं, समाज को महान बनाता रहता है।

तो विचार-विनिमय क्या मुनिवरों! प्राण का सन्निधान मात्र मन के साथ होते ही, मन अपनी प्रकृति को जानने लगता है, उसके गर्भ में प्रवेश होने लगता हैं, कहीं भी उसे प्रकृति का तन्तु प्राप्त हो जाएं, वही मन अपनी आभा को ले करके उपस्थित हो जाता है। तो मेरे पुत्रों! देखो, विचार-विनिमय क्या ये हम विचार यह दे रहे थे क्या मुनिवरों! देखो, यह जो इन्द्र है यह इन्द्र हमारा सखा हैं, महान है, पवित्र है, देखो, हमें इन्द्र उपासना करनी हैं।

परन्तु देखो, इन्द्र है क्या? आत्मा का नाम इन्द्र है, अरे, जैसे इन्द्र आत्मा हैं, वही तो शरीर में भासता रहता हैं, जब तक इसमें इन्द्र हैं जब तक यह शरीर हैं, इन्द्र के विच्छेद होने से यह शरीर शून्य हो जाता हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, वह इन्द्र कहलाता हैं। विचार-विनिमय क्या, आगे वेद का वाक् कहता हैं, वेद की आख्यिका कहती है, क्या मुनिवरों! देखो, इन्द्र के आगे, जब गति करने लगे, तो प्रजापति का व्यवधान आया और यह कहता है कि प्रजापति ही मानो देखो, वह प्रजापति ही महान और वह प्रजापति ही याग कहलाता है, इस संसार की जो रचना हैं, संसार की जो रचना है, यही तो मानो देखो, यही तो मानो प्रजापति कहलाता है, माता के गर्भस्थल में एक बिन्दु का जब मानो वास होता हैं, तो बेटा! देखो, उसी बिन्दु से पूर्णता की प्राप्ति हो जाती है, वही तो प्रजापति की रचना है, वही तो प्रजापति कहलाता हैं। बेटा! जो मानो देखो, प्रजापति हमें हमारा कल्याण करता हैं, नाना प्रकार की वनस्पतियों के रसों का, जो मानो देखो, अन्तिम जो सार है, उसे प्रजापति कहते हैं। मेरे प्यारे! वही तो प्रजापति बन करके, इस संसार को निर्माणित कर रहा हैं, चाहे वह पृथ्वी मण्डल हो, चाहे वह चन्द्र मण्डल हो, चाहे वह कोई भी लोक-लोकन्तर क्यों न हो, चाहे समुद्रों के गर्भ में हो चाहे समुद्रों के ऊपरी तल पर हो, परन्तु वह सब अपने में प्रजापति क्रियाशील हो रहा है। वही तो प्रजापति है।

प्रजापति

जो एक समय बेटा! माता श्वेतकेतु से हमने एक समय कहा हे माता! प्रजापति कहाँ रहता है? तो माता ने उत्तर दिया, क्या प्रजापति वहाँ रहता है, जहाँ माता रहती हैं, वहीं प्रजापति रहता हैं। तो मानो देखो, वह उन्होंने कहा कि माता को हम प्रभु क्यों कहते हैं? उन्होंने कहा-प्रभु ही वह प्रजापति है, उन्होंने कहा माता को हम गऊ क्यों कहते हैं? उन्होंने कहा गऊ ही तो प्रजापति हैं। उन्होंने कहा कि हम माता को ब्रह्मणं ब्रह्मे देखो, विद्या को स्वीकार करते हैं, उन्होंने कहा विद्या को मन्थन करने के पश्चात मानो जो ज्ञान की उपलब्धि होती है वही प्रजापति हैं। मेरे पुत्रों! उन्होंने कहा कि प्रजापति जो हम योग को स्वीकार करते हैं, उन्होंने कहा योग के सन्निधान दोनों का मिलन होने से जिसकी प्राप्ति होती है, उसी का नाम प्रजापति हैं। मेरे पुत्रों! देखो, वह प्रजापति ही दृष्टिपात आने लगा मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने ज्ञान और विज्ञान हे ममत्वां ब्रह्मे हम तो तुम्हें माता स्वीकार करते हैं। उन्होंने कहा तो मेरे ही समक्ष प्रजापति विद्यमान रहता हैं, उन्होंने कहा हम यह मानो माता मानो देखो, कान्ति को कहते हैं, उन्होंने कहा जो ज्योति का आयतन हैं, अरे, वही तो प्रजापति है उन्होंने कहा हम तो प्रजापति याग को स्वीकार करते हैं। उन्होंने कहा याग में जो ब्रह्मा है मानो वही तो प्रजापति के स्वरूप में विद्यमान रहता हैं। मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया वार्त्ता प्रगट की तो माता ने निरूतर कर दिया। माता ने कहा हे माता! हम तो मोक्ष को प्रजापति कहते हैं, उन्होंने कहा जिससे भी मोक्ष होता है वही तो प्रजापति हैं। मेरे प्यारे! देखो, इसकी जब विवेचना करने लगे तो ऋषि अपने में शान्त हो गएं, मेरे प्यारे! देखो, प्रजापति को ले जा करके अपने देखो, याग में प्रतिष्ठित हो गएं, उन्होंने कहा क्या यह प्रजापति ही तो याग हैं। मेरे प्यारे! देखो, यह प्रजापति कहाँ पूर्णता में रहता हैं, उन्होंने कहा याग में रहता हैं, याग किसे कहते हैं। जितना भी संसार का सुकर्म है, मानव की अन्तरात्मा को अन्तर्हृदय से महानता प्राप्त होती हो चित्त प्रसन्न होता हो उस क्रिया का नाम मेरे प्यारे! देखो, वही तो याग कहलाता हैं। एक यज्ञमान बन करके अग्न्याध्यान में विद्यमान है। उनकी मानो धाराओं पर वह विज्ञान के वांगमय में प्रवेश करके संसार को दृष्टिपात कर रहा है, वह विज्ञान के युग में चला गया हैं। विज्ञान में युग में उसकी प्रतिष्ठा हो गई हैं। तो वही तो मानो देखो, वही तो याग कहलाता हैं। याग में परिक्रमा हो रही हैं, जल का सिंचन हो रहा हैं, मानो पति पत्नी अपनी अपनी इच्छा पूर्ति के लिए याग कर रहे हैं, मानो वही तो याग हैं। राजा अपनी प्रजा को ऊँचा बनाने के लिए निर्भयता के लिए याग कर रहा है, मानो देखो, वह प्रभु का स्मरण करता

हुआ जब याग करता हैं, तो वही तो याग कहलाता है। जो निर्भयता की प्रतिभा प्रदान करने वाला हैं, मेरे पुत्रों! देखो, जब उन्होंने कहा कि अग्नि की धाराओं मीं सर्वत्र यागों का क्रियाकलाप निहित रहता हैं। यही तो याग कहलाता है। मानो देखो, उस पर मौन हो गएं तो मुनिवरों! देखो, वह प्रसंग आया कि क्या दर्शनां ब्रह्मा वृतं देवाः उन्होंने कहा याग तो दक्षिणा के रूप में विद्यमान रहता है। मानो देखो, दक्षिणा का अभिप्रायः हमारे आचार्यों ने, दक्षिणा की बड़ी विचित्र मानो व्याख्या की हैं, उन्होंने कहा जिस याग में, जिस क्रियाकलाप में याग समाहित होता, हो अरे, वह याग है, या मानो दक्षिणा हैं। तो उन्होंने वर्णन किया क्या याग में दक्षिणा है, दक्षिणा में याग हैं, इसका अभिप्रायः यह है क्या हे यज्ञमान! पुरोहित कहता हैं, हे यज्ञमान! तेरे हृदय में जितनी दूरिता हैं, जितनी त्रुटियां हैं, काम, क्रोध, लोभ, मोह की जो त्रुटियां हैं, तू उसे मानो देखो, यज्ञ रूपी इस देव पूजा में तू उसे भरण कर दे, मानो उसको समर्पित कर दे, जब तू उसको समर्पित करने वाला बनेगा तो मानो देखो, दक्षिणा का पूर्णतव अधिकारी बन जाएगा। मेरे प्यारे! देखो, दक्षिणा की वार्त्ता आई दक्षिणा के लिए कहा कि मेरा दक्षिणा का अभिप्रायः केवल यही है, क्या यज्ञमान का हृदय सुगन्धियुक्त होता हुआ विचारों में महानता की ज्योति जागरूक होते हुए मानो देखो, वह जो दक्षिणा हैं, मुनिवरों! देखो, वही तो आचार्य का प्राण है, वही तो मुनिवरों! देखो, यज्ञमान की वेदी हैं, वही तो देखो, आचार्य का प्राण वही उसकी वेदी हैं, मेरे प्यारे! वेदी और प्राण दो नही हो सकते, दोनो एक ही सूत्र के मनके हैं। जैसे मन और प्राण मानो देखो, यह मन प्रकृति की छाया हैं, और प्राण शरीर में आत्मा की छाया हैं, इन दोनों का सन्निधान होना ही समन्वय होना ही मेरे प्यारे! देखो, इस शरीर में ओत-प्रोत होना है।

आओ, मेरे प्यारे! यह विशाल चर्चा मैं नही ले जा रहा हूँ, आगे वेद का आचार्य मनन करता हुआ कहता हैं, मननशील होता हुआ कह रहा हैं, क्या ब्रह्म ब्रहे लोकं ब्रह्मा वाचन्नमं ब्रह्मे कृतां मेरे प्यारे! देखो, आचार्य कहता है दक्षिणा से श्रद्धा का जन्म होता हैं मेरे प्यारे! देखो, दक्षिणामयी मानो देखो, श्रद्धामयी श्रद्धा किसे कहते हैं? श्रद्धा कहते हैं मेरे पुत्रों! देखो, जिससे अटूट समन्वय हो जाता है, जैसे मुनिवरों! देखो, सूर्य का चन्द्रमा का अपने में अकाटय समन्वय रहता हैं, पृथ्वी का जल का देखो, आकाश से उसका समन्वय रहता हैं। परमात्मा और भक्त का रहता हैं, जैसे पुत्र और पिता का होता है, वही समन्वय है मानो वह भी अकाटय है, जैसे पति पत्नी संसार के पश्चात अकाटय प्रवृत्ति में प्रवेश हो जाते हैं, तो मानो देखो, उसी का नाम श्रद्धा हैं। श्रद्धा का अभिप्रायः यह क्या श्रद्धा ही मेरे पुत्रों! देखो, जनमानस को जन्म देने वाली है। प्रजा ही मेरे प्यारे! देखो, जनमानस को महान और प्रतिभाशाली बना देती हैं। तो मेरे पुत्रों! देखो, श्रद्धामयी रहना चाहिए। मेरे पुत्रों! देखो, दक्षिणा श्रद्धा में, और श्रद्धा मेरे प्यारे! देखो, श्रद्धा कहाँ? श्रद्धा का वाक् कहाँ रहता हैं? मेरे प्यारे! श्रद्धा का वाक् ही मानो हृदय में रहता हैं, मेरे प्यारे! देखो, हृदय ही अगम्य हैं, हृदय ही ज्योति है, हृदय ही मेरे प्यारे! परमात्मा से मिलान कराता हैं। देखो, मन की जितनी धारा है, सब हृदय में समाहित हो जाती हैं। हृदय में अगम्यता में प्राप्त हो जाती हैं। तो मेरे प्यारे! विचार क्या है, मानव देखो, हृदय ही परमात्मा के समीप जाने वाला एक यन्त्र है सब क्रिया इसमें समाहित हो जाती हैं तो वह यन्त्र है उस यन्त्र में देखो, ऋषिजन धारण करके बेटा! परमात्मा के आनन्द के लिए गमन करता है वह मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कर लेता हैं। मेरे प्यारे! मैं कोई व्याख्याता नही हूँ, मैं कोई मानो विशेष विचार देने नही आया हूँ, केवल परिचय देने के लिए चला आता हूँ, और वह परिचय क्या है? हम मुनिवरों! देखो, उन मालाओं को अपने में धारण करें और मालाओं को जो धारण करता है वही बेटा! भक्त जन और मानवतव और मानवीय अपनी मानवीयता का वह दर्शन करता हैं।

तो आओ, मेरे प्यारे! मानवता का कौन दर्शन करता हैं, जो इन मनकों को एक माला के रूप में धारण

कर लेता हैं, मेरे पुत्रों! देखो, आज का विचार अब हमारा समाप्त होने जा रहा है। आज के विचारों का उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाते हुए आध्यात्मिकवाद में हम प्रवेश हो जाएं। आध्यात्मिकवादी बन करके हम परमात्मा के समीप चले जाएं, विज्ञान में रत्त हो जाएं, यह है बेटा! आज का वाक्, अब समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन ओ३म् देवाः आभ्यां रथं .....

११ पञ्चीकरण ११ १० १९८६

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता हैं वह मेरा देव महिमावादी हैं और वह अनन्तता में ही रमण करने वाला हैं उसका ब्रह्माण्ड अनन्तमयी माना गया। हे मानव! जब उसके सम्बन्ध में विचार-विनिमय करने लगता है। तो विचारता-विचारता वह गम्भीर मुद्रा में मुद्रित हो जाता हैं परन्तु उसकी जो महती अथवा अनन्तता हैं उसके जब अन्तिम छोर तक जा नही पाता तो वह मौन हो जाता है इसीलिए हमें उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाना चाहिए क्योंकि वह इतना अनन्तता को चाहने वाला है, वास्तव में वह उसका स्वामीतव करने वाला है हमें उस परमपिता परमात्मा की उपासना करनी चाहिए। जो कण-कण में ब्रह्माण्ड को रचने वाला है जैसा यह बाह्य जगत में ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात आ रहा हैं इसी प्रकार जब आन्तरिक जगत में अथवा सूक्ष्म जगत में हम प्रवेश होते हैं तो वहाँ भी उसी प्रकार अनन्तता में दृष्टिपात आने वाला है। उस अन्नतमयी ब्रह्माण्ड की रचना के ऊपर जब विचार-विनिमय करते हुए हम उसके गुणगान गाने के लिए तत्पर हो जाएं।

आज का हमारा वाक्य हमें अनन्तता में ले जा रहा हैं हमें उस महान याग में ले जा रहा है जिस याग की रचना परमपिता परमात्मा ने की है वह ब्रह्माण्ड अनन्तता में रत्त है और मानव उसके ऊपर कल्पना करता रहता है हम उस परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए अनन्तमयी रचना का जो मूलक है, उसकी हम उपासना करते चले जाएं। प्रत्येक वेदमन्त्र हमें एक न एक ऊँची प्रेरणा देता रहता है और हम प्रायः उस प्रेरणा के स्रोत बन जाते हैं उसी प्रेरणा को पा करके हम अपने में रत्त हो जाते हैं। आज मैं तुम्हें एक आख्यिका में ले जाना चाहता हूँ जो वाक्य हमने बहुत पुरातन काल में भी वर्णन किया हैं और हम करते ही रहते है।

मुनिवरों! आज मुझे वह काल स्मरण आ रहा हैं। जिस काल में महर्षि वैशम्पायन मुनि महाराज अपने में ऊँची-ऊँची विचार विनिमय करते रहते थे। एक समय महाराजा अश्वपति के याग में से अपने आश्रम में पधारे। रात्रि का जब काल हुआ, वह निद्रा की गोद में चले गये। तो एक वेदमन्त्र के ऊपर वह अपना विचार-विनिमय करने लगे। बेटा! वेदमन्त्र यह कह रहा था कि यह चित्र अन्तरिक्ष में गतियां करते रहते हैं। और रथ बन करके द्यौ लोक में प्रवेश होता रहता हैं, मैं उस द्यौ लोक वाले रथ को दृष्टिपात करना चाहता हूँ, इस चिन्तन मे रत्त रहते हुए उन्हें निन्द्रा आ गई। मध्यकालीन जब निद्रा जागरूक हो गई तो पुनः से वही वेदमन्त्र स्मरण आने लगे। इसके ऊपर विचार-विनिमय होने लगा, ऋषि अपने में कोई निमटारा नही कर पा सका।

प्रातःकाल हो गया, सूर्य उदय हो गया, ऋषि अपने आसन को नही त्याग रहा था, तो आँगन में रहने वाले जो ऋषि-मुनि थे, उन्होंने विचारा कि आज तो ऋषि अपने आसन को नही त्याग रहा हैं। उसके मूल में क्या है? महर्षि विभाण्डक मुनि और शौनक ऋषि ने जब जा करके कहा कि महाराज! आप निद्रा से क्यों नही जागरूक हो रहे हैं? तो उन्होंने कहा कि भगवन्! मैं इसीलिए आसन नहीं त्याग रहा हूँ कि (शब्द ध्वनि से) वेदमन्त्र मुझे स्मरण आ रहा है, वेदमन्त्र कहता है कि मानव को पंचीकरण वाला है, और मानव जब पंचीकरण वाला है, तो मानो देखो, पंचीकरण क्या है? मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि ने कहा कि पंचीकरण तो मानो पांच तत्त्वों के ऊपर विचार-विनिमय करने वाले को पंचीकरण वाला कहा जाता हैं। मेरे पुत्रों! उन्होंने कहा कि मैं इस प्रकार की व्याख्या करता रहता हूँ

पंचीकरण की क्या जो पांचो प्रकार के यागों में संलग्न होने वाला है जो पांच प्रकार के यागों में जो अपनी वृत्तियां को अर्पित कर देता है वह पंचीकरण वाला कहलाता हैं। तो क्या यह भगवन! यह जो पंचीकरण है यह पांच यज्ञ वाला है या पांच महाभूतों वाला हैं मेरे प्यारे! उन्होंने कहा कि यह जो पंचीकरण है यह महाभूतों वाला भी है, और यह पंचीकरण पंच यज्ञवाला भी हैं मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा कि यह कैसे माना जाएं? उन्होंने कहा कि जो पांच प्रकार के यागों में, अपने जीवन को अर्पित कर देता है जैसे ब्रह्मयाग है, देव याग है, देव याग के पश्चात देखो, वह अतिथि याग है, अतिथि याग के पश्चात देखो, वह बलिवैश्व यागों में लगा रहा है, बलिवैश्व याग का अभिप्रायः यह है, क्या मानो देखो, जितनी यह प्राणी, जो अन्तरिक्ष में गमन करने वाले हैं, मानो देखो, जो जलचर में गमन करने वाले प्राणी हैं उनके ऊपर जो विचार-विनिमय करता है अथवा इनको जो भोज्य देता हैं मानो देखो, वह भी एक याग करने वाला हैं मेरे प्यारे! देखो, बलिवैश्य देव याग का अभिप्रायः मुनिवरों! देखो, हमारे यहाँ, जो साम्यवाद की जो प्रवृत्ति का जो निकास होता है, मुनिवरों! देखो, वह बलिवैश्व यागों से होता हैं जहाँ मुनिवरों! देखो, सब प्राणियों का भाग, मानव को अधिकार है कि वह सबको प्राप्त कराता हैं वास्तव में जो ब्रह्मवर्चोसि है अथवा जो ब्रह्म है, वह संसार का नियन्ता है उसी प्रकार का भोज्य प्रदान करता है, जैसा वह प्राणी होता है। इसी प्रकार वह मानो देखो, वह ब्रह्मवत कहलाया जाता हैं तो मुनिवरों! देखो, बलि वैश्व याग वाला जब मुनिवरों! देखो, जलचरों को और आकाश में चरने वालों को दृष्टिपात करता हैं, मेरे प्यारे! देखो, वह कैसा सृष्टि का वह निर्माण करते हैं, वह मुनिवरों! देखो, एक पौधे के अन्न को उन्होंने एक पौधे के फल को पान किया, परन्तु वह पौधा, वह मुनिवरों! देखो, उसका जो अंकुर रूप हैं, वह उनके शरीरों में प्रवेश होता है, वह मुनिवरों! देखो, स्रोतों के द्वारा वह दूसरे स्थानो पर जाते हैं तो मानो नाना प्रकार की वनस्पतियों का जन्म होता रहता हैं। जैसे हमारे यहाँ पति और पत्नी का समन्वय होता है, वह भी अपने में समन्वय की प्रवृत्तियों को धारण करते रहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह एक स्थान से दूसरे स्थान पर मानो अंकुरों का जन्म होता रहता है। मुनिवरों! देखो, जो इस प्रवृत्ति को जानता है, वह मेरे प्यारे! देखो, मानो देखो, प्रभु के विज्ञान, प्रभु के राष्ट्र को अच्छी प्रकार जानने लगता हैं और साम्यवाद का, उसी से निर्माण होता हैं। विचार क्या हमारा याग यही तो कहता है? मानो सामूहिक प्रवृत्तियों में, अपनी प्रवृत्तियों में मुनिवरों! संलग्न हो जाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, वेदों का मन्त्र होता हैं, उस वेदमन्त्र को जब गान रूप में लाते हैं, तो गान गाता रहता है, और गान गाता हुआ मुनिवरों! देखो, वह अपने में साम्यता की कल्पना करता हैं। मुनिवरों! देखो, सब मानव एक सूत्र के ही तो मनके कहलाते हैं एक सूत्र मनके के प्रकार है जैसे मेरे प्यारे! देखो, एक मानव एक मानव का चरित्र मानव का आहार अशुद्ध हो जाता हैं तो वह संसार शुद्ध प्राणी संसार उस मानव की चर्चा करते हैं और वह कहते हैं इसका विनाश होने वाला है क्योंकि इसका अशुद्ध व्यवहार बन गया हैं इसका अशुद्ध आहार बन गया है। तो मुनिवरों! देखो, ऐसा क्यों कहते हैं प्राणी? मुनिवरों! इसके मूल में यह, कि हम सब प्राणी एक ही सूत्र के मनके हैं, और मनके होने से, सूत्र का यदि माला का एक मनका भ्रष्ट हो जाता है, तो उसको मुनिवरों! देखो, वह माला, अपने में देखो, मनका की उस मनके को स्वीकार नही करता हैं। क्योंकि उसका विच्छेद जब हो जाता हैं, और जो अनुपम माला के रूप में जैसे मनके को स्थापित किया जाता हैं। तो इसी प्रकार बनती है। इसी प्रकार हम सब प्राणी एक सूत्र के मनके हैं, हमारा आहार, व्यवहार इतना पवित्र रहना चाहिए, जिससे हमारी जो प्रभु की रचाई हुई, अनुपम जो प्रभु की माला हैं वह माला मानो एक सूत्र में पिरोई रहनी चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, जब मैं माला की चर्चा करता हूँ, तो मुझे यह संसार नवीन दृष्टिपात आने लगता हैं, बेटा! माला भी एक माला बेटा! मानव चरित्र में नही आती, नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों की भी माला बनती है। मैंने इससे पूर्व में माला का वर्णन किया था बेटा! जब देखो, महर्षियों के समाज में, ये चर्चा होती रहती है माला को

कौन धारण कर रहा है और कैसे यह माला बनती हैं?

तो मुनिवरों! देखो, महर्षि वैशम्पायन और मुनिवरों! देखो, महर्षि शौनक ऋषि महाराज का दोनों का परस्पर विचार-विनिमय होने लगा, विभाण्डक मुनि भी विचारने लगे, तो उन्होंने विचारते-विचारते यह कहा कि मानो जैसे मानवीय पंचीकरण कहलाता हैं। जो पंच यागों में लगा रहता है। परन्तु एक याग, एक पंचीकरण मानो पंच महाभूतों को कहा जाता है। जैसे बेटा! देखो, ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने भी और भी नाना ऋषियों ने अपने विचार दिए हैं, उन्हीं विचारो में बेटा! हम रत्त रहना चाहते हैं। वह विचार क्या है? उन्होंने एक विचार एक कि ब्रह्मे व्रते देवाः यह माला है, इस माला को हमें धारण करना हैं चाहे वह देखो, वह माला विज्ञान के रूप में हों, चाहे वही माला लोक-लोकान्तरों के रूप में हों, चाहे वही माला, मानो पंच महाभूतों के रूप में हों, मेरे प्यारे! यह कैसे अप्रतं ब्रह्मा जब प्रतिष्ठा की चर्चा आती हैं, तो मुनिवरों! नाना ऋषियों ने, अपने ऊँचे-ऊँचे विचार दिए, उन्होंने अपनी उड़ाने उड़ते हुए कहा है, क्या मानो सबसे प्रथम यह जो पृथ्वियाँ हैं मानो देखो, यह गुरूतव को धारण करने वाली हैं, जितना भी गुरूतव मनकों का, मनकों की माला हैं बेटा! इस माला को जान लेना चाहिए, जैसे पृथ्वी है उसमें गुरूतव होता हैं जहाँ गुरूतव होता है, वहाँ नाना प्रकार के पदार्थों का निर्माण होता हैं, मानो चाहे वह यह पृथ्वी हो, चाहे मंगल लोक हो, जहाँ भी पार्थिक तत्त्व प्रधान होगा, वहीं मानो देखो, रत्नों का निर्माण होगा वहीं नाना प्रकार के धातु पिपाद का निर्माण होता रहता है।

मेरे प्यारे! देखो, जहाँ आपोमयी ज्योति, जिस लोक में, जिस स्थली पर मानो प्रधानता में होती हैं, वहाँ जलचर मानो उसी प्रकार के खनिजों का निर्माण करते रहते हैं। तो मेरे प्यारे! यह तो बड़ा विचित्र, एक वन है, इस वन के आँगन में जाना नही चाहता हूँ। विचार केवल यह है कि मुनिवरों! देखो, यह है कि मानो अपने में उस महान मनके ऊपर विचार-विनिमय करना हैं जिससे मानो देखो, मनका है, जिसे आपोमयी ज्योति कहते हैं आपोमयी ज्योति बेटा! जल को कहा जाता है, यह मुनिवरों! देखो, जहाँ भी गुरूतव पूजा है उसी गुरूतव के साथ में आपो का जन्म हो गया हैं जब आपो का जन्म हुआ तो मुनिवरों! देखो, वही तो आपो बन करके माता के गर्भस्थल में जब बेटा! हम शिशु के रूप में मानो प्रवेश करते हैं और शिशु को अपने में धारण करने वाली माता, मेरे प्यारे! देखो, वह एक माला के रूप में, देखो, प्रगट होने लगते हैं। एक मुनिवरों! देखो, अस्सुतम है, मानो एक शिशु है, और शिशु अपनी उस माला को धारण कर लेता है, जिससे उसे एक न एक नवीनता की प्राप्ति होने लगती हैं। मेरे पुत्रों! देखो, माता से मैं प्रश्न करूं, तो उसे कोई उत्तर मुझे प्राप्त नही हो पाता। परन्तु जब वेदमन्त्रों के वांगमय में प्रवेश करते हैं तो उस समय यह प्रतीत होता है, कि वास्तव में वेद क्या कहता है? बेटा! मुझे ऐसा स्मरण हैं, वेद कहता है सम्भव ब्रहे व्यापं देवाः मानो देखो, वह शिशु रूपी जो सूत्र बन गया है, उस सूत्र में देवताजनों का वास हो गया हैं, और वह देवताजन कौन से हैं बेटा! मानो वह देवता से कहीं वह आपोमयी ज्योति कहलाती हैं, आपोमयी जो ज्योति है, वही तो ज्योति प्रदान करने वाली है। मेरे प्यारे! देखो, उसके अंग-संग देवताजन वास कर गएं हैं, और वह कौन मानो बेटा! इससे पूर्व काल में, मैंने प्रगट किया, क्या मुनिवरों! देखो, चन्द्रमा और सूर्य आपोमयी सर्वत्र उसमें ओत-प्रोत हो गएं हैं। मेरे पुत्रों! आपो ज्योति बन करके, जब यज्ञमान यज्ञशाला में विद्यमान होता हैं, तो वह मानो देखो, तीन आचमन करता है, और आचमन करता हुआ कहता है, हे अमृत! हे जल! हे आपो ज्योति! तू अमृत है, और तू अमृत को प्राप्त कराने वाला है। हे अमृत! मैं तुम्हें पान कर रहा हूँ। अब तू मेरा साथी बना हुआ है। तू तो मेरा जन्म-जन्मान्तरों का साथी बना हुआ हैं। परन्तु और भी नही वह कहता है कि जब मैं माता के गर्भस्थल में विद्यमान था, उस समय आपो ही तो मेरा साथी बना हुआ था, मानो देखो, जो ओढ़न बन करके मानो देखो, आपो का ही तो मैंने अपने में एक आसन बनाया, आपो का ही मैंने एक

ओढ़न बनाया, आपो से ही मैंने पांशे बनाएं, और मानो देखो, मैं उसमें पनप रहा था। हे अमृतमयी ज्योति तू ही तो तीन आभा वाला कहलाता हैं। तू ही मानो मुझे श्रद्धा देता रहता है तेरे ही द्वारा मैं मानो आपो ब्रह्मे मैं तेरे द्वारा ही मानो पूजन कर सकता हूँ मेरे पुत्रों! तू ही मेरा साथी हैं जब मानव मेरे से प्राण शक्ति जाने लगती हैं, प्राण शक्ति जाती है, तो आपोमयी तेरा पान करता हूँ तो यह प्राण शक्ति मेरे समीप आ करके मेरे से मेरा जीवन, जल जीवन वाला बन जाता हैं, मैं पवित्र बन जाता हूँ। तो मेरे प्यारे! देखो, यज्ञमान अपने में यह प्रार्थना करता हैं, और वह मंगलं ब्रह्मा मेरे पुत्रों! देखो, वह याग कहलाता है। हे यज्ञमान! तू अपनी यज्ञशाला में विराजमान हो करके तू सूत्र की कल्पना कर रहा है, जो सूत्र मानो देखो, माता के गर्भ में, महादेव ने मानो प्रदान कर दिया हैं। वह मानो देखो, वे परमपिता परमात्मा, जो देवताओं का भी महादेव कहलाता है। तो मेरे पुत्रों! देखो, जब वेद के मन्त्रों में यह निर्णय दिया, तो मुनिवरों! देखो, वैशम्पायन मुनि महाराज और अप्रतं ब्रह्मा मुनिवरों! ओर भी नाना ऋषियों के मध्य में यह चर्चाएं होने लगीं, महर्षि विभाण्डक और मुनिवरों! देखो, अप्रत ऋषि महाराज ने यह कहा कि-प्रभु! धन्य है आप और निर्णय दीजिए, उन्होंने कहा यह जो आपोमयी ज्योति कहलाती है, वही तो मानो शिशु के रूप में रहती है मानो देखो, यह जल अपने में महान पवित्र रहता है, जैसे यज्ञमान अग्नि का ध्यान करता है, अग्नि का चयन करता है, तो वह कहता है हे अग्नि देव! आओ, तू मुझे तेजोमयी प्रदान करो। मेरे तेजोमयी का प्रदान करता रहता है मुनिवरों! देखो, यह अग्नं ब्रह्मा वही तो मुनिवरों! देखो, अपनी तेजोमयी देने वाला है, वह अग्नि है जो नाना रूपां में रत्त रहने वाली अग्नि है, बेटा! आज अग्नि के द्वारा मानव, अपने गृह को स्वर्ग बना लेता है, इसी अग्नि के कारण राष्ट्र अपने राष्ट्र को ऊँचा बना लेता हैं इसी अग्नि के कारण वैज्ञानिक जन बेटा! विज्ञान के आभा में रत्त हो जाते हैं मेरे प्यारे! देखो, इसी अग्नि के कारण समुद्रों में जो अग्नि प्रदीप्त हो जाती हैं, उसको जानने लगता है। मेरे पुत्रों! इस प्रकार मुनिवरों! देखो, गृह, गृहस्वामी देखो, अग्नि से कैसे पवित्र बनाता हैं, जिस गृह में बेटा! नित्यप्रति याग होते हैं बाल्य बालिका उस याग को पान करके बेटा! देखो, स्वर्गमय बन जाते हैं वही अग्नि है मेरे पुत्रों! देखो, जो गृह को स्वर्ग बना देती है बाल्य बालिका उसी माता-पिता के आचरणों को करता हुआ अपने गृह को स्वर्ग बना लेता हैं न रूग्ण होता है न मानो देखो, कलह रहती हैं जिस गृह में कलह का वास बन जाता है वह गृह नारकिक बन जाता है और जिस गृह में मानो देखो, सात्विकता एक दूसरे में प्रसन्नता रहती है वही गृह मुनिवरों! देखो, स्वर्ग बन जाता हैं यह अग्नि है मानो देखो, यह अग्नि उस समय अग्नं ब्रह्मा वह अग्नि मेरे प्यारे! देखो, वह अग्न्याध्यान करता है उसे यह प्राप्त होती रहती है मुनिवरों! देखो, तृतीय अग्नि का नामोकरण देखो, बड़वानल नाम की अग्नि को जानने के लिए बेटा! एक समय देखो, महाराजा हनुमान और मुनिवरों! देखो, अप्रतं गणेश जी दोनों विद्यमान हो गएं मुनिवरों! देखो, महाराजा हनुमान जो बड़े वैज्ञानिक थे, इस अग्नि को जानने के लिए तत्पर होने जा रहे थे, महाराजा गणेश जी और वह दोनों एक स्थली पर विद्यमान हो करके, बड़वानल नाम की अग्नि का चयन करने लगे, यन्त्र लगे हुए है, और उस अग्नि को जानना चाहते हैं।

मेरे प्यारे! देखो, एक समय जब सूर्य की मानो ऐसी किरणें हुई और देखो, समुद्र में अग्नि प्रदीप्त हो गई, मेरे प्यारे! देखो, जल प्लावन आ गएं और जल प्लावन आ करके मुनिवरों! देखो, वह भंयकर अग्नि जब समुद्रों में प्रतिष्ठित हो जाती है, तो मुनिवरों! देखो, जल प्लावन आ जाते हैं, प्राणी नष्ट हो जाते हैं ये पृथ्वी जल मग्न हो जाती हैं परन्तु देखो, महाराजा हनुमान ने और मुनिवरों! देखो, महात्मा गणेश ने, दोनों ने अपने में चिन्तन करते हुए बेटा! बारह वर्ष तक इस प्रकार का अनुसन्धान किया और अणु और परमाणुओं को जान करके उन्होंने विचारा कि इस अग्नि को इस अग्नि पर कैसे अधिपथ्य कर सकते हैं? उन्होंने बेटा! देखो, अग्नि में अग्नि का ही चयन करते हुए दोनों ने कहा बड़े विशाल यन्त्रों का निर्माण किया, जब यन्त्रो का निर्माण किया तो एक यन्त्र का नाम वाचो व्रतं

अग्नियान कहलाया जाता था। मेरे पुत्रों! देखो, जिस समय, एक समय जब समुद्र में जल प्लावन का समय आया, तो वायु मण्डल ने यह निर्णय किया कि जल प्लावन आने वाला हैं, तो मुनिवरों! देखो, उन्हें देखो, यन्त्र को उस समुद्र में प्रवेश किया। तो मुनिवरों! देखो, वह बड़वानल नाम की अग्नि शान्त हो गई और शान्त हो करके मुनिवरों! देखो, वह समाज का जन जीवन ऊँचा बन गया तो बेटा! देखो, उन्होंने ऐसे यन्त्रों का निर्माण किया तो यह अग्नि कौन-सी हैं यह बड़वानल नाम की अग्नि कहलाती हैं। वैज्ञानिक जन अपने हृदय में विचार-विनिमय करते हैं, यन्त्रों का निर्माण कर सकते हैं मानो देखो, राजा, इस अग्नि का चयन करके, अपने राष्ट्र को कैसे ऊँचा बना सकता हैं। आज मैं तुम्हें ये उद्गीत गाने के लिए आया हूँ मेरे प्यारे! राजा इस अग्नि का मानो देखो, अग्नि का गीत गाता हुआ, राजा बेटा! देखो, अपनी सभाएं करता हैं, अपनी सभा करता हुआ, राजा अपनी प्रजा को कहता है, हे प्रजाओं! तुम सत्य उच्चारण करो, मानो मैं भी सत्यवादी बनूंगा, जब तक मैं सत्यवादी नही बनूंगा, तो प्रजा मेरी सत्यवादी नही बनेगी। तो वह इसी अग्नि को ले करके अश्वमेध याग करता है, अश्वमेध याग करता है, मानो देखो, उसका याग, वह होता रहता हैं, जिसको मुनिवरों! देखो, हम देखो, जिसको बलिवैश्व याग कहते हैं। बलिवैश्व याग की कल्पना, जब राजा के समीप आती हैं, क्या कोई प्राणी हमें हनन नही करना चाहिए, इतना अहिंसा परमोधर्म आ जाना चाहिए, राजा के राष्ट्र में, क्या एक दूसरा प्राणी, प्राणी का भक्षक न हो। मेरे प्यारे! देखो, वाणी से देखो, वाणी से हिंसा का प्रारम्भ होता हैं, जब राजा अपनी वाणी से उद्गीत यथार्थता के रूप में गाता है, तो मुनिवरों! देखो, वह प्रजा भी, उसी प्रकार यथार्थ उद्गीत गाने लगती हैं, और गाती हुई मुनिवरों! देखो, प्रजा महान बन जाती है। राजा अश्वमेध याग और बलि वैश्व याग करता हैं, जब बलि वैश्व याग करता है तो सबके भाग अन्न में से देता है, वह मानो देखो, कुकर को भी देता हैं, और वह जितने भी पक्षी गण हैं, जलचर हैं देखो, उन सबको वह प्रदान करता रहता हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, अग्नि का जब चयन करता हैं, अग्नि की आभाओं में रत्त होने लगता है, तो मेरे प्यारे! देखो, वह राजा अपनी प्रजा से कहता है, हे प्रजाओं! तुम मानो अपने क्रिया कलापों में परिणत होते हुए, तुम प्रत्येक गृह में और बलिवैश्व याग अवश्य किया करो, क्योंकि बलिवैश्व याग, अग्नि में प्रदान किया जाता है। अग्नि उसे मानो उसकी भावना के साथ, वह प्रदान करती रहती हैं, इसी प्रकार उन्होने कहा सम्भवा अग्नि के द्वारा राजा देखो, राजा के राष्ट्र में यही अग्नि वाणी का स्वरूप धारण कर लेती हैं, जब वाणी कटु हो जाती हैं, तो राजा के राष्ट्र में कटुता आ जाती है जब यह वाणी मधुर बन जाती है, तो यही वाणी राजा के राष्ट्र का उत्थान कर देती हैं।

मानो देखो, हमें स्मरण आता रहता हैं, बहुत-सा काल स्मरण है, बेटा! जब वाणी के कारण देखो यहां अग्नियां प्रदीप्त हो गई हैं। मुनिवरों! आज मैं उन वाक्यों में जाना नही चाहता हूँ, विचार तुम्हें यह देने के लिए आया हूँ, क्या मुनिवरों! देखो, आज हम, अपने में देखो, विवेकी बन करके, और वैज्ञानिक बन करके, अपनी आभा, उस आभा को विचारने लगें जो अपने से सम्बिन्धित आभा है, अपने से सम्बिन्धित मानो जो चिन्तनीय विषय है, उनको विचारते हुए अपने जीवन को ऊँचा बनाओ। राष्ट्रवेत्ता देखो, जब वह अग्नि का चयन करता हुआ, मुझे स्मरण आता रहता है, बेटा! भगवान राम का जीवन, भगवान राम ने तो यह घोषणाएं कर दी थीं, क्या मेरे राष्ट्र में प्रत्येक गृह में याग होना चाहिए, क्योंकि वह रघु वंश बड़ा विचित्र रहा था, राजा दिलीप ने भी यही घोषणा की थी, क्या मेरे राष्ट्र में देखो, याग होना चाहिए, जहाँ गृह गृह में याग होते हों, वहाँ मुनिवरों! देखो, वह राष्ट्र पवित्र बन जाता हैं। मेरे प्यारे! देखो, मेरे विचार में एक वाक् और आता रहा हैं, जहाँ याग होते हैं, प्रत्येक मानव अपने कर्तव्य का पालन करता है, वहाँ राष्ट्र केवल नाम मात्र रह जाता हैं राष्ट्र की कोई महत्तता नही होती है, राष्ट्र की महत्तता वहाँ होती हैं, जहाँ राष्ट्र अपने स्वार्थ में परिणत हो जाएं, और प्रजा के वैभव को संग्रह करने वाला बन जाएं, परन्तु

देखो, आताताायी मुख्य बन जाते हैं तो राष्ट्र की आवश्यकता बन गई हैं। परन्तु देखो, जब शासक, उनका शोषण करने लगता हैं, अपने ऐश्वर्य में परिणत हो जाता हैं, मृत्यु से मानो वह भयभीत हो जाता हैं, तो जानों की साधारण प्रजा में और राष्ट्र में राजा में अन्तर्द्वन्द्व नही हुआ करता हैं। तो मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या, आज हम बेटा! इन वाक्यों को विचारने वाले बनें, कि हमारा वेद क्या कहता है, वेद यही तो कहता है, क्या राष्ट्र को अश्वमेध याग करना चाहिए, अश्वमेध याग का अभिप्रायः यह कि जहाँ प्रजा और राजा मिल करके, दोनों मानो सुगन्धि करते हैं ब्राह्मण को ऊँची स्थली देते हैं, बुद्धिमान का आदर करते हैं, और बुद्धिमान उनके याग को करता हुआ, मानो देखो, अश्वमेध याग जब करता है, तो उसमें एक राज्याभिषेक होता है, उसमें एक राजा का पूजन हुआ करता है, और ब्राह्मण की स्थली को त्याग करके वहां मानो देखो, राजा को स्थली दे करके उसका ब्राह्मण उदघोष करता है ब्रह्माण नीची स्थली पर विराजमान होता है। उसके मूल में क्या है? उसके मूल में यह है कि शासक के मानो जो महान शासक होता हैं, अश्वमेध याग का रचयिता होता है, प्रजा का सुखद देने वाला है, कर्तव्य की भावना देने वाला है, जो चरित्र आभा में निहित लाने वाला हैं, अपने को ऊँचा बनाता है, और मुनिवरों! देखो, वह राष्ट्र के एक अंकुर को भी पान नही करता हैं। जैसे प्रजा मानो देखो, जैसे प्रजा का जो भी जिसका व्यवसाय हैं, वह क्रियाकलाप करता है, मानो अन्न इत्यादि का उपार्जन करता हैं, जैसे राजा पान करके राष्ट्र का कार्य करता है, इसी प्रकार जैसे प्रजा करती है।

तो मेरे प्यारे! देखो, वह जो राष्ट्र पवित्रता की आभा में रत्त हो जाता हैं मानो वही उद्घोष करके अपने अश्वमेध याग के द्वारा मेरे पुत्रों! अपनी प्रजा को महान बनाता है। तो यह क्या है यह अग्नि ही तो है, जिस अग्नि का ध्यान करता हुआ, मुनिवरों! देखो, वह आभा को रत्त कराता है मुझे देखो, अयोध्या की चर्चा करते हुए बहुत काल आता रहता है अयोध्या राष्ट्र में मुनिवरों! देखो, एक वर्ष में, देखो, दो याग अश्वमेध याग होते थे अश्वमेध दो याग होते हैं। तो अयोध्या बेटा! देखो, महान बनी रही, मानो अष्ट चक्रा नौ द्वारों वाली वह अयोध्या पुरी बनी रही, परन्तु देखो, जब अप्रतम ब्रह्मे जब राम के पश्चात, जब यह आगे काल आया, अयोध्या के अश्वमेध याग समाप्त हुए, नवीन काण्डों की उपलब्धियां होती रहीं। मैं उन काण्डों के उपलब्धियों में जाना नही चाहता हूँ। विचार यह कि मुनिवरों! क्या वह अग्नि उस अग्नि को चयन करने वाला ही राजा, अपने राष्ट्र को ऊँचा बना सकता हैं बेटा! मैं विशेष चर्चाओं में तुम्हं ले जाना नही चाहता हूँ। केवल विचार यह देने के लिए क्या अग्नि का चयन होना चाहिए अग्नि यज्ञशाला में प्रदीप्त होती हैं, अग्नि मानव के श्वासों से प्रदीप्त होती हैं, अग्नि ही जठराग्नि बन करके रहती हैं, अग्नि ही माता के गर्भस्थल में विद्यमान हो करके, बेटा! देखो, बालक को उष्ण बनाएं रहती है। मानो यह अग्नि ही तो है पुत्रों! तो मेरे पुत्रों! देखो, यह अग्नि का चयन करना चाहिए, अग्नि ही गार्हपथ्य अग्नि बनी हुई हैं, अग्नि ही मेरे प्यारे! देखो, आचार्य की वाणी से प्रदीप्त हो करके, ब्रह्मचारी को ऊँचा बनाती है। तो आओ, मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या, मैं विशेषता में ले जाना तुम्हें नही चाहता हूँ, विचार केवल यह, क्या इस अग्नि का चयन करना है, बेटा! अग्नि ही मानो देखो, अग्नि का जो दमन कर लेता हैं अग्नि को जो जान लेता है जो बेटा! वैज्ञानिक बन जाता हैं, वही मानो देखो, गृह स्वामी बन जाता है, और वही राष्ट्रवेत्ता बन जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, अग्नि ही अपने में अग्नि कहलाती है, यह अग्नि ही बेटा! देखो, जो योगियों की स्थलियों में रत्त होने वाली है, यही अग्नि है बेटा! जिसको योगी जन अपने में ग्रहण कर लेता है, योगी अपने आसन पर विद्यमान हैं, अग्नि का चयन कर रहा है, उस अग्नि के भावों को, उनकी तरंगों को जान रहा है, और योगी मानो देखो, उस अग्नि को जानता-जानता प्राण में अपने को ले जाता है प्राण को मुनिवरों! वह समेट लेता हैं प्राण को समेट करके वह कहता है यह अग्नि ही प्राणं ब्रह्मे यह अग्नि ही प्राण है यह अग्नि ही ऊर्ज्वा है मानो देखो, यह वायु की गति के रूप में परिणत हो

जाती हैं मेरे पुत्रों! देखो, वह अग्नि कितनी विचित्र है जो प्राण में परिवर्तित हो जाती है जो प्राण में ऊर्ज्वा में प्राण शक्ति सत्ता को प्रदान करने वाली है वही तो अग्नि विचित्रता में बेटा! हमें ले जाती हैं।

प्रभु दर्शन

आओ, मेरे प्यारे! देखो, एक यहाँ हमारे यहाँ पुरातन काल में नाना प्रकार में नाना प्रकार की अग्नियों का चयन करने वाले बुद्धिमान पुरूष हुए हैं, मुनिवरों! देखो, वह अग्नि कौन-सी है? जो प्राण रूपी अग्नि है मानो देखो, यह स्वरों में निहित रहने वाली हैं जो प्राण मेरे प्यारे! देखो, जो प्राणों को जान लेता है, वह संसार की प्रतिक्रिया को जान लेता है। मेरे प्यारे! देखो, पृथ्वी में प्राण बह रहा है, और नाना वनस्पतियों को रस प्रदान कर रहा हैं, सत्ता दे रहा है, वही मुनिवरों! देखो, प्राण, मानव के शरीर में विद्यमान हैं, योगी जन विचारता है, क्या इस शरीर में तो आत्मा की छाया का नाम प्राण है, और मुनिवरों! देखो, विचारवेत्ता, विचारता-विचारता निर्णय पर चला जाता है। क्या जो पृथ्वी में प्राण बह रहा है, जो प्राण वायु में गमन कर रहा है, जो प्राण मानो देखो, जो प्राण शब्दों के लिए गमन कर रहा हैं, वह प्राण विश्वभान होता हैं, विश्वभान प्राण मेरे प्यारे! देखो, वह प्रभु की छाया कहलाता हैं मेरे पुत्रों! देखो, अन्त में योगी योगाभ्यास करता हुआ वह आत्मा की छाया परमात्मा की छाया से जब व्यष्टि को समष्टि में प्रवेश कर देता है तो बेटा! वह योगेश्वर बन जाता हैं तो मेरे प्यारे! विचार-विनिमय क्या मैं विशेष चर्चा तुम्हें देने नही आया हूँ क्योंकि मैं इसका व्याख्याता इतना नही हूँ क्योंकि परिचय देने के लिए मैं आया हूँ, और परिचय क्या है कि हम इस अग्नि का अपने मे चयन करते चले जाएं यह अग्नि बेटा! देखो, योगियो से जब योगी इसको दमन कर लेता है अग्नि को मेरे प्यारे! प्राण सूत्र में अग्नि को पिरो देता है और मुनिवरों! देखो, प्राण को आत्मा में पिरो देता है तो बेटा! प्रभु का दर्शन हो जाता है।

तो आओ, मेरे प्यारे! आज मैं देखो, विशेष चर्चा न देता हुआ विचार केवल यह चल रहा है क्या मुनिवरों! देखो, इसी अग्नि का चयन करके वैज्ञानिक जन अपने यन्त्रवादी बन जाते हैं, इसी अग्नि का चयन करते हुए, मेरे प्यारे! महर्षि वैशम्पायन ऋषि महाराज जब इस प्रकार का निर्णय लेने लगे, तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि विभाण्डक मुनि बोले कि-प्रभु! आपने तो हमारे एक नवीन ब्रह्माण्ड को हमारे समीप नियुक्त कर दिया है, भगवन! आपके एक वाक् अधूरे पन में रह गया, क्या माता के गर्भस्थल में जो शिशु मानो जो विद्यमान होता है वह शिशु कौन-सी माला को धारण करता है? मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वैशम्पायन ऋषि ने कहा क्या वह उस माला को धारण करता है, जिससे देवता उसके समीप उसकी रक्षा करते रहे, मानो चन्द्रमा में से कान्ति को लेता है, और सूर्य में से ऊर्ज्वा को लेता है, और अग्नि में से उष्णता को लेता है आपो में से ज्योति को लेता है और आपोमयी ज्योति को ले करके अग्नि मे से और वायु में से प्राण सत्ता उसके समीप आती हैं, और प्राण सत्ता से अवकाश आता है, और इनकी सबकी शक्ति माला को शिशु माता के गर्भ में धारण कर लेता हैं। मेरे प्यारे! देखो, जब वह इन मनकों की माला को शिशु अपने में पिरो देता है, तो सर्वत्र ब्रह्माण्ड का चित्रण बेटा! उसके मस्तिष्क में लघु मस्तिष्क में रेणकेतु मस्तिष्क में मुनिवरों! मानव के तीन प्रकार के मस्तिष्क माने हैं, कहीं-कहीं वेदमन्त्रों में बेटा! पांच प्रकार के मस्तिष्क माने हैं इन मस्तिष्कों ही चर्चा तो मैं किसी काल में करूंगा जब मानो जब वेदमन्त्र इस प्रकार के आऐगें आज तो केवल मैं इतना उच्चारण कर रहा हूँ क्या यह बेटा! एक बड़ा गम्भीर विषय है जिसके ऊपर विचारना है कि इस माला को हमें धारण करना है यह धारण की जाती है इस माला को कोई भी यह नही कह सकता क्या मैं इस माला को धारण नही कर रहा हूँ प्रत्येक मानव कर रहा है परन्तु वह इस संसार के वैभव में आ करके मानो देखो, वह अपने अपने में ही कृति अन्धकार में अज्ञानता में आ करके उस माला का दमन कर देता है और वह माला दमन नही होनी चाहिए परन्तु वह दमन तो होती रही हैं क्योंकि मन उसे बारम्बार कहता रहता है कि

अरे, मानव तू जागरूक हो जा यह मन से प्रेरणा आती है जब नमन करने की प्रवृत्ति और अन्तरिक्ष में उड़ान उड़ने की प्रवृत्ति भी मन की द्वारा आती रहती है परन्तु देखो, आत्म प्रेरणा उसे बाध्य करती है आत्म प्रेरणा संकेत देती है तो प्रेरणा को स्वीकार करना चाहिए महर्षि वैशम्पायन मुनि बोले हे ऋषियों! यह तुमने जाना है उन्होंने कहा सत्यमयी प्रभु! मेरे प्यारे! महर्षि विभाण्डक बोले कि-प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं क्या हनुमान जी ने और गणेश जी ने जो आपने अभी-अभी वाक् कहा था वह समुद्र के तटों पर विद्यमान हो करके मानो कौन से मन्त्र का अध्ययन करते थे और मानो उन मन्त्रों में कौन-सी शक्ति ऊर्ज्वा प्रदान करते थे मेरे प्यारे! देखो, जब विभाण्डक मुनि ने यह प्रश्न किया तो महर्षि वैशम्पायन अमृतं ब्रह्म वाचो से देखो, मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वैशम्पायन ने कहा हे प्रभु! मानो देखो, हनुमान जी सूर्य विद्या के जानने वाले थे सूर्य विज्ञान को जितना भी सूर्य में ऊर्ज्वा है और जितनी वह जान सके उतनी वह जानते थे उसी अपने कण्ठ से उद्गीत गाते रहते थे मानो देखो, वह एक वेदमन्त्र को ले करके उपस्थित हुए और उसी के ऊपर उन्होंनें याग प्रारम्भ किया तो याग में मानो यह जो अग्नि सप्तजिह्वा कहलाती है यह जो सप्तजिह्वा वाली अग्नि है यह सात प्रकार की सूर्य की ऊर्ज्वामयी कान्ति होती है जो वह द्यौ से लेता है और द्यौ से ले करके जब सूर्य का काष्ठों से समन्वय होता है तो मानो देखो, उस अग्नि की उस समन्वय क्रिया को जानते हैं सूर्य की वह किरणे जो समिधा में उस जल को अपने में शोषण कर लेती हैं और शोषण करके और जल में से आपो की अग्नि को ग्रहण करके मानो देखो, मानो देखो, उस मानो जल का वह अपने में यन्त्रों में जल के परमाणुओं को अपने में भरण करना अग्नि के परमाणुओं की पुट लगाना मानो यन्त्रों का निर्माण करना जब भी जल प्लावन आया अग्नि को शान्त करने के लिए जो जल का मूलतव है उस मूलतव का गुरूतव का मिलान करके उन परमाणुओं का प्रहार किया जाता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, यह उन्होंने अपना निर्णय दिया निर्णय देते ही महर्षि वैशम्पायन अन्त में मौन हो गएं और यह विचारने लगे कि मैं और भी अनुसन्धान करूंगा तो मेरे प्यारे! आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए हम मानो देखो, हम अग्नि में पंचीकरण को जानते हुए हम संसार सागर से पार हो जाएं बेटा! यह चर्चा तो मैं मानो उसी आभा में प्रगट करूंगा, आज का विचार-विनिमय केवल इतना ही क्या अग्नि को जानने वाला आपोमयी ज्योति पृथ्वी गुरूतव मेरे पुत्रों! देखो, इनको जानने वाला योगेश्वर बन जाता हैं वैज्ञानिक बन जाता है और देखो, अपने को ऊँचा बाता हुआ इस संसार सागर से पार हो जाता हैं। तो आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा वाक् यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए हम इस संसार सागर से पार हो जाएं यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा ओ३म् देवाः आभ्यां रथं गायन्त्वा माह...